えょうし

श्रीः

स्वामी रामतीर्थजी जी

के

(हिन्दी-उद् श्रीर श्रुगरेज़ो के)

लेख व उपदेश (हिन्दी-भाषा में)

जिल्द तीसरो



प्रकाशक—

श्रीरामतीर्थ-पव्लिकेशन लीग

लखनऊ

दिसंदर] दितीपाइति

[१६३४

मृल्य

साधारक संस्करक १)

विरोप संस्करण ३३४-

शुम समानाग

यों तो शीरामतीर्यं पिलिकेशन लोगः लगन्यः, समय गार पर अधिकारी सक्तानी व धार्मिक पुरतकात्रयों की स्वाहित लगनी पुरतके तिना दाम प्राचा व्याचे हाम पर लॉन्ती ही वे किंतु धार्मिक सक्तानों को इस धम-कार्य में हाल तें अने का शुरु अवसर देने के लिए लोग ने यह तय (निरत्य) किया है वि जो सम्जन इस शुन उदेरय से स्थायों रूप से जितनो रजन कीं के पास जमा कर देंगे, लोग उसके ज्याज से जो अधिक है अधिक ॥) प्रति सेक्हा तक होगा प्रतिवर्ध उनके नाम है प्रत्वके बिना दाम लिए अधिकारा सम्जनों व सावजितक पुस्तकालयों को निरंतर वितरण करती रहेगों । व्याहा है दानी सम्जन प्रसन्नता-पूर्वक इस शुभ कार्य में योग देंगे अहि इस रीति से यश व पुरय दोनों के भागी होंगे।

> मंत्री श्रीरामतीर्थ-पञ्जिकेशन लीग लग्ननऊ

मुद्रक— पं० श्रीदुलारेलाल भार्गव ष्रप्यच गंगा-फ्राइनथार्ट-प्रेस, लखनऊ

श्रीरामतीर्घ-पन्तिकेशन लीग के प्रंथ

हिंदी में

। हुद्दा ल		
नं सम पुलक	माट संट, वि	दे० सं
६. बीरामतीर्थ-प्रयावली २= भाग में. पूरा सेट	20)	38)
फुटकर भाग	ħ)	ny
२. एक ग्रंपादली की संग्रोधित बाहृत्ति के पहले		
१= भाग, हे दिल्दों में । प्रति दिल्ह	1)	s IIJ
२. द्यादेस (राम बादसाह के १० हुक्सनामे)		IJ
४. राम-वर्ष भाग १-२	¹	sny
१. राम-पत्र (गुरुजी के नाम राम के पत्र)	り	şu)
६. बृहद् राम-बीवनी (उर्दू कृद्धियाते-राम, बिल्द २		
का घतुवाद), पृष्ठ ६७२	RIJ	¥
७. संदिप्त राम-दीवनी, पृष्ट ६४	IJ	_
 स. शीमद्रगवद्गीता, श्री० द्वार० प्त• नारादर स्व 	ामी -हत	
न्यान्या सहित, दो दिल्दों में, पृष्ट सगभग २०	(8 00	શુ
प्रति दिल्ल	ر ۶	ો
ऋग्सरको बाबा नगीनासिह बे दी-	চুন্	
६. वेदासुददन, पृष्ठ लगभग ४४० प्रथम छात्रुनि	511)	silly
हिनाय हार्युनि पष्ट-सराभग ७५०	R 11)	را
१०. द्वासमानास्त्रम् ३१ हमोत्। एए ५७२	ניי	ij
६६, पिसप्ता शक्यपुर-इपम श्रापात् सम्बत्सान		
दे विचित्र सहस्य एष्ट १०० <u>।</u>		11)
उर्द मे		
1. हरितयानेसाम जिला १ - विमाना प्रतिसार	~~	
वर्ष के ६२ अंद १. पृष्ट नगमगा-१०	5.10	÷
२. दुल्लियातेनाम जिल्हा २ , १८८ व स्वामा राम	* *	
सविलार जावनी 👈 पृष्ट लगभग 🗸 🧸	5.7	¥
३. राम वर्षा, दोन्हों भागः पृष्ट लगभग अस्य	ゝ	\$
		- 3

(4)		
संग्रह	स्तान है। ह	\$4 81×
४. सन्ते-सम (ग्रजी के नाम सम के प्रतः। एउ २०=	切	m
१. संचित्र जीवनी, प्रष्ठ लगमग ३३० 💎 👵	נווו	リ
ष्पात्मदर्शी बाबा नगीनासिंह वेदी-कृत		
६. नेदानुवचन, पृष्ठ लगभग ४२०	341	رو
७. मियारल भिकासका प्रष्ट लगभग १००	II)	2)
=. रिसाला थ्वाययुल-इनम, पृष्ठ नगभग १२०	1=)	niy
६. जगजीत-प्रज्ञ (ईशाबाम्योगनिपद् की शांकर		
भाष्यानुसार व्याच्या, पृष्ठ लगभग १०० स्त्रगरेजी में	1=)	m)
 स्वामी राम के समय ध्राँगरेज़ी उपदेश व लेला, 		
श्राठ जिल्दों में, पुरा मेट	رو	38)
मित जिल्द	1)	رڊ
२. पैरेवरस थाफ़ राम (उक्त उपदेशों में स्वामी सम		
से वर्णित समग्र कहानियाँ), पृष्ठ लगभग ४०	رڊ ه	3)
३. स्वामी राम की नोटबुरस, दो जिन्हों में	رَة	\$) \$)
प्रति जिल्द	111)	3)
४. सरदार पूर्णीमृह कृत न्दोर्ग ग्राॅक न्वामी सम		
हितीयाइति पृष्ट लगभग ३२४	~11 <i>)</i>	ر₃
१. पं० बजनायरागी कृत स्वामा राम का जायनी व		
डपदेशसार पृष्ठ लगमग =०० दो जिल्हों में प्रति जिल्ह	3.	() ا
	۱, ت	را
६. हार्र व्याक ाम	リ	
७. पोड्म्स आहर सम	゛ッ	ز :
म. संवित्त राम-बाबना सदिव गणित पर व्याल्यान	そ リ	
६. प्रेक्टोकल गीता (बार्यासायसम्बन्धाः)	(=)	
स्वामी राम के छुपै चित्र सिन्न-सिन्न आकृति	न न	
पति चित्र सात्रा ॥ तिरंगा चरा 🕳 छ'रा 🗸		
मैनेजरश्रीरामतीथ-पव्चिकेशन लीगः र	नवन क	

निवेदन

कुछ वर्ष हुए, स्वामी रामतीर्थ के लेखोपदेश की पहली जिल्द में हम यह सूचना दे चुके हैं कि राम की हिन्दी-प्रन्यावली के २= भाग ज्यों-ज्यों खतम होते जायँगे, त्यों-त्यों वे दूसरी आवृत्ति के समय वड़ी-बड़ी जिल्दों में विभक्त करके प्रकाशित किये जायँने । तद्वुसार प्रन्यावली के प्रथम ६ भाग (तीन-तीन भागों को एक-एक जिल्द में सन्मिलित करके) तीन जिल्हों में उत्तम आकार में रानै:-रानै: प्रकाशित किये गर्वे । प्रयम की दो जिल्हों के पूर्वार्क में स्वामी राम के अँगरेजी भाषा में दिये हुए उपदेशों की पहली व दूसरी जिल्ट के समन्र व्याख्यानों का हिन्दी छनुवाद दिया गया है। स्त्रीर उनके उनरार्द्ध में हुद्ध उर्दू उपदेशों का हिन्दी-अनुवाद भी दिया गया है। इनके अतिरिक्त प्रस्थावली के अ दर्भभाग (जिनमें समवर्ष का पहला व दुसरा भाग एकारित था । एक ज़िला में संपूर्ण समवर्षा के काम में प्रशासन अबे ता चुके हैं। इसत हमें यह लिसने प्रसन्नता हो रहा एक ध्रारोडी जिल्हा हीमरी के समग्र त्यार यानी व लेखा का भी हिंदी-ब्राह्मद इस इस्यावली के ब्राह्मेक भागों से तिकारकर एक हो जिल्हा में प्रकारित करने में सकल हार हैं। यदापे समा उन्ह ने इन्हाई है हुई हिन्ही है समान उन के कई एक नेप्यों व उपनेत्रों का जिन्हों-क्षतुकात भी विद्या राजा है। तथापि इसका उबाँचे की मोद्दा की तीसरी जिला का अतिहर होने से इस जिल्ह का नाम मी हिन्दी को तीमरी जिल्ला र अवा गया ^{है।} इस दिन्द् देखन्त्रन दनेन्द्र प्रायः प्रमादनो दे

विष्यः न्यूकी →ःः पूर्वाद्ध (पूर्ण-तितित) संनिप्त राम-जीवन-चरित

१

र—नित्य-जीवन का विधान			•••	च्.⊻
३-निरचल चित्त	***	•••	•••	६०
४ – दुःख में ईश्वर		•••	•••	न्8
४—(साधारण) वातचीत		•••	•••	११४
६- छपने घर छानन्द्मय कैरे	ते बना स	कते हैं ?	•••	१३४
७—गृहस्याधम श्रीर श्रात्मान	भव	•••	•••	१६७
मांस साने की वेदान्तिक	कल्पना		•••	१६५
६—में प्रकाश-स्वरूप हूँ	• •	•••	•••	२२्≒
१०—ञ्रात्मानुभव की महायता	नं ः १		•••	२४०
११—सोऽह्य		••		ခန္န
१२ - श्रात्मानभव-संद ग्री सके	त सं≎ २			5 5 C
ξ ξ —	नंः ः			= 55
१४ - उपदेश भाग				÷5.
हु-	नाइ			
१- ग्रेर मुन्दों वे तत्रहरे				-=-
- उतात का मार				: YS
३ – सुधार				232
फर्म				: 8:
४ राम-डपंदश				58E .
६—वानंलाप				

,			

भाग तीसरा

पूर्वार्द्ध स्वामी रामतीर्घजी

के

श्रॅगरेजी के लेख व उपदेश



श्रीपूर्णसिंहजी-लिखित स्वामी राम का

Section 1985

संचिप्त जीवन-चरित

(जो अंग्रेज़ी जिल्द दूसरी के आरंभ में भूमिका के रूप में दिया हुआ है)

"I cannot die, though for ever death

Weave back and fro in the warp of me, I was never born, yet my births of breath

Are as many as waves on the sleepless Sea."

"The body dissolved is cast to winds,

Well doth Infinity me enshrine.

All ears my ears, all eyes my eyes,

All hands my hands, all minds my minds, i swallowed up death all difference I drank up "
मृत्यु यहु बार भी बाना यने, ताना मम की निन्य ही।
हमें तथापि न मार सकती, बात यह है सत्य ही॥
जनम हमारा कभी हुन्ना नहिं, पुनि संख्या सांस-जनम की।
वैसे ही शास्त्रित है जैसे, शनिष्ट सिन्धु की नवहहरी॥
फेक दो मृत देह को पर कुछ बिग्छना क्या कभी।
हैं शनन्तता मन्दिर मेरी सान्त होती नहि कभी।
क्योंति है उस श्रीन को जो पुक्त नहा सकती कभी।
सब नेय मेरे नेय हैं, है कान भी मेरे सभी।
पिरंप में जितने हैं सन क्या एथंड हो सकते कभी।

यमराज से दरता नहीं में, काल मेरा आस है। बोक की बहुरूपता मम प्यास की नित आस है॥

श्रपने पूर्व आश्रम अर्थात् गृहस्थाश्रम में स्वामी रामतीय गोसाई तीर्थराम एम्० ए० के नाम से विख्यात थे। इनका जन्म पंजाव प्रान्त के गुजरान्वाला जिले के मुरालीवाला प्राम में दीपमालिका के दूसरे दिन सन् १८०३ ई० अर्थान् कात्तिक शुक्त १ संवत् १६३० में हुत्र्या था। गोसाइयों के वंश में उनका जन्म होने के कारण हिन्दी रामायण के सुप्रसिद्ध रचियता गोसाई तुलसीदासजी के वे वंशवर माने जाते थे 🛊 । ये कुछ ही दिनों के थे जब कि इनकी माता का देहान्त हो गया, श्रीर इनकी बड़ी वहिन तीर्थदेवी तथा इनकी वृद्धी फुफी धर्मकौर ने इन्हें पाला। च्योतिपियों की भविष्यवाणी थी कि यह विचित्र वालक अपने वंश में अलौकिक वृद्धिशाली पुरुप होगा। महाभारत और भागवत आदि पुराणों की कथा सुनने में इनका मन बहुत लगता था। सुनी हुई कथात्रों पर वालप्रौड़ मित से ये मनन किया करते थे, श्रीर जो शंकायें उठती थीं, उनका उचित समाधान करते थे। इनके गाँववाले इनकी असाधारण वृद्धि, मननशील स्वभाव और एकान्त प्रेम के साची हैं।ये वड़े तेज विद्यार्थी थे।एन्ट्रेंस (मैट्कि) से लगाकर ऊपर तक विश्वविद्यालय की परीचाओं में सदा ही इन्होंने ऋति उच स्थान प्राप्त किया। वी० ए० में ये प्रथम हुए। गिणत में तो विशेपतः प्रवीण थे, और इसी विपय में बहुत श्रिधिक नम्बरों से एम्० ए० उत्तीर्ण हुए। लाहौर फ़ोरमैन

^{*} अव वड़ी जाँच करने के बाद पना चला है कि जिन तुलतीदासजी के वंश से तीर्थरामजी थे, वह रामायण के रचयिता नहीं, किन्तु पंजाब प्रान्त के सुप्रसिद्ध योगी थे, जिनकी गदी सीमाप्रान्त में चित्राल के समीप सवात नगर में थी। पूरी जाँच पहले न होने के कारण तब भूल से वे रामायण के रचयिता समभकर लिखे गये।

किश्चियन कालेज में इसी विषय के अध्यापक नियुक्त हुए श्रीर दो वर्ष तक काम करते रहे । कुछ समय तक लाहोर ओरियंटल कालेज में भी रीडर का काम किया। अपने सब शिचकों के ये स्नेहपात्र थे और वे सदा इन पर वड़ी कृपा करते थे। सरकारी कालेज के प्रिन्सिपल (प्रधानाव्यापक) मि॰ डवल्यू॰ वैल इनकी विशेष योग्यताओं के कारण इन्हें खति श्रेष्ठ मानते थे और चाहते थे कि ये प्रान्तीय सिदिल सर्विस की परीज्ञा में वैठें। किन्तु गोसाई तीर्थराम की निज इच्छा गणितविद्या पड़ाने की थी: जिसका अध्ययन इन्होंने असीम परिश्रम से किया था। उन दिनों राजकीय हात्रवृत्ति लेकर (जिसके दे उस वर्ष अधिकारी थे) "इन्न रिवन" (Blue R bbon) प्राप्त करने की इच्छा से इन्होंने कैन्त्रिज जाने का भी विचार किया था। किन्तु एक "सीनियर रैंगलर" । Sen e Whateler ! मात्र होने की अपेज्ञा किसो उसरी ही लाइन में कहीं अधिक महापुरुष होना इनके भाग्य मे था इसन्तिये हाजबुनि एक मुसलमान युवक को मिल गई। छन्त जाहि १६०० में इन्होंने बनगमन किया र्खीर एक वर्ष के नातर ए गीलान ने लिया।

 कम था, उनका निवास सहा तहा में रहता था। कुछ भगहर ष्प्रमेरिका के छुछ मनोविद्यान-शास्त्रियों ने भविष्यवासी की थी कि स्वामी राम जंसा उन जा व्यासिमक विचारी में पूर्ण्ववा लीन श्रीर देहाच्यास को नितान्त भूला हुआ पुरुष को दिन-पति निरन्तर ग्रह्मभाव में निमन्न रहता है, इस देह-बन्धन में अधिक काल तक ठहर नहीं सकता। वे वस्तुतः अपने को भूल गरे थे अथवा देह-सम्बन्धीय स्मृति उनकी शायद बहुत ही थोड़ी रह गई थी। श्रपना शरीर राम के लिये उचतर जीवन का वाहनमात्र था, जैसा कि ईसा के शरीर के सम्बन्ध में उन्होंने कहा था। श्रमेरिका में राम ने कहा था कि "Lafe is but the flattering of the eagle's wings encaged in the body." "जीवन इस शरीर रूपी पिंजरे में बन्द पत्ती के पंखों की फड़[.] फड़ाहट मात्र है।" कोई भी राज्य उनकी मोहिनी आकृति का चित्र नहीं कींच सकता। उनकी दृष्टि श्रापका उनके प्रति सम्पूर्ण भीतरी मेम त्राकृष्ट कर लेती थी। उनका स्पर्शमात्र शुष्क इत्यों में भी कवियों की सी उमेंगें उत्पन्न कर देता था, खार मनुष्य के मन-गुद्धि को ब्रह्मानन्द की सुगंधित हरियाली से मुसज्जित कर देता था। सभी महात्मात्रों के जीवन का यही लत्त्रण रहा है। पाराणिकों ने श्रपने काव्यमय वर्णन में इसका मनोहर उल्लेख कैसा उत्तम किया है कि अमुक के आगमन से सूखे वृत्तों में नई पत्तियाँ श्रीर कलियाँ निकल आईं, श्रंगूरों के वाग हरे-भरे हो गये, श्रार सुखे सोते मानो हर्पीन्माद में स्फटिक जल की धारा वहाने लगे।

समुद्र-यात्रा में स्वामी राम को उनके अमेरिकन सहयात्रियों ने अमेरिकावासी समभा था। जापानी उनसे ऐसा स्नेह करते थे कि मानो ने उन्हीं के देश के हैं। जब ने उनके देश से अमेरिका को चल दिये थे, तब उनके अनेक परिचित जापानियों ने कहा था कि अब भी हमें अपने कमरों में उनकी विद्युत् मुसक्यान के दर्शन होते हैं। उनके ललाट की चमत्कारिए। विशुद्धता अव भी हमें अपने प्रिय फ़ुजीयामा हिम-शिखर की भाँति याद है। उनको भगवे वस्त्रधारी आकृति, जो वहाँ व्याख्यान दिया करती थी, जापानी चित्रकार को अग्निस्तम्भ प्रतीत हुई, जो श्रोताओं में शब्दों की नहीं, किन्तु जीवनस्फुलिङ्गों की वर्षा कर रही थी। कैलिकोर्निया में ब्रह्मज्ञान की मशाल व हिमालय पर्वत का बुद्धिमान् पुरुष कहकर उनका अभिनन्दन किया गया था, जिनके अनुभव के सामने सभ्यता के प्राचीन कम का उत्तर जाना छनिवार्य था। वे छमेरिका की सब रियासतों में धूमे और उतने ही व्याख्यान दिये जितने दिन कि वे कोलिम्बया में ठहरे। उन्होंने कहा—"में बनाने आया हूँ, विगाड़ने नहीं।" ईसाई गिरजों ने उन्होंने व्याख्यान दिये । उनके व्याख्यान वेंसे ही नवीन होते थे। जैसे व्याख्यानों के अपूर्व नाम । डेनर में बंड दिन की संध्या को उनके व्याख्यान का विषय था। । ४८० - ८० - १८० - ८० - ८० - ८० - ८० - ४४ ४ ४ ८ ४४ ८० - ८० - १७ स्थेक एस्स संय वर्ष का जिस है और अत्येक रात बहुँ इन की रात 🐪 🗥 अने स्कन ने उनके व्यारयानी का संज्ञात के करण (तस्त । यत साम कार क्षाप है —

्रि १ तुम स्थाती । भानश्रदाका अंग्रियरा (२) पार का लगतन वास्त कर त्या १००५वाश वा अनुभवा । अस्वकास । विश्व प्याप्त (७) हिष्टु-स्ट्राप्टवाद त्यार बरायका हारहार वा सम्भवेष । 😑 प्रेस व भक्ति द्वारा अवस्थान गर 💎 अवस्था व वेशस्त (१८) भारतः

क्षीर अमेरिका से उच्चे 🕒 अपने 🦠 🕥 का स्वय राम ने इस पकार विया र

(१) मन्द्र नच है।

(२) संसार जगकी महकारिता करने की वाल है। औ

सम्पूर्ण संवार से जपनी एक्ता जन्मन करता है।

(३) शरीर को नगीम में चौर मन को वेश तथा शास्त्रि में रागने का ही चर्च है यदी चर्चान उनी जीवन में पाप और हुएस से मुक्ति।

(४) संबंधे एकता (At one ment) प्रत्यन्त च्यनुभव से

हमें निरचल निरिचन्तना का जीवन प्राप होता है।

(४) सहल संसार के धर्मपन्ती की हमें तभी भाव से गहण करना चाहिये। जिस भाव से हम रसायनताम्य का व्यव्ययन करते हैं खीर अपने अनुभव की व्यक्तिम धुमाण भी मानते हैं।

दो यमं से भी कम में उन्होंने खमेरिका में किनना कार्य किया, खयमा जिन खमेरिकनों को उनका सेराम हत्या उन पर कैसे प्रभाव पड़े, इसका स्थिम्बर वर्णन में यहाँ नहीं कर सकता। किन्तु खमेरिका से भारत को लोटते समय विहाई की सभा में कुछ खमेरिकनों ने निम्मलियित जो कथिता पड़ी बी, उसे बिना उद्ध्य किये में नहीं रह सकता—

Like Golden Oriole neath the pines. Rama chants to us his blessed lines. Rich freighted with the Orient's lore, He spreads it on our western shore. A bird of passage on the wing, He brings a message from the King. And this his clear resounding call—All, all for God, and God for all! His message given he flits afar Like swiftly coursing meteor.

But leaves of heavenly fire a trace,
A new born love for all his race.
Adieu, Sweet Rama, thy radiant smile,
A Soul in Hades would beguile.
And though we may not meet again
Upon this changing earthly plain.
We know to thee all good must be
For thou art in God and God in thee.

सिन में मुस्ताना न रहेश है। व रहेश है है से था। वह समितिय में रहेश अमान अंगर के हैं व रहे हैं से साम कर पूसरे हिन समाजर के हैं कि उनके कि रहे हैं से कि के सिन दें हैं है के व रहे हैं है है है के स्वर्ध स्थान के स्वर्ध सोलान के स्वर्थाक है है है है के स्वर्ध के से हैं है है से से हैं है है है

श्रन्य सच्चे भारतीय तत्त्ववेत्ता के दर्शन मुक्ते त्र्याज तक नहीं हुए। ऐसा उनका प्रेम था। भारत लीटने पर मधुरा में उनके कुछ भक्तों ने एक नया समाज चलाने की प्रार्थना की थी। इस पर राम ने कोरा जवाब दिया और कहा कि भारत में जितनी सभायें काम कर रही हैं, वे सब मेरी ही हैं छोर में उनके द्वारा काम करूँगा। इस समय उन्होंने हुर्पान्मत्त होकर नेत्र मँद लिये, प्रेममय त्रालिंगन के चिह्नस्वरूप ग्रपने हाथ फैलाये, और अश्रुपात करते हुए नीचे लिखे शब्द कहे, जो उनके महान विश्वव्यापी प्रेम तथा महान् श्रात्मिक मीनता पर वड़ा प्रकाश डालते हैं:-- "ईसाई, हिन्द, पारसी, आर्यसमाजी, सिख, मुसलुमान श्रीर वे सभी जिनकी नसें, श्रिस्थियाँ, रक्त श्रीर मस्तिष्क की रचना मेरे प्रिय इष्टदेव भारत भूमि का अत्र और नमक खाकर हुई है, वे सव मेरे भाई हैं, नहीं नहीं, मेरे ही प्राण हैं। कह दो उनसे मैं उनका हूँ। मैं सबको आलिंगन करता हूँ। मैं किसी को परे नहीं करता। मैं प्रेम हूँ। प्रकाश की भाँति प्रेम प्रत्येक वस्तु को प्रकाश के चमत्कार से श्राच्छादित करता है। ठीक ठीक में प्रेम की कान्ति और प्रवाह के अतिरिक्त और क़ब नहीं हूँ। मैं सबसे समान प्रेम करता हूँ।"

And bathe the world in joy!

If any dare oppose, welcome! come!

For I shall shower oceans of love,

All societies are mine! mine welcome! come!

For I shall pour out floods of love.

Every force is mine, small or great, welcome! come!

O! I shall shower floods of love

Peace! Peace!"

"I shall shower oceans of love

घनघोर भेष घेरि के नगनमंडल. पड़े-पड़े पूँदन सों प्रेम परसावेंगे।

स बहाद के करि है प्रतिरोध कोऊ, पाँह धरि वाको वाही प्रेम में न्हवावेंगे॥ ार्ये बड़ी शौ भारत समुग्राय जेते. उन सो क्दापि नार्ही विलग बनावेंगे। केंचों हैं जीन स्वागत सभी को घाउ, धान्ति सुख प्रेम की बहिया बहाउँगे॥ राम विचित्र पुरुष थे। वे वर्तमान और भावी मानव-जाति को विश्वव्यापी एकता में हृद्य और चित्त से अपने को विलीन कर देना चाहते थे। जो खद्भुत अभेदता उनकी अंग्रेजी कविता में कुछ स्पष्ट हुई है। वह उनके इस लोकवात्रा के छल्पकाल का महान् कार्य है। पूर्ण आत्मानुभव की प्राप्ति-निमित्त उन्होंने दिन-रात प्रचल किया। जहाँ कहीं उनकी दृष्टि पड़ी, उन्हें सब कुछ ईश्वरमय दिखाई दिया। वे अनुभवी योगी थे। उनमें बृद्धि और भाव का अत्यन्त अनुशीलन मिश्रित रूप से था। राबी नदी के तट पर उनकी अनेक राजियाँ योगाभ्यास में बीती । अनेक रातों वे इतना रोये कि सबेरे विद्याने की चहर भीनी मिलती थी। कहा जाता है कि अपने पूर्वाश्रम में जब वे कहर बाह्यरा थे और उनका हदय प्रेस वा भांक के संस्कारों से परिपूर्ण था। उन दिनो सनातनधर-समाश्रों में भक्ति या कुष्ण पर स्वाल्यान देते समय उनके मुख ने जितने शस्द निकनते थे। सभी छ सुन्यों ने त्यवतर निकलते थे। अपनी इस आध्यारंसक इतात का आकर में वे बना बरते हैं। के अनेक बार जाय र इस है अने के हैं के कर है उदस साल दो का रोबात के सहक स नावंत पर का बन ने के गाँ जा का उसीन मी कारपारक प्राप्तन का *भागन का* भी नेरा ए के पना ३ ए ५० हरा शानिर ए जन ५ र एक्से-

त्रमा भाषापुर्वे स्टब्स्या है सा १००० होइन होत् ्वे जन्म से साहर्वे स्टब्स्या है सा १००० होइन होत् हीनता खर पान सर्वेदर प्रस्था । १००० हारा साहर्

पन के नियाय वह पर राजा साल राजा

A SELECTION OF THE SELE

कठोर तथा दुस्सह कायक्लेशों में वीता। यहाँ तक कि कभी कई-कई दिन तक लगातार उन्हें भोजन भी नसीव नहीं होता था। श्राहार की कमी के होते हुए भी वे त्रावी-श्राधी रात तक पड़ने में परिश्रम करते थे, और प्रायः गणित के प्रश्नों में ऐसे तन्मय हो जाते थे कि उन्हें घंटों का वीतना जान ही नहीं पड़ता था श्रीर सबेरा हो जाता था। ऐसा जान पड़ता है कि भविष्य में उन्हें जैसा जीवन व्यतीत करना था। वे जान-वृक्तकर उसके लिये अपने को तैयार कर रहे थे। अध्यापक होने के पूर्व ही श्रसीम स्वावलम्यन, जिसे वे वाद में निश्चल निश्चितता कहते थे, प्रोट विश्वास, कुछ गम्भोर निश्चय श्रौर महान् प्रए-शक्ति वे अपने में उत्पन्न कर चुके थे। चौर ऐसे ही उन्होंने गिएतशास्त्रीय मन का विकास भी अपने में कर लिया था कि जो श्रनुभवसिद्ध तथ्यों की मालूमात के लिखने में यथार्थ, अपनी तक-शैली (युक्ति) व विश्लेपण में ठीक और ऐसे ही परिणामों के निकालने में नितान्त स्पष्ट और असंदिग्य 👵 उतरता था। उन्हें पदार्थविज्ञान से प्रेम था ऋौर रसायन तथा वनस्पतिशास्त्र का शौक्र था। तत्त्वविज्ञानशास्त्र में विकासवाद उनका विरोप विषय था। उन्होंने समस्त पश्चिमीय छोर पूर्वीय दर्शन-शास्त्रों का अपने ढंग से पूरा-पूरा अन्ययन किया था। उन्होंने शंकर, कणाद, कपिल, गौतम, पतञ्जलि, जैमिनि, व्यास श्रीर कृष्ण के प्रन्थों के साथ-साथ कांट, हेगल, गेंटे, क्तिक्टे, स्पाईनोजा, कोम्टे, स्पेंसर, डाविन, हैकल, टिंडल, इक्सले, स्टारः जार्डन और प्रोफ़ेसर जेम्स के प्रन्थों में भी पारदर्शिता प्राप्त की थी। फारसी, खंत्रेजी, हिन्दी, उर्दू और संस्कृत-साहित्यों में वे दत्त थे। सन् १६०६ ई० में उन्होंने चारों वेदों का द्यव्ययन किया था द्यीर प्रत्येक मंत्र के पूर्ण पंहित थे। वैदिक ऋचात्रों के प्रत्येक शब्द का विश्लेपण वे शब्दशास्त्र की

इता से करते थे। इस प्रकार उन्होंने अपने को विलक्षण इत् वना लिया था। ऐसा प्रतीत होता है कि अपनी आयु के तेस वर्षों के प्रत्येक चला का उन्होंने अत्यन्त सदुपयोग किया । अपने अन्त समय तक वे कठोर परिश्रम करते रहे। तेरिका में दो वर्ष के प्रवासकाल में, सार्वजनिक कार्यों में रिश्रम करते हुए भी, प्रायः समस्त अमेरिकन साहित्य उन्होंने इ हाला।

संसार के सब प्रन्थकारों, अवतारों वा महात्माओं, कवियों और योगियों के सम्बन्ध में छपना मत प्रकट करते समय वे एक अदुभूत रसिकता का परिचय देते थे। उनकी अनोखी तथा निष्पन्न आलोचना में किसी प्रकार का पारिडत्य प्रदर्शन, वनावटी अभिमान की नाममात्र द्वाचा, अथवा कोई निरसार चात नहीं होती थी। वातचीत करते समय वेद से लगाकर किसी नवीन से नवीन मौलिक पंक्ति तक का जो विचार उनके दिल पर चुभ जाता था, वह यथायोग्य उनके विचारों के समर्थन में सहायक ही होता था तथा उन्हीं का श्रनुभव-सिद्ध सत्य उसे प्रकट करना पड़ता था। वे अत्युच कोटि के विद्वान, तत्त्वज्ञ और ब्रह्मवादी थे। बृद्धि की उन्नति के साथ-साथ वे अपनी आध्यात्मिक उन्नति को भी यह उँचे शिखर तक पहुँचा सके थे। लाहोर को धनी बन्नी खब उनकी आत्मेश्नांत खाधक कर सकने में असमर्थ थी । जो इह समय इन्हें भिलता था वे इसे उपनिपदो स्रोर प्राचीन स्रोध-प्रकावणा के रहस्यों के विचार में हिमालय की पहाड़ियों तथा जनको में वितान थे

ह्मीपेश के निकट ब्रह्मपुर के घने बन में स्वामी राम का स्वभीष्ट सिद्ध हुन्या था—स्वधीत उन्हें स्वान्मा का साझात्कार हुन्या था। यही वह स्थान है। इ. तहा उन्हें मन की उस भयातीत स्थानन्दमय एकता की प्राप्ति हुई थी। क जिसमें न थेट है सीह





जिल तीसरी

दिखाई देता था । प्रकृति के ज्यात्मा (जसली स्वरूप) से एक होना ही वे अपना वास्तविक आवस्य समगते थे। किमी मनुष्य को इस केन्द्र में डाल दो और फिर उसे वहाँ अकेला और दो अर्थान श्रकेला विचरने दो, तो मनुष्य खोर सदाचार के सर्वोत्तम दिलीं को उसके पास आप सुर्ज्तित समिक्ति । मनुष्य वहीं गई जा सकते हैं। न कि विद्वता और पारिडत्य के पुतन्तीयरों में। वहाँ मनुष्य को बैठकर अपने स्वरूप अर्थात् अपने आत्मा के दर्शन भर कर लेने दीजिये, फिर निश्चय रिखये कि वह अपनी श्रचल श्रीर दुजेय स्वरूप चट्टान पर खड़ा होगा। "कोई बाहरी चट्टान सुके श्राचात नहीं पहुँचा सकती," श्रात्म-सादात्कार ही धर्म है। श्रात्मशक्ति का यह साज्ञात्कार कि "मेरा श्रात्मा ही वह शक्ति है, जो अखिल विश्व को अनुप्राणित करता है, श्रीर जह तथा चेतन की प्रत्येक नस की गुप्त शक्ति है," प्रत्येक सर्वसाधारण मनुष्य को भी उन महाविजयों के राजमार्ग पर बाल देता है कि जो मनुष्ययोनि में कठिन से कठिन है। मनुष्य की सर्वसफलतात्रों का यही मूल-मंत्र है। व्यावहारिक ब्रह्मविद्या के मंदिर के उपासकों के सिवाय श्रीर किसी का भी हृदय शुद्ध, मुखमण्डल प्रभा-पूर्ण त्रोर स्वभाव हँसमुख नहीं हो सकता। मेरी ब्रह्मविद्या कोई मत नहीं है, न पंथ वा संप्रदाय ही है, विल्क जीवन के शास्वत अनुभव से श्रेष्ठ बुद्धिमानों द्वारा सिद्ध किये हुए परिएामों का समूह है।

सर्वोत्तम मानवीय काव्य उन्होंने प्रकृति में ही पड़ा था, श्रीर सविस्तर शीतल हिम श्रौर पहाड़ी दृश्यों के सिवाय उनके हृद्याग्नि को कौन युक्ता सकता था। किसी एक घर में रहना उन्हें अच्छा नहीं लगता था। सबसे अधिक सूखी वे तभी होते थे, जब हिमालय के बनों में नेत्रों को अब बन्द किये वे विचरते थे श्रीर महान् पर्वतराज की त्रार कनिखयों से देखते थे।

वे अपने समय के वेदान्त के एक वहुत वड़े आचार्य थे। वे समस्त हिन्दू धर्मञंघों के प्रत्यज्ञ प्रमाण थे। विश्वातमा से श्रभेदता रखनेवाले क्षेष्ठ हिन्दुओं के वे आदर्श गौरव थे। उद्भुधर्म (Law) के वे महान न्याख्याता थे। पूर्ण सदाचार पूर्ण संयम और धर्माचरण के वे पज्ञपाती वा प्रचारक थे, और मनोविज्ञान को मानद-चरित्र का पध-प्रदर्शक वताते थे। उच कोटि का परोपकार उनके चित्त का साधारण खभाव था। वे दिन-रात कार्य और श्रम में लगे रहते थे, किन्तु अन्य लोगों की तरह अपना एक ज्ञा भी हिन्दू जनता की दशा सुधारने में नष्ट नहीं करते थे। उनका कथन थाः—"केवल एक रोग है श्रीर एक दवा । राष्ट्र केवल देवी विधानानुकूल से नीरोग श्रीर स्वाधीन किये जा सकते हैं। उसीसे लोग ऋषि और देवों से वहकर बनाये जा सकते हैं। ईश्वर में स्थित हो; वस सब ठीक हैं दूसरों को ईश्वर में स्थित करो, श्रीर सब ठीक हो जायना; इस सत्य में दिश्वास करो, तुम्हारी रत्ता होगी; इसका विरोध करो। तुम कष्ट पाञ्चोगे।" वे घ्रपने श्रम के लिये कोई पुरस्कार नहीं चाहते थे। अमेरिका से लौटते समय उन्होंने वहाँ के अपने काय-प्रशंसात्मक पत्रों की गठरी समुद्र में फेंक दी थी। अपनी माल-भूमि की छोर से छमेरिका मे जो कार्य उनसे हुआ था उसका ब्योरा केवन एक बार अमेरिका जाने ही से प्रकट होगा। अन्त मे यह कहा जा सकता है कि ऐसे अलोकिक युद्धिमानो का आगमन इस संसार में अल्प वाल के ही लिये होता है। वे अपनी कापना को पूरा करने को नहीं, किन इसरो को राह सुमाने के लिये छाते हैं। विजली को चमक की तरह उनका कार्य फेदल संकेतात्मक होता है। पृत करने हारा कडापि नहीं। वे मनुष्य को राहा उरपानेवाने तुद्ध स्वय बतावर संपत हो जाते हैं। इस प्रकार का प्रत्येक महापुरुष छपने जन्म-काल में कुछ श्रावश्यक निर्माणात्मक शक्तियों का केन्द्र होता है। के श्रापने विचित्र ढंग से मनुष्यों का प्रेम श्रापनी श्रोर खींच लेते हैं श्रोर जब लोग उन पर निर्मर करने लगते हैं, तब वे लोगों को बड़ी ही न्याकुलता की दशा में छोड़कर चल बसते हैं, ताकि लोग सावधान हों श्रोर श्रापने पैरों पर खड़े हों।

मनुष्य की आन्तरिक एकतावाला स्वामी राम का सिद्धांतः इस भारतरूपी छोटे से संसार के समस्त परस्पर विरोधी धर्मी खोर सम्प्रदायों का निस्संदेह एक वड़ा अपूर्व समन्वय है। उनकी प्रेम की शिशा राष्ट्रीय और व्यक्तिगत उद्योगशिक के आपव्यय रोकने की दवा है, जिससे कार्य और कार्यशीलता की माजा वढ़ती है। पदार्थ-विज्ञान और धर्म के विखरे हुए समस्त तथ्यों का संयोग-रूप उनका चरित्र मानवीय आचरण के लिये नित्य आदर्श है। उनका एकमात्र सार्वजनिक कार्य जनता को उनको अपनी अनिभन्नता और दासता से मुक्ति कराना या। उनका व्यक्तित्य मनुष्य-मात्र के लिए स्वाधीनता और स्वतंत्रना का आकाशी दीपक था। क्योंकि उनका गान इस प्रकार था—

Mr. no one can tone me.

Say, who could have injured

And who could atone me?

Mc. no one can tone me.

Ar

The world turns aside
od Io make room for me;
I come Blazing Light
And the shadows must flee.

4

1 come. O you occan

Divide up and part.

Or percent up, & reprehed up Your ribs will be shattered

Be called up depart

And tattered to-day

5

δ

O Kings and Commanders Advisers and Counsellors! My fanciful toys! Here's a Deluge of Fire.

Line clear! my boys!

Go. howl on, O winds, O my dogs! howl free, Beat, beat, Storms!

O my Eugles! blow free.

I chase as an huntsman. I cat as I seize,

The lands and the seas.

Pray, waste not your breath, Yes, take up my orders, Devour up, ye Death.

I ride on the Tempests, Astride on the Gale, My Gun is the Lightning, My shots never fail.

I hitch to my chariot The Fates and the Gods, The hearts of the mountains. With thunder of cannons

Proclaim it abroad.

11

Shake' shake off Delusion, Wake ' Wake up ' Be free Liberty' Liberty Liberty 'Om"

सबहि हमर्दि को फात पहुँचाई, करे पूर्ति प्रस निह एमताई। सके सनाय हमें को भाई, हापित करे नहीं यह सरसाई ॥ १ । रत देव मोटि जन एक पोत, होहन दिन हाभ मात्म मोता। जनमन इंगेनि हमारे धावत, समरी दादा धाप परावत ॥ २ । सुन सागर चाद सोर शवाई, भीच फाटि वर मारन भाई। रायवा कर अनि दन का छारा, अमे दिना महि सब निस्तारा ॥ ६ ह समह कान दे एकर कोरी, कारण व्यक्ति हत्त एक छोरी। कुराब मही मह कुमरी साम , गरद मिर्कार सर करिय-समार । १ । सेनानायक नृपति सब मम कीड़ा के लाल ।
विद्या है यह बिह्न की भाग बचहु बेहाल ॥ १ ॥
पारिपद हु श्ररु सचिव समाजा, वकहु स्वयं कृपया नहीं श्राजा ।
श्रविध करहु मम श्राज्ञा पालन, काल करहु मज्ञ्य दुहुँ गालन ॥ ६ ॥
पत्रन जाह गरजहु श्रति घोरा, कृकर मम भूकहु बरजोरा ।
श्राँघी चलहु भयंकर भारी, भोरि दुंदुभी वजहु सुघारी ॥ ७ ॥
पत्रन प्रचयड हमारो बाहन, श्रन्थड़ चढ़े चलत हम राहन ।
है विजली बन्दूक हमारी, लच्च न चृक्त ही गुणधारी ॥ ६ ॥
मनो श्रहेरी पाछे धावत, करत कीर क्यों ही धरि पावत ।
गिरिवरगण के हदय महन्ता, भूमि खराड श्री जलिंध श्रनन्ता ॥ ६ ॥

तोप शब्द घोषित करहु दूरि-दूरि सब जाय। भाग्य श्रीर देवन सर्वाह रय निज लेहुँ मुलाय॥१०॥ उठहु जगहु हे भीत! त्यांगि देहु भाया सबल। ॐ स्वाराज्य प्रनीत जपह सदा मानस विमल॥११॥

श्रपने ही तत्त्वज्ञान (वेदान्त) पर उनकी अन्तिम घोषणा इस प्रकार है —

Pushing, marching labour and no stagnant Indolence;

Enjoyment of work as against tedious drudgery;

Peace of mind and no canker of Suspicion:
Organisation and no disaggregation.
Appropriate reform and no conservative custom;
Solid real feeling as against flowery talk;
The poetry of facts as against speculative fiction;
The logic of events as against authority of

departed authors;

Living realization and no mere dead quotations, Constitute Practical Vedanta.

जह शालस को काम कर चलत बढ़त धम नेम।

वेमन की तिल चाकरी सुधर काल सो प्रेम॥

रांक के कीट भगाय के दूरि सुशान्त शलापन में मन रालें।

नित होड़ि विधातन को यह रंग सुखार सवारन को रस चालें॥

हैं सांचे सुधारन के मद भीते शो लीक की रीति को नाँव न मालें।

क्नावें नहीं मुख सों बितयाँ लहरें गहरी हियरे स्वभिलांखें ॥ साँची वातें जोरिके काव्य करें नव रंग। त्यागि करपना-डोरि को सेवत तच्य पतंग॥ हम देते नहिं मृतन के प्रंथन केर प्रमाण। तरकाविल घटनान की सकल शास्त्र को प्राण॥ जीवित स्रमुभव घनघटा बरसी तरक सुनीर। करों किनारे याँ धेके स्ववतरणन बेहीर॥

किसी व्यक्तित्व और दलवंदी से व्याकुल व जुभित न होकर जो महावाक्य धर्धात् अई ब्रह्मास्मि पर निरन्तर मनन से एकामता और समाधि होती है. वह स्वतः ही शक्ति, स्वतंत्रता और प्रेम में परिएत हो जाती है। यह श्रसीम ब्रह्मत्व जो देह के प्रत्येक रोम में फड़क रहा है, यह शक्तिशाली श्रद्धेत, यह प्रवल मिल, यह प्रज्वालत ज्योति ही है, जिसे शास्त्र श्रचूक ब्रह्मशर कहते हैं।

हे हगमग, चंचल, संशयात्मक चित्तो ! उत्साह-शून्य धमपरा-यणता श्रोर विधर्मपरायणता को श्रव होड़ो। सव प्रकार का सन्देह श्रोर 'श्रगर मगर' निकाल हालो, सव मत-मतान्तर तुम्हारी ही सृष्टि हैं। सूर्य चाहे पारे की धाली सिद्ध हो जाय, पृथ्वी उदराकार या खोखला मण्डल भले ही प्रमाणित हो जाय, वेद सम्भव है, पौरुपेय ठहराये जा सकें, किन्तु तुम ईश्वर हे सिवाय और दुछ नहीं हो सकते, और दुछ नहीं हो सकते।
तुम्हारी ईश्वरी भावना से निकला हुआ एक भी स्वर्वा
शब्द घास की पत्तियों, वाल् के कणों, घृलि के विन्दुओं
ह्वा के सकोरों, वर्षा की वृँदों, पित्त्यों, पशुओं, देवताओं औं
मतुष्यों को यहण करना पड़ेगा। गुफाओं और वनों पर वह
गर्जिंगा, सोपिड़ियों और गाँवों में घनवनायगा। विस्तर्यों और
गिलियों में गूँजेगा, नगरों से नगरों में जायगा, तथा समतः
संसार को परिपूर्ण ओर रोमाझ कर देगा। वाह री स्वावीनता!
स्वतंत्रता!

किसी नदी के पहाड़ी सोतों को सुमेर के विपुत्त खज्ञानों से भर दो, फिर उस नदी की सब शाखायें, धारायें और नहरें देंतों को समृद्धिशाली करने के लिए खूब सींचती हुई भरपूर बहेंगी। जीवन के सोते, प्रेम के मृल अर्थान् उद्गम स्थान और प्रकाश व सुख के मरने, अनन्त शक्ति, पिवत्रता और ईश्वरमावना। इन सबको पिरिच्छन्नात्मा का आलिंगन करने दो, और उसे स्थानच्युत करने दो, उसके भावों को नरवतर करने दो, मन की परिपृत्त करने दो, फिर हाय, पर, नेन्न, नहीं-नहीं, शरीर की प्रत्येक नायु, वरन अड़ोस-पड़ोम नक एकम्बरता दा एकता का खा सभी अवश्य उरनन्न करेंगे और शिक्त की बाद को जगमगा हों।

राजिमहासन पर नरेश की उपियित-मात्र से द्रवार में व्यवस्था स्थापित हो जाती है। इसी प्रकार से मनुष्य के अपने ईश्वरत्व का, अपनी निजी महिमा का आश्रय लेते ही समस्त जाति में यथाक्रम और जीवन का सख्चार हो जाता है।

ऐ छल्प विश्वासियां ! जागां ! खपने पुरुष प्रताप में जागों ! धीर तुम्हारी निजी राजकीय तटस्थता की एक दृष्टि, तुम्हारी दिव्य निश्चितना का एक कटाज रीरव तरकों को मनोहर स्वर्गी में बदल देने में पर्योत होगा।

ानुभव के साधन

s to Realisation)



श्रात्मानुभव के साधन

(Aids to Realisation)









स्वाजी रापलीकी

नित्य-जीवन का विधान

(ऐट-चान से बुद्ध हो मास पहले स्वामी राम से बुद्ध एक एक संक्रेज़ी भाषा में कीरवामी नारायण को लिये नये थे, जिनको सत्तरकात स्वरं स्वामी राम ने ! 1 में विस्तार देवर संपादित



3

बिदुइते हैं पियजन, शलग होते दुश्मन। मरे जाते हैं चन्धु, भिटते हैं चन्धन ॥ हमारी प्रणाली जो सुन्दर बनी हैं। भले ही रहें वा विगड़ जावें इक दिन ॥ नमें ये कदंब; भी कलरव मचाते। ये पद्मी भी दुनिया से उठ जायें इक छन ॥ मुरका जावँगे फूल, फूत्ते हैं जो आज। छाया से ज्योति का होता परिवर्तन ॥ बदलती हमारी प्रखय प्रीतियाँ भी। वो सुन्दर स्वरूपों का होता विनर्दन॥ नाम सम्मान होते दुनिया के हैं नष्ट। सब दिलावट, विभव, हाट हैं न्दर्भ श्रह अप ॥ चिक हें सभी, है न इनमें कोई यल। है दुनिया तमाशा जो लेती हमें एल ॥ पे सुन्दर मोहक वस्तु सभी, प्यारी जो मन को लगती हैं। पहले घपना मन हाथ में कर, इल से फिर मार गिराती हैं।

चाहे सर्वोत्तम बुद्ध होये, जिसको शाधार चनाते हैं, होवे यह प्रथम चाहे शिलाम जिस पर विश्वास बढ़ाते हैं। जैसे ही करते रपर्रा घरण वे कर ही शिरा हो जाते हैं, हम जैसे प्यार लगे वरते, प्रिय पात्र हुरत कम जाते हैं। हम की वा वरते मन ही कन, विश्वास वर्रे एन पर हम बद, हतने में दुश्ला पृष्ट पदे, पिर हम पहां कम में हम सह ।।

बया संचतुष भें जो एतु भी है— यह सब कर्तीत का राम्मा है। बया भी', 'तृम', 'यह' का भेर सभी, एक भी नहीं विध्यह हैं। सन्द हैं।



हिनिया थे. सद नहाते वैसे पहल को हैं;
भै इनमें एक शावित्रण देगी प्रमुक रहा है।
एन भागमान सृतु, पूरण और एवं में प्रह पोशाक भर पहल वह फिर फिर प्रबट रहा है।।
उस पर ही क्षेम रस्तों न कि पानु, शावरण पर निव धावरण पहल पर पह दूर पर रहा है।।
प्राचीन पन्न इटे; नित्य रह्म सुन्दर पहने देगी श्रवित्रण धानुपम नव रूप घर रहा है।।
पहले प्रपंच इटे, नृतन प्रकट हुए हैं,
दोनों ही वन्नुपों में, यह एक ना बता है।।
दु:य, हानियों में केसी माधुर्य की घटा है,
इनमें ही त्यन होना, यो ही वह युक रहा है।।
उसकी यह नन्नता वा शोभा मनोहर क्या !
पर नव-वहन-दुश तो उसमें मध्यता है।।

पर नवन्वरन-दृश ता उसम मयुरता है।
पर्दा उसने चना है निज्ञ मृत्र दकते को यह सिमर्सादार।
मन्द्र पवन श्री गगन, नदी श्री तुस्तम श्रादि का सन विस्तार॥
चाही जैसे दिपों भले ही. मुक्तमे दिपना है दुश्वार।
पर्दे तुन्हें नहीं दिपाते, उज्दे करते ख़ूब उधार॥
एक रूप के बाद दूसरे हसीलिये वस श्राते हैं—
देख सकें हम उसकी दिसकी वे इस तरह दिपाते हैं॥



जिल्द तीसरी

- भहा संसार एक माला है, भरा जिसमें खोक दाना है। ŧ इक दाने को देख तुम नसते, "नहीं कोई तस्त्र इनमें" कहते ॥ एक के बाद इक बिगइता है किन्तु धागा कभी न घटता है॥ कैसा सुन्दर दिव्य धाना है, हमारा है, यही हमारा है॥ है खर्ण सूत्र पे मेरा दिल - वर्गों न 'रुप' जापँ मिट्टी मिल ॥
 - प्रभातकालीन माधुरी ज्यों एखिक सदा 'नाम रूप' ही त्यों। प्रपंच नाया यह मूहा रचती—झमी चनो है, सभी चिगइती ॥ भनन्त है जो रवि तेजवाला, है जो कभी न बदलनेवाला। उस एक के ये स्वप्न भर हैं, पदार्घ जो सर्व भासते हैं।।
 - दोस्त दुरमनों पै रर्स्क्गा में हरानिज विश्वास नहीं। दिव्य दर्शनों पर भी होगा हरिगज़ मुक्ते भरोला नहीं ॥ शांतिरिक नेरोच्य तथा पाने को पार्थिव वैभव भी। में पर्वोह भला क्या करता ? में स्त्रीर मेरा प्यारा भी॥ वो हें भासमान दुनिया में, उन पे कभी न भूलूँगा। इन शतरंज पियादों, गुड़ियों को निर्मम होकर में देखूँगा ॥ मेरा प्यारा मिला मुक्ते, धव उसको कहीं न खोऊँगा; है सब छोर, उते मार्नू में, वेम में उसको देखेंगा॥ भोकता में है 'एक' तस्त्र जो, केवल है जो सत्य वही। है सर्वस्व हमारा वेभव, टेर रहा हूँ उसको ही॥ ऐसा पक्का दोस्त वहीं हैं, चेला घी गुरू भी मेता, जनक हमारा, प्यारा बरचा, यही-यही घर भी मेरा॥ प्राण-पहलभा, धथवा पति सत्त. स्वयं, शीर खीवन मेरा * वही चीत्रि की चीत्रि घटो ! है केवल-मात्र स्वत्व मेरा ॥ संमानित सीर शान्ति हमारी, जीवन-पृति हमारा 'राम' श्चीकता में हैं 'एक' तस्त्र जो वहीं, यहीं हैं को सतनाम ॥ (स्वयंत्वा पाट न्तर में)—में की डॉवर्स्यन मेरा न्



"Tirthia

र्णंत्र शहरत देख्युर्वे १ क्षेत्र भाग्य १००० । अस्तर हो है। की किया किएल है यह रह सामा (पर्यंताय) किंद्र देल हैं। लोक लाक्क सुवन्तर इस जिल्ला सभी सुबी पुर हम है, उसने कि यह जनम समझदिना हो जाना है। रिय संपर्त किये बहु (क्रम्प) हरिन स्त्रमें (Parados lest) ीय हुँहो दियान हास्ति है। हो। सबने संवाधिक स्नेह की सस्म र होती है। सह सम की सलमा हेती है। चीत इसमें बहकर नगणकार की सुद्ध करती तथा ज्याच्यात्मक रोग के सर्व प्रकार

रेपीड़ों को मह कर देती है।

्यमं रमना विस्वव्यापमः (सार्वलीकिस) है सीर हमारे जीवन से हाना मामिक सम्बन्ध रसना है, जितना कि मोजन-प्रिया। सकल मानिक मनुष्य मानो ध्यपने ही भीनर की इस पाचन विधि को नहीं जानता है। देदी विधान की छुरे की मोक के लोर से भा मक दनाता है। कोई लगाकर क्ष्में जगाता है। इस वियान से निस्तारा (लुटकारा) नहीं । देवी विधान सत्य है छौर अन्य सब मिथ्या है। समस्त सप खार व्यक्तियाँ देवी विधान के सागर में वेयल बुलदुले-में हैं। सत्य की व्याप्या ऐसे की गई है कि "सत्य यह है, जो (एकस्प, एकस्म) ानरन्तर रहे, खर्यवा रहने का आवह करें।" अब इस नाम-रूपमय संसार में ये सब सम्बन्धः दृह वा पदाधः संस्थाय छ र सभाय कोई भी ऐसी नहीं। जो इस द्विशूच के विचान के समान सदा एकरस रह सकें।

ये मृद् छ,र छ रूपदर्शा जीव इस श्रावश रूप विधान की अपेक्षा बाग्र रूपो (व्यत्क्तयो) को वयो छा क 'यार करते हैं ? इसालये। क छातान के कारण उनकी ये व्यक्तियाँ दा वाग्र रूप निरम्तर एकरस रहनेवाले रूख पदाध दिखाई देते हैं। स्रोर देंदी विभान एक अस्पर्य निश्चिक मेंब (............... c cv.) icscent cloud भान होता है।



समत्मान और इसाइ जन इस देशी विभान या परमात्मा की त्याः (दंशकः lealon ,) स्टं) चीर कहार (हार बा माल Tenible, अहं) कार्त हैं, मो कोई गुलनी नहीं करते। निसन्देश पर नियम किसी व्यक्ति विरोप का पन करनेवाला (बा तिहाक करनेवाला) नहीं है। किसी मनुष्य को संसार की किसी वस्तु में चित्त लगान हो खोर त्रिशूल रूपी प्रकृति का अनिवार्यतः कोथ इस पर इप्रवस्य ही घटित होगा । यदि होग इस 'सत्य' के प्रद्र्ण करने में सुन्त हैं. तो वे इसिलिये हैं कि उनमें ठीक-ठीक अवलोकन की शक्ति नहीं। वे प्रायः अपने व्यक्तित्व-सम्बन्धी बातों में कारण को उसी घटना में हुँड़ना पसन्द नहीं करते. बल्क खपने दोषों के लिये दूसरों को दोष मट-पट देने लग जाते हैं। और एक निष्पन्न साजी की भाँति अपनी कोपशृतियों श्रीर भावनाओं तथा उनमें उत्पन्न होनेवाले

परिणामा पर विचार-पूर्वक हिंछ डालना जानते ही नहीं। घोखा हमें अवस्य मिलेगा। जब हम इन बाह्य स्पो पर विस्वास करेंगे। या जब हम अपने अन्तर हय मे इन मिण्या पदार्थी और व्यक्तियों को वह स्थान देने. जो केवल एकमात्र सत्य के लिये उपयोगी है. या जब इध्वर के स्थान पर हम मूर्तियों

(बुतों ... २) को श्रपन हृदय-सिहासन पर विठलायेंगे। अन्वयव्यतिरेक का नियम रोप dillete ...) तो अनात्मा को अमत्यता के नियम को विना किसी उपेज्ञा के स्थिर करता है

कितनी बार ऐसा नहीं होता कि हम पूर्ण भद्र पुरुषों वे बाक्यों पर चित्त लगान से और उनमें इश्वर में भी बढ़क विश्वास रखने से उनको उनके वाक्यों के समान भी भर नह वन रहने हेते ? कितनी बार हम हैवी विधान को सुला है वाला मोह अपने वधों के साथ करके उनकी मृत्यु वा नाम र



म्म तं परादायोऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो महा वेद ।

पत्र तं परादायोऽन्यज्ञाऽऽज्ञानः एवः वेद ।

स्रोकालं परादुर्योऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो स्रोकान् वेद ।

देवालं परादुर्योऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो देवान् वेद ।

वेदालं परादुर्योऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो वेदान् वेद ।

स्तानि तं परादुर्योऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो भूतानि वेद ।

स्तानि तं परादुर्योऽन्यज्ञाऽऽज्ञानो भूतानि वेद ।

स्तं नं परादायोऽन्यज्ञाऽऽज्ञानः सर्व वेद ।

इदं महा, इदं स्वम, इते सोकाः, इमे देवाः, इमे वेदाः,

इनानि भूतानि, इदं सर्वम, पदयनाला ।। ७॥

(ग्रुट० डप० डा० ४, मा० ४, छं० ७)

डार्यः—प्राग्नण्य उसको परे हटा देता है, जो खात्मा से
अन्यत्र (किसो दूसरे के खात्मय) प्राग्नण्य को सममता
है। चित्रयत्व उसे परे हटा देता है, जो खात्मा से ख्रन्यत्र
डात्रियत्व को देखता है। लोक उसको परे हटा देते हैं, जो
आला से ख्रन्यत्र लोकों को जानता है। देवता उसको परे
हटा देते हैं, जो खात्मा से ख्रन्यत्र वेदों को
जानता है। प्राण्धारी उसको परे हटा देते हैं, जो प्राण्यों
को खात्मा से ख्रन्यत्र देखता है। प्रत्येक यस्तु उसको परे
हटा देती है, जो चस्तु को खात्मा से ख्रन्यत्र जानता है। यह
माम्रण्यत्व, यह स्वियत्व, ये लोक, ये देव, ये वेद, ये प्राण्धारी, यह प्रत्येक वस्तु, जो है, यह सब खात्मा ही है। (कृति)

्ये भासमान परार्थ को भोने प्राणियों को खाकपण करते हैं। देखने में तो भगवान् कृष्ण की मोनी मुखि के समान हैं। मन कपी सर्व बनको मट निगलना जाता है। परम्य भीतर पहुँचते ही वे परार्थ खन्दर से तुवा घुमो हैने हैं। मन सपी सर्व के बार यो पाड़ बालते हैं। स्वार हव होग विरहाने



ने दी होती। या उनका स्पष्टीकरणा प्यीर समर्थन न फिया होता।

त्यागका नियम (विधान) एक पान समाई है। कोई सारहीन (चिएक) कल्पना (flimsy phantom) नहीं। राष्ट्रों है तप्ट इन पैनाम्बरों, प्रवतारों चीर नेताओं के केवल कल्पनों से मोहित नहीं हो सकते थे। राताव्यियों ही राताव्यियों वेचारे वृष्टि-सृष्ट्रों की केवल कल्पना से ही नहीं वीत सकती थीं।

अपने दुःखों के असली कारण को न जान कर (जो कि देनी विधान के प्रतिकृत चलना है) लोग अपने रोग के घाछ तरणों को अर्थात् वाल दशाओं को होपी ठाराने लग जाते हैं। जिस प्रकार अस्पष्ट स्वप्न (misty dreams) विस्मृति के अर्थण कर दिये जाते हैं. अर्थात् नितान्त भुला दिये जाते हैं। उसी प्रकार लोगों के अन्छे-चुरे आचरणों और संवादों (शन्त्रों) को अपने चित्त से नितान्त थो डालना चाहिये। खन्न चाहे भयंकर हो। चाहे मधुर, हम उसके साथ लड़ने पा उसके समाधान करने का यत नहीं करते। बल्कि उल्टे हम अपने पेट को ही पीड़ित करते हैं। इसी प्रकार अन्छे-चुरे लोग जो भी मिलें, उनकी हमें पूर्ण उपेत्ता करनी चाहिये, और अपनी आध्यात्मिक दशा उन्नत करनी चाहिये। अपने और ईश्वर के वीच में हन भासमान अनिष्टों वा भाग्यों को खड़ा न होने दीजिये। कोई अपमान और दोप इतने भारी नहीं कि जिनको नमा प्रदान करने से मुक्ते संतोप मिले।

किसी वस्तु को ईरवर से वड़कर मत सममो। ईरवर के बरावर भी किसी का मूल्य मत करो। निन्दा स्तुति श्रौर ज्याधि सब के सव एक समान धातक हैं। यदि हम श्रपने को इनके श्रधीन समभें। श्रपने को ईरवर भान (निर्चय) करों।



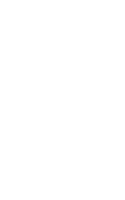
बिन्द शीसरी

मितारों को पाता है, यह मानो तुपाभिमान (vanity) के जिल्हा पर मिहों का भरत हो जाना है। वेदान्त को खनंत्रता (मुक्ति) एक इस परिन्द्रित देहाना न्यक्तित्व खार देह) के लिये देवी विधान से लुटकारा नहीं है। यह तो God (ईरवर) को ठीक उत्तट देना, खर्यात् dog । स्वान) बनाना है। * लाखों भाषी इस भूल के कारण प्रति घड़ी नारा होते हैं। इस देवी विधान के कम को मूर्वता-पूर्वक उत्तट देने से हजारों मित्तक निरासा में हुव रहे हैं खोर लाखों हत्त्व प्रत्येक मिनट उत्तरें हो रहे हैं। स्वयं देवी विधान ही हो जाने से इकड़ इकड़े हो रहे हैं। स्वयं देवी विधान ही हो जाने से विधान से लुटकारा मिलता है, यही सिवोडहं का अनुमव

(साझात्कार) है। जो वास स्पों (आकारों) की नींव पर विश्वाम करता और घटनाओं तथा अलंकारों (lacts and figures) के भरोसे घटनाओं तथा अलंकारों (पर्वत) पर साथ ह्वता है। पर वह व्यक्ति उस अवल शिला (पर्वत) पर साथ ह्वता है। पर वह व्यक्ति उस अवल शिला (पर्वत) पर अपना स्थान बनाता है। जिसके हह्म की तह में जमा पड़ा है कि अपना स्थान बनाता है। जिसके हह्म की तह में जमा पड़ा है।

श्रीर देवो विधान एक जीनो-जानती शक्ति है।"
लोग इस शरीर को पेतिस वाज स्वाधी गर्ब-पूर्ण मदोन्मत
श्रथवा श्रन्य जो कुछ चाहे श्रानन्त्र से कहे चाहे जिसे लोग
श्रथवा श्रन्य जो कुछ चाहे श्रानन्त्र से कहे चहे जिसे लोग
श्रपमानित पद-दित श्रीर मृतक हुश्चा कहते हैं, वैसा इसको
कह दें, सुक सर्व के श्रातमा) को इसने क्या ?









में जीवन का विधान (The Law of Life in Death) हुमें हतना ही कठोर छोर ठोस (संसार) सत्य जान पड़ता है, जितना कि प्राचीन ऋषियों को रुद्र। इसकी तनिक उपेना करों कि घायल करनेवाले तीर तुम्हारी वज़लों छोर एाती में जा चुमते हैं।

ननले स्ट्रमन्दव उतीत इपवेनमः। बाहुन्यां उत ते नमः॥
अर्थः – हे रुद्र (अर्थान् देवी विवान)! प्रणाम है तुम्हारे कोप (रोप) को; प्रणाम है तुम्हारे अमीध वार्णो को; प्रणाम है तुम्हारी अथक वाहुओं को।

हम लोगों के प्रत्येक छोटे-छोटे अनुभव में सारा इतिहास हिंपा पड़ा है। हम लोग उसे पड़ते नहीं। यदि हम उचित मुल्य हैं अर्थात् देहाभिनान (local self) को दूर करके साजात् ईस्वर को अपने शरीर के भीतर से कार्य करने दें, तो बुद्ध भगवान् या हचरत ईसा हो जाना उतना ही सहल है, जितना कि निर्धन पाल (Paul) वने रहना । एक ही कोप (न्यान) में दो तलवार हम नहीं रख सकते। यदि हम लोग वाहर से प्राप्त भये निन्दा-स्तुति में विश्वास न करने की शक्ति श्रपने भीतर उपार्जित कर लें. यदि हम कार्य करने के ज्वर से मुक्त हो जायें, यदि जीनना व विजय प्राप्त करना हमारा उद्देश्य न हो, यदि सत्य के उपदेश की अपेजा स्वयं सत्य धनने में हम अपनी शक्ति आधिक लगाये यदि हम (अपने कार्यों के बीच) उनना ही स्थम भेय लेकर कार्य किया करें जितना कि सूर्य सर्वदा चमकते में लेता है। तो ईखरों के भी अधिका । स्वामियों के भी परम स्वामी । इस हो सकते हैं । जिस चुए इस लोग छपने विषय में इसरी की बानों पर विश्वास करना ज्यारम करते हैं. उसी क्या सब कुछ (कर्म-किया स्वादि । नापनः रूप हो जाना है . द्विया नहीं है . संसार नहीं है . हीर सामाहकः



^{दीवित (श्रमर) बना दिया । परन्तु न्ह डास्री नहीं कि इक्त} पीइन और दुःस के खनन्तर सकलता चौर फानन्द का फाग्मन हीं हो। प्रायः केवल एक दुःख हो विषत्तियों की पंक्ति (ट्रेन) के आने की घोषणा दे देता है, छोर इसी से कहते हैं कि कोई दुःच अकेले नहीं प्राता (mistortunes never come sincly)। अगर एक ही विपत्ति को चेतावनी ने हम शुभ श्रवस्था में चेत जायं. श्रर्थात् जग पड़ें, तो जोवन और ज्योति का प्रकाश (उजाला) तत्काल हम पर प्रा पड़ता है : किन्तु यदि प्रारम्भिक दुःख की सदी एमारे नियम-भंग (विधान-प्रतिकृतता) को और भी बड़ा दे, तो हम कठोरतर विपत्तियों को बुला लेते हैं। अत्यन्त कठोर, एवं संभवतः गुरा देवी विधान के न समफे जाने व पालन होने से यह फलह अवस्य जारी रहता है, और हमारे शिरों पर मुक्के और चोटें खुव बरसाता है। इन चोटों से केवल वेही वच निकलते हैं, जो योग्यता की एकमात्र शर्त ''अकथनीय प्रारम्भिक अवस्था (nasa: : saite)" में से ख़ब गुजर जाते हैं। किसी समय इंजिनो में नियामक यन्त्र (१००० ००) नहीं हुआ करते थे. ख्रीर बाष्प का बेग छपने वश के बाहर था। परन्तु अब जब इंजिनों के लिये नियामक यन्त्र निर्मित हो चुके हैं, तब शास्त्र का व्यथ दुव्यंच क्यो हो ? इसी प्रकार जीवन-विश्वान-ऋपी नियामक (. . .) के पा लेने पर कोई कारण नही दीखता कि पीड़ा और कलह पशुत्रों के समान मनुः यो पर क्यो राज्य करने पायं।

इस भौतिक व्यक्तित्व में श्रासक्त होकर कार्य करना परिन्छिन्न सांसारिक शासनों की दृष्टि में तो कोई पाप नहीं, परन्तु विश्व के सर्वोच शासन के सामने यही एकमात्र पाप हैं. और दुसरे दोष तो इस पाप की विभिन्न शाखाय-मात्र हैं। संसार में



बहीं सब कारण और नियम हमारे चारों छोर महीं (planets) तया जपमहों (satellities) की भाँति घूमने लग जाते हैं; नहीं नहीं, वे हमारे निकट इस प्रकार छाते हैं, जैसे भोजन के समय वालिका अपनी माता के समीप।

यथेह सुधिता वाला मातरं पर्वुपासते ॥ (साम वेद)

जिस प्रकार वच्चे को चलना सीखना होता है। ठीक उसी प्रकार सरलता और स्वाभाविकता-पूर्वक मनुष्य को मरना सीयना होता है। इस मृत्यु से ऋभिप्राय वह अवस्था है कि जहाँ सेवक व्यक्तिगत सेवक नहीं रहता, शिष्य शिष्य नहीं, राजा राजा नहीं: मित्र मित्र नहीं, रात्रु रात्रु नहीं, लोगों के बचन (promises) वचन नहीं, धमकियाँ धमकियों नहीं, सामान सामान नहीं, अधिकार अधिकार नहीं रहते, चल्कि जहाँ सव ईश्वर रूप ही हो जाता है। वहाँ केवल एकमात्र सत्य है। जब हृदय इस (संघाई) के साथ स्पन्दित होता दा धड़कता है, तय सारा संसार इस हृद्य के साथ स्पन्दित होता वा धड़कता है। जब मन इस (सत्य) से विच्छिन्न होता है (खयवा जय मन इस देवी विधान के साथ तालबद्ध नहीं होता), अर्थान जब मन बारा हस्य बा नाम-रूपों पर ही खालय करता है, तय सारा संसार उस मन से विरुद्ध ।पन्दित या छनुकांम्पत होता है। जब तक हम लोगों में अपने देह की रहा करने और अपने स्विताय की और से "राठे शास्त्रम्" वत वदला लेने की भावना जान परही वा मासुस होती है वय वक समग लो कि हम एत्र हा गतप्राण है। वलेशकारी व वर्षरारी तथा अपमानवारी शत्ने को विना ध्यान विवेदोड़ होने की शांक से बरवर उत्तम प्रमास (विकी) महत्ता का कोई वहीं हैं।

् तद कोई सरवन पंधील के स्थान में तत की हरती पर हा --दिला है, तद मारी क्यारी का भाव इसकी कोर काल --



ल, तीसरी

उत्सृष्ट शिष्टाचार—देवी विधान

फ़र्लाल क्याँ रोज चा श्वातिश हमे गु^{9त}, शरार रहपुन्त मन चालीना हर मोत्र। यदो में गुप्रत र्घ्या घातिरा कि ऐ शाह ! थपेशत मन धर्मीरम गु दर धकरोज़॥

भावार्थः प्रज्ञाहीम जब जीते जी जलाया जाने लगा, तो

उसने अन्निदेवता से प्रार्थना की कि चिद मेरा देह-अध्यास (व्यक्तिगत प्रहंकार) वाल वरावर भी इस देह में धसा हुआ हो।

तो मेरी निरन्तर यही विनय है कि 'हुपया इसे कदापि न छोड़ों।

अवश्य जला हालो। आग युम गई, मानो उसने भक्तिपूर्वक वा सत्कार-पूर्वक यह उत्तर दिया कि को मेरे स्वामी ! आप जीते

रहिये छ्यार मुक्ते छापके चरणों पर मर मिटने होजिये।"

ऐसा हैदी विधान है। शिष्टाचार में, विनय में, ईश्वर किसी

से हारनेवाला नहीं।

रुचं ब्राह्मं जनयन्तो देवा ध्यप्ने तद्युवन्। यस्त्रेवं ब्राह्मणो विभातस्य देवो असन् वरो ॥ (यद्यु॰ संहिता) सर्वारयेन भूतान्यभित्रन्ति ॥ (वृहदारययक उपः)

सर्वेडस्मे देवा चलिमावहन्ति ॥ (ते॰ उप॰)

अर्थ:—आदि में ही मृष्टि-उत्पादक देवों ने ब्रह्म में रुचि रखनेवालों से योला:—"हे ब्रह्म से अभिन्न ब्राह्मणों ! जो कोई भी इस प्रकार ब्रह्म को जान लेगा, उसकी सेवा में हम

...र ... र ... इति जाज्ञाकारी अनुचर को भाँति उपस्थित रहना देवताओं को आज्ञाकारी अनुचर को भाँति उपस्थित रहना होगा ।"

ना। ॥उसके सिंहासन के स्त्रागे भूतमात्र उपहार ला अर्पित ~ \$ 1



(रैहाच्यास) पीले ह्वेहना होगाः जीर खपने त्यक्तित्व (झहंकार) और मन के नाथ उनमा ही सहातुभृति रखनी होगीः जितनी कि किसी खदात पुरुष के प्रति रक्तवी जाती है। इससे न किञ्जित् न्यूनः न फाधिक।"

वपाँ के अपने विचारों और मन्तव्यों (plans and purposes) को छोड़कर यहा, कीर्ति एवं निर-परिचित न्वरों के नाद को त्यान हो; आलिंगन करनेवाली प्यारी भुजाओं के आलिंगन से वियुक्त होकर अपने एस लालन-पालन किये हुए अहंकार को इस प्रकार परे रख हो, जैसे हम अपने दस्तानों को खींचकर बतार देते हैं; रोग-भय को किनारे करके और "लोन हमारे मृल्य को समकेंगे" इस भावना की आशा (hopes of appreciation) को निकाल वाहर कर हो; अपने आपसे अशारी वन वाहर हो जाओ; दीर्घ काल से रचित आवरण अर्थात् वाहरी कोप को भूतीवत् छोड़ हो; वैरान्य के द्वार से प्रभुत्व के प्रासाद में प्रवेश करों, ज्ञान के द्वार से मुक्ति के खुले उपवन में आओ; सबका त्यान कर हो; जो वृद्ध अपना है, उससे मन को निरासक्त कर हो। निर्वन और निःस्वत्व वन जाओ; फिर देखो, तुम सव विद्धाओं के प्रभु और अधिराज हो जाते हो कि नहीं।

धीरच ते लद्मीरच पन्यावहाराचे पारवें

नस्त्राणि रूपमरिवनी ब्यानम् । इत्यान्नियाणानु (यबु॰)

अर्थः—जय (श्रो और समार तुम्हारो दास्यो है। दिन और रात तुम्हारे दावेश और वाम भाग (पार्व) है। नक्षत्रों में सोमा (कात्न) तुम्हारो हाएँ (द्रश्ने) है। स्वर्ग मर्ख्य (पृथ्वी और आकाश) तुम्हारे व्यक्ते हुए (अजग-अजग) अथर (औष्ठ) है।" यदि किसी वस्तु का तुम्हे रह्या करनी है तो यह इन्हा करो।



(देहाच्यास) पीछे छोड़ना होगा, छोर छपने व्यक्तित्व (छहंकार) और मन के साथ उतनी ही सहातुभूति रखनी होगी, जितनी कि किसी छज्ञात पुरुष के प्रति रक्की जाती है, इससे न किखित न्यून, न छथिक।"

वर्षों के श्रपने विचारों श्लीर मन्तव्यों (plans and purposes) को छोड़कर यहा, कीर्ति एवं चिर-परिचित स्वरों के नाद को लाग दो; श्रालिंगन करनेवाली प्यारी भुजाओं के श्रालिंगन से वियुक्त होकर श्रपने इस लालन-पालन किये हुए शहंकार को इस प्रकार परे रख दो, जैसे हम श्रपने दस्तानों को खींचकर ज्वार देते हैं: रोग-भय को किनारे करके श्रीर "लोग हमारे मूल्य को समकेंगे" इस भावना की श्राहा (hopes of appreciation) को निकाल वाहर कर दो; श्रपने श्रापसे श्रहारीरी वन वाहर हो जाओ; दीर्घ काल से रचित श्रावरण श्र्यात् वाहरी कोप को मुत्तीवन् छोड़ दो: वैराग्य के द्वार से प्रमुख के प्रासाद में प्रवेश करो; हान के द्वार से मुक्ति के खुले उपवन में श्राशोः सदका लगा कर दो: जो वुद्ध श्रपना है। इससे मन को निरासक्त कर दो निर्धन और निःस्वत्व वन जाशोः कर देवे। तुम सव वस्तुओं के प्रमु श्रीर श्र धराज हो। जोते हो कि नहीं।

श्रीरच ते तद्भारच पन्नावहोसये पार्वे नक्ष्याकि स्प्रमारवनी स्थानम् । इत्यान्नपाकाः (यद्युः ।

्षर्य — तय (भी र्खंद सम् : क्यान हा स्याने हिन श्रीर रात तुम्हारे दाल्या इं.र बान ना (काव को किया में सोमा (कावत) तुम्हारे क्या (कावी क्यान मत्य (क्या व्याप्त कावार) तुम्हारे कावी के क्यान्य का) स्थर (व्याप्त कि विचार क्या काव को को कावार का का है, तो यह हम्सा करा।



duties)! तुम हमारा समय ले लेते हो । आराम से भोजन करने का समय भी तो हमें इनसे नहीं मिलता। (इस प्रकार) कत्तंच्य के नाम आपकी सारी जिन्दगी चीए होती जा रही है। पत्नु हमें वह अपने से पूछना चाहिये कि ये कर्त्तव्य (duties) कहाँ से आते हैं ? कौन हम पर यह कर्तव्य आ डालता है ? हम स्वर्च । दास्तव में आप हो, जो अपने कर्त्तव्य निर्माण कर लेते हो। ऋर खामी के समान इन कर्त्तव्यों को आप पर न आ पड़ना चाहिये । इफ़्तर के काम की देख-भाल करना आप अपना कर्त्तव्य सममते हैं, पर दक्तर का काम आप पर कौन ढालता है १ श्राप स्वयं । इस प्रकार चिंद श्राप कर्त्तव्यों के स्वरूप को अन्ततः विचारोगे या देखोगे, तो आपको पता लग जायगा कि प्राप अपने स्वामी आप हो, और ये सव कर्ज्वय जो आपको पूर्ण अपना गुलाम (दास) बनाये हुए हैं, आपने स्वयं रचे हैं। यदि एक वार भी आप ऐसा भान वा निश्चय कर लें कि "संसार में कोई पदार्थ नहीं, जो मुमे बाँध सके। प्रत्येक वस्तु वास्तव में मुक्तसे उत्पन्न होती है," तो आप बड़े मुखी हो सकते हैं, अपनी स्थिति को बड़े मजे से आप ठीक कर सकते हैं।

हॉक्टर जोहसन के पास एक मनुष्य खाकर बोला:— 'हाक्टर ! हॉक्टर !! में नारा हुआ। में गया गुजरा, में किसी काम के योग्य नहीं रहा। में कुछ भी नहीं कर सकता। इस दुनिया से मन्य क्या कर सकता है ?' हॉक्टर जोहसन में दुनिया से मन्य क्या हुआ। सामना क्या है ? खपनी शिवायत कससे पृक्षा !क क्या हुआ। सामना क्या है ? खपनी शिवायत के क्ये सक्य । बारण । तो जनाने चार्य े वह मनुष्य इस प्रशार पपनी ज्ञीले पेश करते हुआ। - अम्बुष्य इस संसार में खापक से खपक सी वप अधारी हुआ इस प्रशार ब खनन्त काल वे सामने भला सी वप क्या है ? इस पर हुए



तिस्कारा व धिक्कारा नहीं, वह केवल रोने लग पड़ा, और उसके साथ सहानुभूति करते हुए घोलाः—"मनुष्यों को आत्मधात कर लेना चाहिये, क्योंकि उनके पास परमार्थ के लिये कोई समय नहीं। भाई ! आपकी इस शिकायत के साथ मुक्ते एक और शिकायत है, मुक्ते इससे भी बुरी शिकायत करनी हैं।" इस मनुष्य ने डॉक्टर जोहनसन से कहा कि स्त्राप श्रपनी शिकायत कहिये। बॅक्टर जोहसन रोने लगा, दिखावटी रुदन करते हुए वोला-"यह देखो, मेरे लिये कोई जमीन वा भूमि नहीं रही, कोई ऐसी भूमि बची नहीं, जो मेरे खाने-भर को अन्न उत्पन्न कर सके, में तो गया-गुजरा स्वीर मरा।" वह (श्रादमी) बोला—"श्रजी हॉक्टर साह्य! यह हो कैसे सकता है ? मैंने माना कि आप पहुत अधिक खाते हैं. इस मनुष्यों जितना खाते हैं, फिर भी रस पृथ्वी पर इतनी भूमि है कि जो आपके उदर के लिये अन चपजा सके आपके शरीर के लिये अन्न या शाक (तरकारी) उत्पन्न करने को काक्षी भूमि है। आप शिकायत क्यों करते हैं ?" डॉक्टर जोहसन ने उत्तर दियाः—"झरे देखो तो, आपकी यह पृथ्वी ही क्या चीज है ? यह भूमि कुछ चीज नहीं। च्योतिर्गाणत में यह पृथिवी एक विन्दु-मात्र मानी जाती है। जब इम तारो छोर नृयों के स्त्रन्तर का हिँसाव लगाने वैठते हैं. तो इस पृथियां को कुछ भी नहीं अर्थात शून्यवन मानते हैं फिर इस शुस्य प्रप पृथियों की तीन चौधाई तो जल से परिपूर्ण है. क्षीर इस पर बचता हो ज्या ती जरा ध्यान को ^पणक बहुत वड़ा नाग तो उसर वाल् से भर पड़ार पत वड़ा माग उसर पर्वती खीर पत्परी ने ले रक्या 🔧 😘 दड़ा साग तो साल खीर नादेयों ने दवा रक्तवा है। फिर इस नाम का बहुद सा भाग लन्दन जैसे बहु-बहु नगरों में घिरा पढ़ा है। उस पर सहके रेले पही कुचे इस प्रथिषों का एक बहुत वहा नाग ले लेंग है। ें



मानना त्मारे सामधर्य से जातर है। एस द्वापडा कदना कर नहीं सकते । यदि याप पानी आहेत हैं, यदि याप पपने नीर्ट को पानो पिलाया चार्त हैं। हो शहर के होते हुए ही फाप क्पर्न चेट्रिको पानी पीने की पुचकारिंग, वर्गीकि जब हम शहर बंन्ट करते हैं, तो पानी भी वहीं एक जाता है, खर्भान् पानी भी प्राप्त होंने से रह जाता है, पानी तो नित्य इस शब्द के साथ-साय ही 'आना है।'' इसी प्रकार राम कहता है कि जगर आप बेदान्त का धनुभव करना चाइते हैं, तो सर्व प्रकार के शब्दों (कोलाइल) के बीच में, भाँति-भाँति के कड़ों (कंकड़ों) के बीच में ही उसे कीजिये । इस जगत में आप कभी ऐसी स्थिति में अपने को नहीं पा सकते, जहाँ बाहर से कोई शब्द (सदसद) या दःख-भंगट न हों । चाहे आप हिमालय के शिखरों ^{प्र} जाकर रहे। बहां भी अपने गिर्द आप कंफटें पायेंगे। चाहे श्राप अशिष्ट (जंगली) पुरुषो के समान रहें. वहाँ भी अपने गिर्द् छाप कंकटें पायेंगे । जहां जी चाहं छाप जायँ दुःख-भंभट आपको नहीं छोड़ेगे. ये अपका पीछा कभी नहीं छोड़ेंगे ये सदा आपके साथ होंगे । यदि आप वेदान्त का अनुभव करना चाहने हैं. तो जब श्रापक इर्द्-गिर्द कंलट-स्त्पी रहट का शब्द खुव जारी हो रहा हो. तभी उसे करिये। जितने महापुरुष हुए हैं वे सब के सब अपमानकारी (बा नुच्छ निराशा-जनक) परिस्थिति और दशा के होते हुए ही हुए हैं: वाम्तव मे जितनी आधिक कप्र भरो दशा होनी है और जितनी अधिक काठेन (वा कप्ट-साध्य) परिस्थित होती है, उतने ही प्रवल मनुष्य नौर उत्ने ही अधिक वलवान लोग हो जाते र्के जो उन 💯 💛 🦓 से निकलते हैं। श्रतः इन बाह्य दुःखी

रहने लगोगे, अर्थान जब वेदान्त आपके आचरण में आ जावेगा, नो आप देखोगे कि वे खड़ोस-पड़ोस और अवस्थाये आपसे हार मानेंगी, त्रापके त्रागे सिर कुकायेंगी: त्रापके अधीन हो जायँगी, और आप उनके स्वामी वन जाओंगे। क्या यह समाज हैं जो हमें नीचे गिराता है ? क्या यह दुनिया है, जो हमें नीचे दबाए रखती है ? नहीं, आप तो इस दुनिया में रहते ही नहीं। प्रत्येक व्यक्ति तो अपनी ही रचित जुद्र दुनिया में रहता है। कितने थोड़े ऐसे पुरुष हैं, जो इस संसार में रहते हैं ? इस विशाल संसार में बहुत ही थोड़े मनुष्य रहते हैं। आप तो अपनी रचित छोटी सी दुनिया में रहते हैं। आप लोगों ने अपनी-अपनी चुद्र न्यक्ति के चारों छोर छपनी-अपनी दुनिया बना ली है। कितने ऐसे लोग हैं, जो छोटे से घरेल कृत से परे कुछ नहीं जानते। कितने ऐसे लोग हैं, जो अपनी जाति की सृष्टि के बाहर इन्द्र नहीं जानते । कितने ऐसे लोग हैं, जिनको अपने पति-पत्नी या बाल-बच्चों की रचित छोटी सृष्टि के बाहर कुछ मालूम नहीं। कम से कम आप इस विशाल संसार में तो रहिये इन दोटी सी तुच्छ दुनियाओं से तो ऊपर उठिये। यह विशाल (विस्तृत) सृष्टि तो आपको नीचे नहीं दवाए रखतीः ये आपकी अपनी ही रचित छोटी-छोटी मृष्टियाँ हैं। जो आपको नीचे दबाए रखती हैं : यदि आप इस (छोटी मृष्टि) से ऊपर उठ सकें, तो सारी दुनिया छापके छायीन हो जायगी। छापके छाने हार मान लेगी।

वस्तुतः कर्म क्या है, इसको विचारने से हमारे निज निर्मित छूद्र संसार का उदाहरण मिल जायगा। आप कहते हैं कि हम अति प्रवृत्त रहते हैं, और राम ने इस देश में लोगो को समयाभाव की शिकायत करते देखा है, यदापि राम को यह देखकर हैंसी गालस हो रही है कि लोग अपनी सारी जिन्होंगे नो समय का

मानना हमारे सामर्थ्य से वाहर है । हम आपका कहना कर नहीं सकते । यदि आप पानी चाहते हैं, यदि आप अपने घोड़ को पानी पिलाया चाहते हैं. तो शब्द के होते हुए ही स्राप ऋपने घोड़े को पानी पीने को पुचकारिये, क्योंकि जब हम शब्द बन्द करते हैं, तो पानी भी वहीं एक जाता है, अर्थान् पानी भी प्राप्त होने से रह जाता है, पानी तो नित्य इस शब्द के साय-साय ही आता है।" इसी प्रकार राम कहता है कि अगर आप वेदान्त का अनुभव करना चाहते हैं, तो सर्व प्रकार के शब्दों (कोलाहल) के वीच में, भाँति-भाँति के कष्टों (मंमटों) के वीच में ही उसे की जिये । इस जगन में आप कभी ऐसी स्थिति में अपने को नहीं पा नकते, जहाँ वाहर में कोई शब्द (स्टब्स्ट) या दुःख-मंभट न हों । चाह त्र्राप हिमालय के शिखरों पर जाकर रहें, वहाँ भी अपने गिर्द आप मंमटें पायेंगे। वाहें आप अभिष्ठ (जंगली) पुरुषों के समान रहें. वहाँ भी अपने गिर्द आप नंसट पायेंगे । जहाँ जी चाहे आप जायें दुःख-म्मूनट आपको नहीं छोड़ेंगे. ये अपका पीछा कभी नहीं होड़ेगे य महा आपके साथ होंगे । यदि आप वेदान्त का अनुभव करना चाहते हैं। तो जब आपके इर्द-गिर्द फॉल्ट-रूपी रहट का शहर खुब जारी हो रहा हो। तभी उसे करिये। जिनने महापुरूप हुए हैं. वे सब के सब अपमानकारी (वा नुन्छ निराणा-जनक) परिन्थिति स्रोर दशा के होते हुए ही हुए हैं वास्तव में जितनी अधिक कप्ट भरी दशा होनी हैं और जिननी अधिक कठिन वा कप्र-साध्य) परिस्थिति होती है, उनने ही प्रयत्न मनुष्य और उतने ही अधिक बलबान लोग हो जाते हैं जो उन अवस्थाओं में में निकलते हैं। अतः इन बाह्य दुर्वो ाथों को धानन्त्र में आने हो। ऐसे अहोस-पढ़ोंत में को व्यवहार में लाखो। श्रीर जब वेदान्तन्त्वमें

रहने लगोगेः अर्थात् जय वैदान्त आपके प्राचरण में जा जावेगाः वो आप देवोगे कि ये अदोस-पहोस और अवस्थायें आपसे हार मानेंगी, आपके आगे सिर भुकायेंगी, आपके अधीन हो जायँगी, और खाप उनके स्वामी वन जाओंगे। वया यह समाज हैं, जो हमें नीचे गिराता है ? क्या यह दुनिया है, जो हमें भीचे द्याए रखती है ? नहीं, आप तो इस टुनिया में रहते ही नहीं। प्रत्येक व्याक्ति तो अपनी ही रिचत खुद्र दुनिया में रहता है। कितने थोड़े ऐसे पुरुष हैं, जो इस संसार में रहते हैं ? इस विशाल संसार में बहुत ही धोड़े मनुष्य रहते हैं; छाप तो छपनी रचित छोटी सी दुनिया में रहते हैं। प्राप लोगों ने अपनी-अपनी चुद्र व्यक्ति के चारों छोर छपनी-अपनी दुनिया बना ली है। कितने ऐसे लोग हैं, जो छोटे से घरेल वृत्त से परे कुछ नहीं जानते। कितने ऐसे लोग हैं, जो अपनी जाति की सृष्टि के बाहर कुछ नहीं जानते । कितने ऐसे लोग हैं, जिनको अपने पति-पत्नी या बाल-बच्चों की रचित छोटी सृष्टि के बाहर कुछ मालूम नहीं। कम से कम आप इस विशाल संसार में तो रहिये इन दोटी सी तुच्छ दुनियात्रों से तो ऊपर उठिये। यह विशाल (विस्तृत) सृष्टि तो आपको नीचे नहीं द्वाए रखती; ये आपकी अपनी ही रचित छोटी-छोटी नृष्टियाँ हैं, जो आपको नीचे द्वाए रखती हैं; यदि आप इस (छोटी सृष्टि) से ऊपर उठ सकें, तो सारी टुनिया आपके अधीन हो जायगी आपके आगे हार मान लेगी।

वस्तुतः कर्म क्या है, इसको विचारने से हमारे निज निर्मित छद्र संसार का उदाहरण मिल जायगा। आप कहते हैं कि हम अति प्रवृत्त रहते हैं, श्रीर राम ने इस देश में लोगों को समयाभाव की शिकायत करते देखा है, यद्यपि राम को यह देखकर हँसी माल्स हो रही है कि लोग अपनी सारी जिन्दगी तो समय का

एक पुराना खभ्यासद्द्य योगा था। जो सैनिक शिसा और क्वापर में रनना सभ्यान या हि दिन (हवायह) की कियाँए उसके लिये ग्वामाधिक हो गई भी अर्थात का ज्यायर की क्रियार्न् यन्त्रदम् किया करता म । दूध का भारी मटका या कुछ और पाय वस्तुएँ हाथ में लिये बर् (बोझा) याजार में जा रहा था। बह खपने हानों में या बन्धों पर भारी घड़ा (दूध का) ले जा रहा था। बही बाडार में एक पवका मसलरा ह्या पहुँचा। चसने बाहा कि यह सब हुछ या छन्य स्वादिष्ठ साम पदार्थ (इसके हाय वा कंधे पर से) नाही (मोरी) में गिर जायें। अनः वह मनुष्य एक किनारे खड़ा हो गया और वहीं योल का "ब्रहेनशन ! ब्रहेनशन !! attention, attention सावधान हो ! सावधान हो !! !।" आपको मार्स है कि जब हुम अटेनशन (attention कहते हैं तो हाथों को नीचे गिर जाना चाहिये । इस अभ्यासवृद्ध योद्धा ने ज्यों ही कि वह रा्व 'कटेनरान' मुना, स्यों ही उसके हाय स्वतः नीचे गिर गये, त्रीर सद दूध या अन्य वस्तुर्दे, जो उसके पास थीं, नाली में गिर गई। दादार में सभी राही और दुकानदार इससे पेट भर हुँसे। आप देखते हैं कि इद उसने इन्टेनशन (सावधान) का शब्द हुना, तत्काल उसने हाथ नीचे गिरा दिये । परन्तु अध्यात्म-शास के कथनाहसार उसने इछ काम नहीं किया ऐसा कर्म तो न्यामाविक कर्म (retiex action) कहलाता है । स्वामाविक दर्भ कोई कमे नहीं है. क्योंकि मन उसमें नहीं लगा होता।

अन राम आपसे देवल पूछता है कि ' छपा करके वताइये। आप चौदीस घंटे में कितना 'काम' करते हैं ?'' जब आप खाना जाते हैं। तो क्या यह 'कमें' है ? नहीं। जब आप और वीसियों काम करते हैं। तो जिस अर्थ में अध्यातम-शाख कर्म की परिमाषा करता है। आप उसी अर्थ में क्या 'कम' करते हैं ? जब आप

खून करते (वक, काटते) फिरते हैं, छौर तिस पर समयाभाव की शिकायत करते हैं। उन्हें बक्त तो इतना काकी मिलता है कि उनके सिर मुजा पर वह भारू हो जाता है, छोर फिर भी वे कहते हैं—"हमारे पास समय नहीं।" आप अपने संकल्पों से समय स्रो रहे हैं, छाप समय नष्ट कर रहे हैं, छोर फिर भी कहते हैं कि "समय नहीं है।" यह कैसी वात है ? कर्म के रूप के विषय में जो म्रम आपको हो रहा है, वही आपकी शिकायत का कारण है। आप 'कर्म' उसको कहते हो, जो वास्तव में 'कमें' नहीं है। भिन्न-भिन्न लोग कर्म की भिन्न-भिन्न परिभाषा करते हैं। विज्ञान या यन्त्र-विद्या (Mechanics) के लेखक कर्म की एक प्रकार परिभाषा करते हैं, छौर हम लोग दूसरी प्रकार । उनके मतानुसार त्र्याप यदि सम धरातल (मैदान) पर चल रहे हों, तो कोई कर्म (वास्तव में) नहीं कर रहे; अथवा गेंद यदि चिकनी (साफ) समतल भूमि पर लुड़क रहा हो, तो वह (वास्तव में) कोई कर्म नहीं कर रहा है। आप जभी कर्म करते हो, जब चढ़ाई पर ऊपर चढ़ते हो। जब आप सम धरातल पर चलते हो, तव कोई कर्म (वास्तव में) नहीं करते हो, यह विचित्र ढंग कर्म की परिभाषा करने का है। अध्यातम-शास्त्र कर्म की परिभाषा दूसरो रीति से करना है । अध्यात्म-शास्त्र के अनुसार श्राप तभी कर्म करते होते हो, जब श्रापका मन उस कर्म में प्रवृत्त हैं। पर यदि आप कोई कर्म (हाथ से तो) कर रहे हो श्रीर श्रापका मन उसमें लगा नहीं है, तो श्राप वास्तव में कर्म नहीं कर रहे । आप श्वास लेते हो, किन्तु ऋध्यात्म-शास्त्रानुसार श्वास लेना कोई कर्म नहां है, खून आपकी नाड़ियों में वह रहा है, यह एक हिसाव से तो कर्म है, किन्तु अध्यात्म-शास्त्रज्ञों के मतानुसार ्यह कर्म नहीं । श्रध्यात्म-शास्त्रवेत्ता ''कर्म वास्तव में क्या हैं" इसके दिखलाने के लिये एक वड़े मार्के का उदाहरण देते हैं: -

एक पुराना अभ्यासपुर योगा था, जो सेनिक शिचा सीर ज्यायह में इतना प्रभयना था कि दिन (क्रवायह) की क्रियाएँ इसके लिये स्वाभाषिक हो गई थीं, प्रधान वह क्रयायह की कियार यन्त्रवन् किया करता था । तृष्व का भारी मटका या इल और साथ बस्तुएँ तथ में लिये यह (बोहा) बाजार में जा रहा या । यह ऋपने हाथों रे या कन्धों पर भारी घड़ा (तूध का) ले जा रहा था। वहाँ बाजार में एक पवका मसखरा स्त्रा पहुँचा। उसने चाहा कि यह सब दूध या छन्य खादिष्ट खाब पदार्थ (उसके हाथ वा कंधे पर से) नाली (मोरी) में गिर जायाँ। श्रतः वह मनुष्य एक किनारे न्वटा हो गया श्रीर वहीं बोल डठा "झटेनशन ! म्रटेनशन !! : attention, attention सावधान हो! सावधान हो !!)।" छापको माल्स है कि जव हम अटेनशन (attention कहते हैं, तो हाथों को नीचे गिर जाना चाहिये । इस अभ्यासवृद्ध योद्धा ने ज्यों है। कि वह शब्द 'खटेनशन' मुना स्यो ही उसके हाथ स्वतः नीचे गिर गये। श्रीर सब दूध या अन्य वस्तुए । जो उसके पास थीं नाली में गिर गईं। बाजार में मर्भा नहीं और दुकानदार इससे पेट भर हुँसे । श्राप हेन्द्रते हैं कि इव उसने इन्हेनशन (सावधान) का शब्द सुनाः तःकाल उसने हाथ तीचे गिरा दिये । परन्तु श्राध्यातम-शास्त्र के कथनात्सार उसने वृद्ध काम नहीं किया ऐसा कम तो कह्लाना है। स्वाभाविक कर्म कोई कम नहीं है. क्योंक मन इसमें नहीं लगा होता। अब राम आपसे वेदल पृहराहे कि हिपा करके वताह्ये।

अय राम आपने वदल पृष्टता हा कि ' हुपा करक बताईया आप चौबीस पंटे में कितना 'काम' करने हैं ?" जब आप खाना खाते हैं। तो बया यह 'कर्म' है ? नहीं। जब आप और बीसियों खाते हैं। तो बया यह 'कर्म' है ? नहीं। जब आप और बीसियों काम करते हैं। तो जिस अथ में अध्यात्म-शास्त्र कर्म की परिभाषा करता है। खाप उसी अथ में बया 'कर्म' करते हैं ? जब अ









उसे नहीं करते होते । अक्सर अब आपका तन तो गिरजाबुर में होना है, जब आप (मुँह से तो) प्रार्थना करते होते हैं, जब श्राप (कानों से तो) व्याख्यान सुनते होते हैं, पर (वास्तव में) न त्र्याप व्याख्यान सुनते हैं, न प्रार्थना करते हैं और न गिरजे में ही रहते हैं। अक्सर ऐसा होता है कि त्र्याप शरीर से तो बाजार में हैं, त्र्याप शरीर से तो टहल रहे हैं। पर (चित्त से) वास्तव में आप ईश्वर से युक्त हो रहे हैं। आपका मन ईश्वर के साथ होता है। अक्सर ऐसा हुआ है कि जो लोग दुष्कर्म और पाप (अपरायों) के अपराधी ठहराये गये, वे वास्तव में धार्मिक (ईश्वर-भक्त) श्रोर पवित्रात्मा थे, उनका मन ईश्वर से तन्मय था। श्रक्सर ऐसा होता है कि जो लोग पवित्रात्मा श्रार शुद्ध (साधु) सममे जाते हैं, उनके मन मलीन होते हैं। अक्सर हम दुष्टों की उन्नति होते देखते हैं । वेदान्त कहता है कि उन लोगों की यह दुष्टता नहीं है जो उनकी उन्नति वा वृद्धि कराती है, किन्तु वे चित्त से ईश्वर में वास किये होते हैं। इसिलये लोगो के केवल बाह्य कमों से आप कोई परिगाम मत निकालें । यदि कोई मनुष्य चोरी वा खून करता है, तो उसे आपको घृणा की हाँ से नहीं देखना चाहिये।

राम अब आपको भारतवर्ष के एक बड़ नामी चार की श्रपने मुख से कही कहानी सुनाता है । राम उस समय निरा बच्चा था, और उसने उस नामी चोर को अपने मित्रों ने यह कहानी कहते मुना था, किन्तु राम उस माक्के पर वहाँ स्वयं मौजूद था, राम उस समय ऋपने प्राप्त के जंगल ने था, वह े तब बहुत छोटा साथा। छोटे लड़के को कुछ न समफकर चोर इस छोटे वालक की मौजूदगी में (अपने मित्र से कहने में)

न छिपाया, श्रीर खुले दिल में सारी कहानी कह डाली।

इस कहानी से आप पर इस सारे विषय का रहत्य सुल जायगा। जिस प्रकार एक बार वह धनिक के घर में घुसा और वहाँ से जवाहिरात चुराकर भागा था, उसे उस चोर ने वर्णन किया। चोर ने कहा कि 'जो जवाहिरात उस धनिक ने हाल ही में लाकर अपने घर में रक्खे थे, उसका किसी प्रकार से मुक्को पता लग गया। उसके घर में में घुसने को तो चला। किन्तु इसका कोई उपाय वा तरीका न सूक्त पड़ा। बार-बार सोचने पर मैंने राह् निकाल ली। मैंने देखा कि घर के पास ही एक वड़ा भारी वृत्त है, श्रीर वह वृत्त घर की तीसरी मंजिल की खिड़की के ठीक सामने हैं, तब मैंने रात की खेंधेरे के समय उस पेड़ पर एक मूला डालने की युक्ति सोची, उस पेड़ की चोटी पर एक रत्सा हाला, और एक प्रकार का मृत्ला बना लिया, और उस भूले पर में भूलने लगा, इस प्रकार उस गरम देश में में इन्द्र काल तक लगानार भूलता गया। गरमी की ऋतु थी। श्रीर यह मुक्ते माल्स था कि घर के लोग पाँचवीं छत पर सोये हुए हैं। वे तीसरी छन पर नहीं हैं। जब मृत्ला (मृत्नते मृत्लते) खिड्की के पास पहुँचा को सैने चटाक एक लाव मारी फिर दूसरी लात मारी और तीमरी लात पर सिड्की के किवाड़ पट में खुल गये। इस प्रकार सातवे आठवे प्रयप्त के बाद जब सिड्झी के किवाइ स्टलकर पीट्री कर रोबे तब में घर में जा हुना। मरे पास वहाँ कहा रहते हैं, मैंने उन रस्तों की नीचे लटकाकर ऋपने दो या तीन स्टाप्यों को उपर तीच लिया। तब में अपने चिन से सोचने तरा विकती जवाहरात के मिलने की संभावना हो सकरी केंद्र मन को एकाम्म कियाः उस एकाम्रता में मेरा मन निताल ।तमन्त हो एया । उस समय मैंने मन में कहा कि लोग अपने जवाहरात ऐसी जरह पर नहीं रखने जहां चोरों को । जपने मिल व स्मावना हो सके (कोर जवाहिरात्

ऐसे स्थान पर रखते हैं, जहाँ से दूनरों को उन्हें पा सकने की किब्बिन् सम्भावना न हो सके । वहाँ मैं एक ऐसी जगह स्रोदने लगा, जहाँ उनके पा लेने की किञ्चित संभावना थी। जवाहिरात जमीन में गड़े थे। उन दिनों भारतवर्ष में यही तरीका था और कुछ लोग आजकन भी वहाँ ऐसा ही करते हैं, परंतु अब बहुत अपने रूपये को बंकों में रखने लग पड़े हैं। लोग अपने धन को भूमि में गाड़े रखते थे। मैंने वह द्रव्य पा लिया और तब मैंने सीढ़ियों से एक त्र्यायाज सुनी।" उस समय ऋपने मन की हालन का वर्णन जो चोर ने किया, वह राम भूल नहीं सकता। चोर ने कहा कि 'जब में और मेरे साथियों ने धन पाते ही त्र्यावाज सुनी, तो उस त्र्यावाज ने हमारे शरीर में एक कॅपकॅपी सी डाल दी। हम लोगों की नारी देह काँपती, थरथराती, भयभीत होती चूर-चूर हुई जाती थीः हम लोग सिर से पैर तक थरथरा रहे थे। तब मैंने कहा कि (जान पड़ता है। शायद यह मृत्यु की घड़ी है। हमने अपने आपको मृतवत ्रिपायाः त्रीर उस समय हम कह रहे थे कि स्रव एक नन्हां सा ्रमुसा त्राकर भी हमारा खानमा कर सकता है।" वह त्रावाज वास्तव में केवल मुमों की आवाजधी। तब चौर ने कहा कि "मैं उस समय पछनाया ईश्वर से प्रार्थना की खीर अपने शरीर का ध्यान छोड़ ईरवर के आगे निनान्त आत्म-समर्पण कर दिया । तब मैंने आक्षा-समर्पण कियाः पश्चानाप कर ईश्वर में ज्ञा-प्रार्थना की. और उस समय में समाधि-अवस्था मे था-ुत्त्वहाँ मन मन नहीं था जहाँ मब न्वार्थ दूर हो ग्ये थे। ते समय में और मेरे साथी एक अति विचित्र और बहुत बार्चर्य-जनक मानसिक स्थिति में थे। उस समय मैंने प्रार्थना ृ कि हि भगवान ! मेरी रज्ञा करो मैं योगी हो जाऊँगा में सैन्यास ले लुँगा। मैं साधु वन जाऊँगा। मैं ऋपना सारा जीवन

प्तापकी सेवा में आर्थश कर दूँगा है प्रभो ! मुक्ते वचाओं मेर्थ रहा करों ! नह चही ही असुकता-पूर्ण मानिक प्रार्थना थी बड़ी ही सक्त्यी विनय थी जो मेरे हृदय की तह खोर प्रस्त करण से निकल रही थी। वह प्रार्थना मेरे सारे तन के भीत

से वा रोम-रोग के भीतर वे गुँज रही थी। में उस समय ईश्य ध्यान में निमन्न था। फल क्यों हुआ १ सब आवाज ठएडी प गई, अर्थान् सब शब्द बन्द हो गया, और में और मेरे साथी घ में साक चाहिर, निकल छाये, ग्दौर घर से सकुरालं बाहिर छ गये।" अब ध्यान दीलिये. बात कमों से ही किसी के विषय विचार मत स्थिर कीजियेः मनुष्य वह नहीं है, जो उसके वा कर्म हैं. मनुष्य वह है, जो उसके भीतर विचार हैं। यह सम्भ है कि वेर्या के घर में रहनेवाला मनुष्य भी भीतर से सा हो। हम जानते हैं कि भगवान युद्ध एक वेश्या के घर में र थे. किन्तु वे निष्पाप थे। हम जानते हैं कि हजरत ईर मेरीमैंग्डलेन के घर रहे थे, जिस स्त्री को लोग पत्थर से मार जा रहे थे, किन्तु हजरत ईसा ईश्वर थे। हमें माल्स हैं भारत में भी काइन्ट के समान लोक-उद्धारक बहुत से हुए हैं, निन्दित जनो के साध रहे थेः पर वास्तव में वे ईश्वर-स्वरू थे। खाइमी को उसकी संगत से मत जानिये, किसी मतुः पर केवल उसके कमों से ही अपना निर्णय मत दीजिये। कि पर अपना विचार स्थिर (शीव) मत करें। मनुष्य वह है, उसके विचार हैं। अक्सर जेल में रहनेवाले लोग स्वर्ग रहते हैं। बनियन (Bantan) ने जेल में ही अपनी पुस्त (Pdgram of Progress) लिखीः मिल्टन (milton) इ जेल में था और अन्धा हो नया था तय उसकी महती रच निक्ली: हेनीयल ही फ्रो (Daniel De Foe) ने जेल में केरिज्यन कसी (Robinson Crusoc) लिखाः सर ए रेली (Sir Walter Raleigh) ने जेल में ही अपने संसार के इतिहास (The History of the World) की रचना की। हम चाहते हैं कि हमारा अड़ोस-पड़ोस अमुक-अमुक प्रकार का हो, पर हम रहते वहाँ हैं, जहाँ हमारे ख्याल रहते हैं। अव हम मृत्यु अर्थात् जीवन में मृत्यु की कथा की व्याख्या करते हैं। ध्यान से सुनिये। राम कहता है कि आपको स्फलता त्र्यापकी सबसे त्रमेदता का फल-खरूप प्राप्त होती है। सफलता सदा आपके सद्गुर्णों का फल है, परमात्मा में लीन ऋौर निमग्न होने का परिग्णाम है। यही वरावर होता है। चोर भी जब उस अबस्था को प्राप्त हुआ, तो सफल हुआ। (इस प्रकार) त्र्याप लोग भी सफल होंगे। इस चोर की सफलता उसकी वास्तविक, मची और हार्दिक विनय-सम्पन्न स्थिति (वृत्ति) का परिगाम थी जिम स्थिति में कि वह उस समय था। परमात्मदेव वा सर्वरूप में लीन व निमग्न होने से ्डमने जान लिया था कि धन कहाँ है। चोर सफल हुआ। पर चोर की सफलना भी वेदान्त को ज्यवहार में लाने के कारण से हुई इससे प्रत्येक मनुष्य की सफलता सदा उसी कारण से होती है। हम लोग देखन हैं कि वह चोर था। उसने चोरी की। जो बहुत बुरा था। क्योंकि इसरों को जुटना पाप है, दूसरों को लूटना निःसन्देह समय पर उसे दण्ड देगा, उसके अपर श्राफन लायगाः अंग जो धन कि वह चोरी मे पाना है, और िसो पाप कर्म कि वह करता है, जो आध्यात्मिक समता (harmony) कि वह नोइना है। वह सब के सब अबस्य उस नाश करेंगे; परन्तु हम देखते हैं कि चोर की भी सफलता ्र रूप के साथ एकता त्रीर अभेदता तथा परमात्मदेव में उस लीनता का ही परिग्णाम है। अर्थान अपने शरीर-भाव के स्थागने का, चगा भर के लिये शरीर से ऊपर उठने का,

ह्थेली पर पेंसिल सीधी खड़ी की), यह कभी न हीं ठहरेगी (खड़ी रहेगी), एक आध पल यह शायद ठहरी रहे (खड़ी रह जाय), नहीं तो पवन का हरएक भकोरा इसको नीचे गिरा देगा। इसे अस्थिर-स्थिति कहते हैं। पेंसिल को उस प्रकार रक्लो (यहाँ पर स्वामीजी ने पेंसिल को अपनी अंगुलियों के बीच पकड़ा और पैंडूलम (Pendulum) के समान लटकाए रक्खा), यह ठहरी हुई वा स्थिर है; किंतु पेंंडूलम (लटकती हुई) होने के कारण यह कुछ काल तक हिलती रहेगी, फिर कुछ काल के बाद ठहर जायगी। स्थिरता चाहे भंग हो जाय, किन्तु पुनः स्थिरता प्राप्त हो सकती है। पर उस पूर्व दशा में स्थिरता पुनः प्राप्त हो नहीं सकती। किन्तु इसके सिवा तीसरी स्थिति एक और होती है। पेंसिल को इस प्रकार रक्खो (यहाँ स्वामीजी ने पेंसिल कीं मेज पर रख दिया), यह स्थिर है। इसे उस प्रकार से (टेवल पर) रक्को, यह स्थिर है। यहाँ (देवल पर) जहाँ कहीं तुम पेंसिल को रक्खो, यह भ्धिर है। यह सदा स्थिरता की दशा में 💃। ठीक ऐसे ही कुछ लोग हैं, जिनके चित्त लगानार चुनित ्रीर हर वक विचिन्न हैं, वे कभी स्थिर नहीं हो सकते, कभी र्सथर दशा में नहीं रह सकते। बाह्य स्थित उनको स्थिर कर देती 🕏 वे पुनः विचिप्त (र्थान्थर) हो जाते हैं। कछ और लोग हैं। जिनके चित्त प्रायः शान्तः । स्थर (एकाप वा ध्यानावस्थित) च्यार निश्चल रहने हैं, पर एक बार विजिन्न होने पर पंटों बहुत देर तक जुमित वा स्रोमन स्टेन हैं। स्रोर इस जगन में त से लोग इसी म्बभाव के हैं। ज्याप वाजार में टहल रहे ^{हैं।} - श्रादमी स्राता के स्रापन हाथ कियाता के स्रशीत सम करता है, और कुछ ऐसे यचन कह जाना । जो स्तृतिमय पिय नहीं हैं। किन्तु कटान यंग (नन्ता मरे है। वह नी ुजाता है, किन्तु अपना काम कर जाता 🗈 श्रीर रिमाक

पास करके चल यनता है। उस विज्ञेष का प्रभाव घंटों रहता है। विल्क कभी-कभी तो दिनों, हफतों, महीनों छोर वर्षों तक वना रहता है। उस रिमार्क (वचन) का असर बना रहता है। असे प्रमाक प्रमाद होने एक बार विज्ञिप्त होने पर वरावर हिले जाता छोर इधर-उधर भटकता किरता है। और गन की यह अवस्था। मन की यह डांबाडोल स्थित आपका जीवन नष्ट कर देती है। और आपका सारा समय हर लेती है। अब जरा ध्यान दीजिये। कामों या वातों ने तो वहुत समय न लिया। कर्म तो प्रथम किया वा चेष्ठा थी। जो नन को दी गई। किन्तु उसके उत्तर-फल, या यों कहो कि आपके अपने मन की डांबाडोल स्थित ही आपके जीवन को हर लेती है। यदि आप मन की वे विचित्र चंत्रलना रोक सको। यदि आप भीतर के विज्ञेष पर विज्ञ्य पा नको। यदि आप मन की लगानार भीतर के विज्ञेष पर विज्ञ्य पा नको। यदि आप मन की करानार भीतर के विज्ञेष पर विज्ञ्य पा नको। यदि आप हम मन को नका। उत्तरा प्रमुक्त कर सको। यदि आप हम मन को नको। वा उन्तरा प्रमुक्त कर सको। यदि आप हम मन को नको। वा उन्तरा प्रमुक्त कर सको। यदि आप हम मन को

परिस्थित से विचित्र नहीं होते, चाहे कोई ही बात उनके सामने हो। वे शान्त और निश्चत रहते हैं। वाहे घूरते हुए सागर की ज्ञलती हुई लहरों (तरंगों) में उन्हें रखे हो, वे वैसे के वैसे रहेंगे; चाहे उन्हें युद्ध में रख दो, तब भी वैसे के वैसे ही रहेंगे। श्राप उनके मित्र हैं, श्राज उनसे श्राप वातचीत करें। और उन्हें सर्व प्रकार की वात कह डालें (अर्थात कटान ना चपालंग लगा लें), वे उनका प्रत्युत्तर नहीं देंगे। जिस चण श्राप उनसे श्रलग होते हैं, उनका चित्त पूर्ववत वैसा का वैसा ही शुद्ध, पवित्र श्रीर हरा-भरा है। एक निरासक वा सुक पुरुष के साथ आप हजारों वर्ष रहें और चले जाय, इससे आप उनके चित्त में किञ्चित् वित्तेप न डाल सकेंगे। वे ठीक दर्पणवत् होते हैं, जैसे दर्पण आपका मुखड़ा आपको वापिस दिखलाता है। स्त्राप जानते हैं कि दर्पण स्त्रापके मुख का ठीक-ठीक चित्र तो नहीं खींचता। यदि कुंडल आप के बायें कान में है, तो दर्पण में दायीं खोर के कान में आप े पाएँगे। इसी प्रकार दायाँ वायाँ हो जाता है वायाँ दायाँ ात है। आप सैकड़ों वर्ष दर्पण के सामने रहें, दर्पण सैकड़ों विर्पतक आपको वसा हो दशाता रहेगा। दर्पण को अलग कर हें, दर्पण तब भी बैसा का बैसा ही हैं; ऐसा ही ज्ञान-वान मुक्त पुरुष का हान है। वह ऐसा है, जिस पर वाहिर के दप्रण अपना चिह्न नहां छोड़ सकते (अर्थात् उसे दूपित नहीं न्त्) जिसको कोई भी दूषित वा कलङ्कित नहीं कर् ्रीर जो नित्य म्वतंत्र वा असंग रहता है। आप आयें ्रे सारा समय उमकी म्तृति करके चले जायँ, तो ंपीछे उसका चिन उम स्तुति की जुगाली नहीं िं। (अर्थात चित्र उस स्तुति को पुनः-पुनः ध्यान् में

क्रुलता नहीं रहेगा)। आप आयें और चाहे गुगारोप

विवेचक दृष्टि से छोर चाहे छिद्रान्वेपी वा कुटिल दृष्टि से उस पर दोष लगा जायें: छापके चले जाने के बाद वह छाप के इस दोष-निह्मण वा छिद्रान्वेपण को बार-बार ध्यान में नहीं लावेगा।

श्रसंग, निःसंग हुञा वह श्रपने श्रात्मा में निश्चय रखता है। अब राम कहता है कि चिंद आप वेदान्त को ठीक-ठीक पढ़ें श्रीर उसकी शिक्ता को नित्य श्रपने सम्मुख रक्लें, प्रस्त या अन्य कुछ चिह्नों द्वारा अपने भीतर के बोध के साथ, अपने भीतरी विचारों से ठीक और में लग कर आप अपने ईश्वरत्व का ध्यान करें, श्रीर नित्य श्रपने सत्य स्वरूप को सन्मुख रक्तों, तो श्रापका चित्त यदि वह शुरू से श्रस्थिर वा चंचल स्वभाव (unstable equilibrium) है, तो स्थिर स्वभाव (stable equilibrium) हो जायना, न्त्रौर यदि वह (शुरू से) न्धिर व एकाव्र स्वभाव है। तो वह दर्जे य दर्जे समता (गर्याराचा equility ...) की प्राप्त कर लेगा; श्रीर यह वेदान्त यह संचाई श्रापको हरदम श्रपने सन्मुख रखनी होती। इस इवस्था में नित्य रहने के लिये राम श्रव आपको कुछ दाहिर के साधन व सहकारी उपाय बताता है। इसे आजमाओं और आप देखेंगे कि यदाप लोग इसका ... उपवेश नहीं करते तथापि यह ने एक विचित्र उपवेश । स्त्राप यह देखेरे कि उब लोग राम के राम आकर बातचीत करते हैं, कई समय उसरों में व्हडान्वेषरा । कुटिल प्रीप दौष-हाँछ से हिहास्वेपण इसके चले जाते हैं। जान तहीं सम हैसे अपने आपको उनके विचारी वा उपोधी से बचाये रामता है? इसमें नाना रास्ते हैं एक सम्ता यह र के स्थाप यह बोटा पुस्तक को स्वयंत सामने रेक्ने हैं। यह एक सहत पुस्तक हैं। प्रमुक्त एक नेमें मनुष्य द्वारा किया गई है। जिसकी बस् दा मिलता नहीं है। यह मनुष्य प्रांमद नहीं है। यह

सारतवा में पूजा नहीं जाता। गर् पुरतक * शीम हुगवहीता के समान प्रसिद्ध गर्दी है। यह पीमगवान फुल्म से नहीं लिसी गर्दे। यह उस मनुष्य से लिखी गई, जो नाम और कीर्ति से अपरिनित या । किन्तु यह एक मनुष्य है, जो प्यापको समन्य काइत्स्त् क्रज्या- तुद्र-सारे के सारे दे देवा है। सम इस पुस्तक को लेवा है, स्थाप जानते हैं, यह संस्कृत में है, स्वीर जब इस पुस्तक में से एक पर राम पड़ता है, तो जन्माजन्म के कर्नक को तथा समल हृदयनाल को धीने खीर साफ करने में यह काफी होना है। यह तत्वाण राम को ह्पेनिमाइ (ecstasy, श्रत्यन्वानन्द) की अवस्था में टाल देता है, यह छोटी सी पुस्तक, इस पुस्तक का एक पर राम के हृदय को हिला देता है और उने उन्नत कर उसमें ईश्वरत्व का विकास कर देता है। यह पुन्तक नीच स्वभाव की नाश कर देती है, खीर तरक्ण माया के पर्दे को फाड़ देती है। इसलिये राम आपको कहता है कि आप भी इसी प्रकार की पुस्तक अपने पास रक्त्वें आप अपने पास कुछ ऐसे स्तोब रक्त्वें कि जो आपको वा आपके विवारों को उन्नत कर सकें, आपमें रूह फूँक सकें, अर्थान आपको प्रदोधन कर सकें; आप अपने पास कुछ ऐसे भजन रक्त्यें, जो आपको तत्काल प्रवोधन कर सकें : श्राप श्रपने पास ऐसी कविता रक्तें जो श्रापको चौट लगावें वा ईश्वर की ओर प्रेरें. आप अपने पास बाइबिल, सर्मन स्रोन दी मोंट (Samor on the Mount) स्क्लें। स्राप अपने प्रिय (रुचिकर) लेखकों के पदों (फिकरों) वा वचनों पर निशान लगायें, ऐसे पड़ों (फिकरों) पर कि जो आपमें रूह फूँक सकें, या ऐसी कोई बान पेता कर दें कि जो आपके विचारों को ऊँचा करे। श्राप श्रपने पास एक छोटी नोटबुक रक्खें, जिसमें

ऐसा प्रतीत होता है कि उस समा स्वामां ती के पास अवधूत गीता थी।

आप ऐसे वचनों को जमा कर रक्खें कि जो आपको उत्तेजित करें श्रापको उत्पर उठावें, जो जापको प्रार्थना वा उपासना-माव से भर दें। आप इसी पुस्तक को रख लें, आप प्रसन्नता से इस पुस्तक के अन्त में यह कविता लिख लें। "Oh, brimful is my cup of joy"—"ओह! मेरे हर्ष का प्याला जपर तक पूर्ण है," यह कविता या ऐसी कोई वात जो सन्मार्ग में आपको उत्तेजित वा उत्साहित करे आप इसमें लिख लें। इसे आप हर वक्त ठीक हाथ तले (समीप) रक्त्वें, और जब आप मित्रों से मिलकर हटें, या जब छाप भिन्न-स्वभाव संगत को छोड़ें, तब अपने मन को भटकने, विदिप्त वा सारा काल म्रमित श्रवस्था में रहने देने के स्थान पर आप तत्काल उस रूइ फूँकनेवाले, उत्तेजित वा प्रवोधन करनेवाले पद को ले लें, श्रोर उससे श्रपने चित्त को स्थिर वा सावधान करें।

श्रव आप देखें कि राम ने आपको कारण अर्थान् मन का साधारण रोग वता दिया है। राम ने साधारण रीति से मानुपी श्रान्यात्मक रोग को श्रापके सामने रख दिया है। साधारण रोग (मनका) यह चळ्ळा स्वभाव है। और राम ने आपको वता दिया है कि कैसे हम मन को स्थिर व अवल रख सकते हैं।

एम इस विषय को छद दूसरे समय शुरू करेंगे।

£3. !!

25 III

करते, वहुत-सी वातों को हम यों ही मान लेते हैं, हम अपने लिये सोचने का काम वाद्य शक्तियों के भरोसे छोड़ते हैं।"

हम लोग भीतर वैठकर नहीं देखते, अपने वल पर भरोसा नहीं रखते; दूसरे जो कुछ कह देते हैं, उसे ही खयं-सिद्ध मान लेते हैं । मुहम्मद, युद्ध छोर कृष्ण में विश्वास रखने के श्रतिरिक्त हम लोगों ने देहिसाव अपूज्य देवताओं को गढ़ रक्ला है, जिनके आगे हम सिर मुकाते हैं। एक वालक ही यदि हमारे आचरण की टीका-टिप्पणी कर डालता है तो यस, उतना ही हमारी शान्ति को भंग करने के लिये, हमें क्लेश पहुँचाने के लिये काफ़ी है। हम दूसरों के विचारों, दूसरों की आलोचनाओं की हद से ज्यादा परवाह करते हैं, श्रीर उन की कृपा संपादन करने में देहिसाव समय चरवाद करते हैं। अपने आपको छड़ोस-पड़ोस के लोगों की ही आँखों से देखना, श्रपने सन्चे न्वरूप पर स्वयं ध्यान न देना वल्कि दुसरों की हो होए से अपना निरीक्त करना यह जो भाव है, यही इमारे सार इन्यों का कारण है। इसरों की हर्ष्ट से श्रपने की देखने की जो जादन हैं। उसे ही वृथा अभिमान ज्ञानम-रलाया (५ करने हैं। हम इसरो की नजरों में र्छात भने जेचना चारते हैं। यहां समाज का सामाजिक दौष है, ख़ाँ, सब प्रसंपा प्रशन खबराग है।

(त्रास्त्राम व एव प्राम में एवं प्राप्त) पाएक (साम प्राप्त) रहता था नेन यो अमेरिक से अर्थन सहाते है उसर की जन द्रानान वारीत है। बैसे हा सफल्यां संस्था व सहासे में लाग व्यवस्थार-दोस्ता वे साथ वरहत्वरह का गुण्म रहश (सहार प्याप्टरोहे उसकाम व इसका प्रदेश ने इस नीम कार से में बाक उद्यान वर खन्छ । देशसा अक्रमा । इस कर सहा प उसे बार शशह त्यं धर शक्त द्वा ताता होते हैं।

अभिगानी धौर 'कैरानेवल' लोग ऐसी ही विकट धार्सभव धार्ती को पर रहे हैं। न नो वे रापने नेबों से देखते हैं और न अपने दिमास से सोचने हैं। वहाँ ही देन्विन, आपका अपना आत्मा, श्रापका सत्य स्वरूप, प्रयासों का प्रकास, निरंजन, परमपवित्र, खर्गी का स्वर्ग, छापके भीतर विश्वमान है। छापका छपना आपः खापका खात्मा सर्वता जीवित, खजर, खमर, नित्य चपस्थित है, फिर भी खाप रां-रोकर खाँसू द्वारते हुये कहते हो, "श्ररे, हमें मुख फब प्राप्त होगा ?" सौर देवताओं का स्नाबाहन करते हो कि वे खाकर तुम्हें विपत्ति से उवार दें। आप देवताओं के खाने प्रिएपात होते हो, नीच प्रकृति (snecking habits) का श्रवलंबन करते हो, और स्वयं श्रपने को तुच्छ सममते हो, क्योंकि अमुक लेखक, श्रमुक उपदेशक वा महात्मा अपने को पापी कह गया है, छोर वह हमें कीड़े कहकर पुकारता है, इसलिये हमें भी वहीं करना चाहिये इसलिये अपने को मतक सममते में ही हमारी मुक्ति है। इसी तरीक़े से लोग सब चीजो पर ट्रांप्ट डानते हैं: पर इससे काम चलने का नहीं। श्रपने निज-जीवन का अनुभव करने लग जाओ। श्रपने निजातमा को भान करना आरम्भ कर दो। इस नशे की हालत को विदा करों कि जो आपको अपनी मृत्यु पर कला रहा है। अपने पैरा पर आप खड़ हो जाओं, चाहे आप होटे हो बा बंडे. चाहे आप उच पर पर हो वा नीच पर पर इसकी तिक परवाह न करो। अपनी प्रभुता का, अपनी दिव्यता का साज्ञातकार करो । चाहे कोई हो। उसकी श्रोर निःशंक हिं से देखी। हटो मन । अपने आपको औरो की हिं से अवजोकन मन करो, बल्क अपने आप में देखी। आपका अपना आप आपको वारंवार यह उपदेश देगा कि ''नारे संसार में सबसे महान् (जातमा) हो।"

सकता -

घर के दूसरे कोने में रक्त्वी जाय, तो उसे अँधेरे में जब वहाँ जाना होना, तब वह वहाँ चोट खायगा । जब तक श्रंधकार है, तब वक हाय, पाँव, गईन वा सिर अवश्य दूटेगा, अवश्य ही कभी सिर दीवाल से टकरा उठेगा, यह बचाया जा नहीं सकता। यदि घर में सिर्फ चिरारा जला दो, तो फिर आपको परेशान होने की चरुरत नहीं। जो जहाँ है, उसे वही रहने दो, श्राप एक जगह से दूसरी जगह विना चोट खाये जा सकते हैं। संसार की भी यही दशा है। यदि आप अपने छ खों का अन्त करना चाहें, तो आपको इसके लिये अपनी वास परिस्थिति पर वा श्रपने सामाजिक पद (चोहदे) के समाधान (adjustment) पर भरोसा नहीं करना चाहिये, वरन अन्तिस्थित सूर्य के समीकरण के उपाय पर भरोसा रखना पाहिये। सब कोई मानो फरनीचर (furniture, सामान) को यहाँ से वहाँ हटा कर, वा सांसारिक पदार्थों को इधर से उधर फरेकर, द्रव्य इकट्ठा कर, वा बड़े-बड़े महल वनवाकर, अथवा दूसरों की चमीन मोल लेकर. दुःख से पीछा छुड़ाना चाहते हैं। अपनी परिस्थित के मुधारने वा चीजों को इस तरह वा उस तरह सजाने से आप कभी पृथ्य से नहीं यच सकते। केवल अपने घर में दोपक जलाने में, प्रकाश प्रकाशित करने से, केवल अपने हुएय को चेपेरी कोटरी में झान का प्रवेश करने से ही दुम्य ब्रुट सक्चा हटाया जा सकता चीर पर क्या जा सकता है। खराबार पर रोने के पर की स्थापको हात नहीं परेचा



यह कैसे संभव है कि संसार के महाभयास्पद (Bug bears. हैविवाटे) आप पर कोई प्रभाव डाज सकें ?

जय इन महान् तारागणों के सामने यह पृथ्वी शून्यता को प्राप्त हो जाती है, तय उस सूच्यों के सूर्य्य, प्रकाशों के प्रकाश की उपस्थिति में — भेरे सत्य स्वरूप आत्मा के सन्मुख इन विचारी लोकिक वाधाओं और चिन्ताओं को. भला. कैसे कुछ

निनती हो सकती है ? तत्त्व का साचात्कार करो, उसका अनुभव करो, उसे अपना जीवन वनाओं, और जब आप उसकी पराकाष्टा (पूर्व सत्ता) का अनुभव कर लोगे, तब कोई भी, कुछ भी, आप को विचलित नहीं कर सकेगा। चाहे करोड़ों सूच्यों का प्रलय हो जाय, श्रमित

चन्द्रमा भले ही गल कर नष्ट हो जायँ, पर अनुभवी ज्ञानी पुरुष मेह की तरह अटल वा अचल रहता है। उसे क्या हानि हो

सकती है ? भला संतार में ऐसा है ही क्या जो उसे कष्ट दे सके !

अहो. आर्चर्य ! महास्रारचर्य !! ऐसी महान. ऐसी स्रसीन

अवर्णनीय महिमा-पूर्ण आपका सत्य स्वरूप है और (फिर म लोग) इसे भूल जाते हैं।

वह सूर्य, वह समन्त सूर्य, स्रांको पर के एक होटे से पर से हिपा है। और परदा खाँखों के इतना निकट है कि सा संसार इससे हका हुन्त्रा है। ऐसा तेजोमय इब्ब्यल तस्य श्री

चाहते हैं, तो श्रापको उन इच्छाञ्चों को त्यागना चाहिये, उनसे परे हो जाना चाहिये। पर उस । मजनूँ। विचारे को यह रहत्य मालूम नहीं था। फिर भी संसार भर में वह श्रादर्श प्रेमी था। कहते हैं कि भारी निराशा के कारण उसका दिमारा विगड़ गया, वह उन्मत्त हो गया। श्रीर विचारा यह पागल शाहजादा श्रपने माता-पिता, घर-द्वार को छोड़ वन-वन में भटकने लगा। यदि वह कोई गुलाव का फूल देखता, तो उसे श्रपनी प्रिया समम्म, उसके पास दोड़ जाता, इसी तरह चह (८५,१८००) सर बृल् को माशूका प्रिया) समम्म प्यार करता। हरिन को देख वह उसे श्रपनी माशूका समम्मता श्रीर उसके पास जाता। ऐसा ही उसका भाव या: वह हर जगह उसे देखता श्रीर इन सुद्र वन्तुश्रो को श्रपनी माशूका के रूप में परिस्तत कर डालता। फिन्तु उपके प्रम का विषय भौतिक था, इसी से उसे एतना कप्र भोगना पड़ा।

राम कहता है, प्रेम करो और मजन की तरह प्रेम करो, किन्तु हरवर को, श्रात्मा को, उस परमात्मदेव को श्रपना प्रेम-पात्र बनाओ। क्या भारा संसार ही सुरा के पीछ पात्र वा उन्मत्त नहीं हो नहां है " और मुख 'हरवर' का ही पर्याव-वाचव राज्द है। मजनूँ विचारा जानता ही न श्रा कि वर्षों परम सुख दा हरवर मजता है। वसो में, पहा-पंत्रों में जिल करता सुख दा हरवर मजता है। वसो में, पहा-पंत्रों में जिल करता



दुःख में ईरवर

प्रम रहना चाहिये सपने सात्मा को सवस्य त्यार करना चाहिये उसे हो सपना प्रेमपात्र समम्तना चाहिए। उसे त्यार करो सनुभव करो मलनूँ को तरह सनुभव करो तािक सौर कोई वस्तु आपके पास न साने पावे जब तक कि वह प्रियतम सत्य स्वरूप के ही रूप में उपस्थित न हो। उसमें साप केवल प्रियतम देव को देखों, सौर कुह नहीं। इस पर शायद साप कहो "क्या जरूरत हैं? हम इसे

इत पर शायन साप कहो। "क्या जरूरत है ? हम इते स्वुभव करना नहीं चाहते। हम तो सपने इस नरक में ही सुखी है।" तो राम कहता है। "सम्भव है कि साप सुखी हो। किन्तु पाप का ध्येय वही है। स्रतः सड़क पर पर घतीटते चलने में समय नष्ट करने से क्या लाम ? यहाँ स्वापको साना ही पड़ेगाः पर कीचड़ में चलकर परेशानी तो न उठात्रो। रेल की संची सड़क पकड़ों, विस्ती की गाड़ी। नहीं-नहीं, विमान ले लो। नड़क के किनारे स्वपना वक्त बरवाद मत करो।"

आप प्रतिदिन चपन खड़ोस-पड़ोस का खबलोकन वर्गे.



किनाइयों में जा फैसते हैं, क्योर तब कुछ काल के बाद वे धर्म की सरण में व्याते हैं। कहते भी हैं कि विपत्तियों मनुष्य को धर्ममुख करती हैं (Misfortunes lead to religion)।

इसी तरह आपके दैनिक जीवन में दिन-रात हुआ करती है, प्रत्येक दुःख की राजि के बाद सुख की प्रभात आती है, और प्रत्येक दुःख की दिवस के बाद दुःख की निशा होती है। जब वक आप वाल रूपों में आसिक रक्योंगे, तब तक यह उत्थान और पतन होता ही रहेगा, एक के बाद दूसरे का आना जारी रहेगा। पर इस आन्तरिक उत्थान-पतन का उद्देश्य क्या है १ आपको आपने भीतर के सूर्य्य का अनुभव कराना ही इस आन्तरिक पतनोत्यान का उद्देश्य है।

पृथ्वी पर रात्रि श्रीर दिवस होता है। पर सूर्व्य में सर्वदा दिन ही दिन रहता है। पृथ्वी के घूमने से ही दिवा-रात्रि होती है, पर सूर्व्य में रात होती ही नहीं, वहाँ सदा दिव्य प्रकाश, सदा दिन रहता है।

श्राप पर श्रापत्ति दुःख श्रीर चिन्ताये इसिलये श्राती हैं कि श्राप भीतर के वैकुंठ का श्रनुभव करे। इनका काम श्राप को यही सुभाने का है कि श्राप हृद्यस्य मूख्यों के मर्थ्य प्रकाशों के प्रकाश का श्रनुभव करे। श्रीर जिम ममय श्रापने श्रनुभव कर लिया. उसी समय श्राप सारे सांसारिक रूखन्त्रों से, परिवर्तनों से परे हो गये।

अन्ह्या, हम लोगों को उन्नत करना हो इन दुन्य आह का उद्देश्य केंसे हैं छुत्व का प्रथमागमन हमें यह बतलाता है कि सुख सदा उसी समय मिलता है, जिस समय हम अपने भोतर के आह्मदेश से संहर्णन का निमन्त रहते हैं, अथवा जिस समय हम विश्व के साथ अपनी एकता भाग करते हैं इन प्रकार यह हमें बतलाता हैं कि जय हमारी : बश्व दे साथ । चल से एकता हो



उच्छेदन मत करें, श्रीर न श्राप नाम रूप पर श्रासक्त होकर ईरवर को ही मुला दें। सभी दुःख श्रीर सभी मुख श्रापको वेदान्त का पाठ पड़ाते हैं। जब सब लोग इस पर विश्वास नहीं करते, तो क्या इससे कुछ श्रीर सिद्ध हो जाता है ? नहीं, इससे केवल यही सिद्ध होता है कि इस सत्य को दुनिया नहीं समभ पाती, इसी से दुनिया दुःखी है। सत्य का श्रनुभव श्राप करो, किर श्राप सुखी होंगे।

भारत में मिट्टी के वरतन बनाने के लिये अमेरिका के समान महीन (कला नहीं है। वहाँ कुम्हार चाक पर वरतन गढ़ते हैं। चरणों से एक गहरे भाँडे में मिट्टी गूँधी जाती है। और रोहरी रीति वर्ती जाती है। भीतर की और से किसी वन्तु का आधार देकर बाहर ने उसे अपध्याते हैं। जिसमें मिट्टी को चरतन में घड़ लेते हैं।

मटकने लगा, पर वह न मिला। किसी ने उससे कहा कि हार तो तुम्हारे ही पास है, और वह वड़ा खुश हुन्त्रा। यथार्थ में हार मिला नहीं था, क्योंकि वह तो बराबर वहीं था। वह खोया नहीं था, चिल्क भूल गया था। इसी तरह आपका सच्चा आतमा, ''में हूँ', कल, आज, सदा एकसाँ रहा है, और रहेगा;

श्रात्मा, "में हूँ", कल, श्राज, सदा एकसाँ रहा है, श्रीर रहेगा; किन्तु मन या बुद्धि को केवल श्रद्धान पर विजय पाना है। मन जब विश्वास करता है कि मूल्यवान हार मिल गया, तब इस श्रथ में हम कह सकते हैं कि श्रापको श्रपनी स्वाधीनता फिर मिल गई। श्रापको श्रपना प्यारा हार मिल गया, जो ययार्थ में कमी खोया ही नहीं या।

प्रश्त-क्या हमारी श्रात्मा का न्यक्तित्व निरन्तर यना रहता है ?

उत्तर—आप समम सकते हैं कि इस प्रश्न का उत्तर ''आत्मा'' शब्द के अर्थ पर निर्भर है। यदि रुद्ध (Soul) का अर्थ आत्मा माना जाय तो वह न कभी जन्मा था और न मरेता। जब जन्म और मृत्यु ही नहीं तो निरन्तरता कहाँ से आ सकती है। यदि ''आत्मा'' को आप आने-जानेवाला शरीर या मृदम शरीर समभते हैं। तो जीवन की धारा खिबिन्द्रम वा निरन्तर हैं

दौलत को छोड़कर दूसरी तरह का जीवन क्यों श्रपना रहे हैं । ष्प्रवश्य ही एक तरह का जीवन छोड़कर दूसरी तरह का जीवन कोई भी मनुष्य तव तक नहीं ग्रहण करता, जब तक नये जीवन में पुराने की अपेचा अधिक सुख, अधिक चैन नहीं सममता! इससे स्पष्ट है कि अपने वर्तमान जीवन की अपेचा मेरे पति को उस जीवन में, जिसे वह प्रह्म करनेवाला है, श्रिधिक सुख-चैन होगा।" उसने सोचा घ्यांर श्रपने पति से पूछा, "क्या सांसारिक सम्पत्ति की श्रपेता श्राध्यात्मिक सम्पत्ति में श्रधिक सुख है, श्रथवा इसके विपरीत है ?"

याज्ञवल्क्य ने जवाब दिया, "श्रमीरों की जिन्दगी जो कुछ है सो है, परन्तु उसमें श्रसली सुख, सचा श्रानन्द, वास्तविक स्वाधीनता नहीं है।" तब मैत्रेयी ने कहा, "वह कौन सी चीज है, जिसकी प्राप्ति मनुष्य को स्वतंत्र वना देती है, जिसकी प्राप्ति मनुष्य को लौकिक लोभ श्रीर तृष्णा से मुक्त कर देती

है ? वह जीवन-सुधा मुक्ते वताच्चो, में उसे चाहती हूँ।"

याज्ञवल्क्य का सब धन श्रीर दौलत तो कात्यायनी के हाथ लगा, और मैत्रेयी को उनकी सब आध्यात्मिक सम्पत्ति मिली। वह आध्यात्मिक सम्पत्ति क्या थी ?

न वा घरे पत्युः कामाय पतिः थियो भवत्यात्मनस्तु कामाय पतिः पियो भवति ।

न वा घरे जायाये कामाय जाया प्रिया भवत्यात्मनस्तु कामाय जाया (बृह० उपनिपद्) प्रिया भवति ।

इस पंक्ति के कई अर्थ हैं। मोचमूलर ने इसका कुछ श्रीर चार्य किया है। बहुतेरे हिन्दू एक दूसरा ही चार्य करते हैं। ्र एक अर्थ के अनुसार, "पति के प्रिय होने का कारण यह तें है कि उसमें कुछ गुरए हैं, या उसमें कोई विशेषता है, जो र के योग्य है, उसके प्रिय होने का सबब यह है कि वह

जिल्द तीसरी

सी के द्र्पेण का काम देता है। जिस तरह से हमें शीशे में अपना प्रतिविम्य दिखाई पड़ता है, उसी तरह अपने पति रूपी दर्पण में सी अपने आपको देखती है, और इसीलिये वह पित को प्यार करती है, हसीसे पित उसे प्यारा है।"

दूसरा अर्य यह है कि 'श्वी पति के लिये नहीं प्यार करती, घल्कि इसलिये कि उसे पति में सच्चे तत्त्व, परमेश्वर, सच्चे

परमात्मा के दर्शन होने चाहिये।"

ज्ञाप जानते हैं कि चिंद प्रेम के पलटे में प्रेम नहीं मिलता, तो कोई प्रेम नहीं करता। इससे चाहिर होता है कि दूसरों

में प्रतिविन्वित केवल अपने आप ही को हम प्यार करते हैं। हम अपने सच्चे आत्मा को, भीतरी ईश्वर को, देखा चाहते हैं

श्रीर कभी किसी वन्तु को हम उसी के लिये प्यार नहीं करते।

यह एक कल्पना है। इसे जाँचिये इसकी छान-वीन

कीजिये और आपको यह मालूम होगा कि वस्तुओं के त्यारी

होते का कारण सन्या अपना आप है। सम्पूर्ण मधुरता आप

'सचगुन, लड़के के लिये लड़के व्यारे नहीं हैं, किन्तु (स्नात्मा के) लिये लड़के व्यारे हैं।"

'लड़के सक्ते अपने आप, सक्ती आत्मा के लिये पारि हैं।' जब आपके लड़के आपके बिनद्ध हो जाते हैं, तब आप खिल होते हैं, उन्हें मगा देते हैं, अपने पास से हटा देते हैं। अरें, सब सो आप देख सकते हैं कि लड़के किसके लिये पारे थे।

उदाहरण के लिये, आपको अपने लड़के के लिये कुछ कपड़ों की पारूरत पड़ती है। आपको कपड़े बहुत अच्छे लगते हैं, परन्यु कपड़े कपड़ों के लिये आपको प्यारे नहीं हैं, बल्कि लड़के के लिये प्यारे हैं। लड़का कपड़ों से अधिक प्यारा है। इस तरह हम देखते हैं कि लड़का अपने निजस्बरूप आरमा के लिये प्यारा लगता है। आसमा में, समे अपने आपमें अवश्य ही लड़के से अधिक सुख वा अधिक आनन्द होगा।

न वा चरे विश्वस्य कामाय विशे प्रियं भवत्यात्मनस्तु कामाय विशे प्रियं भवति ॥ १ ॥ (बृह्दारययक ठपनिषद्, दूसरा ऋष्याय, ४ माझाख)

"सचमुच, सम्पत्ति के लिये सम्पत्ति त्यारी नहीं होती, किन्तु अपने आपके लिये सम्पत्ति त्यारी होती है।"

अपन आपके लिये सम्पत्ति त्यारी होती है।"
आप इस देवता और उस देवता से विनय करते हैं, और
हैं कि "हे देव ! आप बड़े श्रेष्ठ हैं, आप बड़े कृपालु
ै। दयालु हैं, आप बड़े सुन्दर हैं, आप ही सब कुछ करते
हैं।" इत्यादि। ऐसा आप क्यों कहते हैं ? इसलिये कि देवता
आपकी जरूरतों को पूरा करता है, इसी कारण से कि देवता
आपके अपने आपकी, आपमें असली सच्चे अपने आपकी

करता है। देवता के लिये श्राप देवता की विनय नहीं ,, विल्क श्रपने लिये करते हैं। इस पर ध्यान दो। सच्चा न श्राप सब मुखों का, श्रानन्द का मूल है। इसे जानी इसे श्रनुभव करो।

हिन्दुस्थानी कठपुतली के तमाशे में एक आदमी परदे के पीछे वैठा रहता है, श्रीर उसके हाथ में बहुत से महीन तार होते हैं। ये तार पुतिलयों की स्पूल देह से जुड़े रहते हैं। जो लोग पुतिलयों का नाच देखने आते हैं, उन्हें ये महीन तार नहीं दिखाई पड़ते, श्रोर न उन तारों का खींचनेवाला ही परदे के पीछ बैठा देख पढ़ता है। इसी तरह, इस संसार में, ये सन स्थूल शरीर स्थूल कडपुतिलयों के तुल्य हैं। स्नाम तौर से लोग इन्हीं स्थूल शरीरों को वास्तविक रूप से करने-वाला, स्वतंत्र और कर्त्ता मानते हैं, और वाह्य देह-इष्टि अर्थात परिच्छिन्नात्मा की ही दृष्टि से सब बातचीत करते हैं। वे शरीर को स्वतंत्र कर्त्ता सममते हैं, और यदि उनके मित्र तथा नातेदार **उ**नके श्रनुकूल कुछ करते हैं या उनकी सेवा-शुप्रूपा करते हैं, तो वे प्रसन्त होते हैं। पर यदि मित्र श्रीर नातेदार उनके विपरीत काम कर बैठते हैं, तो घृ़खा, निराशा, फूट श्रीर वेचैनी पैदा हो जाती है और मित्रों तथा नातेदारों को चहने के बदले दे उनसे नफ़रत करने लग जाते हैं। ये एक प्रकार के लोग हैं। दूसरे प्रकार के लोग जो उनच श्रेखी के हैं। महीन तार खोरों पर वहा जोर देने हैं। ये लोग श्रविक बुद्धिमान अधिक तत्त्वज्ञ

राक्ति, सवको भान करनेवाली शक्ति, ये सवके सव ययार्थ में उसी श्रकथनीय शक्ति स्वरूप श्रात्मा से नियंत्रित होते हैं, जो देश, काल या वस्तु से परिच्छिन्न नहीं है। यही सच्ची श्रमरता, यथार्थ सुख, श्रानन्द श्रीर प्रसन्नता है। यही सव कुछ है। यही श्रात्मा है।

इन सब उपद्रवों से स्पष्ट होता है कि लोगों के ये सकल सम्बन्ध श्रीर सम्पर्क मानो मानव-जाति के लिये उपदेश हैं, वे म5 ह्यों के लिये एक प्रकार की शिन्ना हैं। श्रापके सांसारिक सम्बन्ध श्रीर सम्पर्क श्रागे चलकर जिस महान् श्रवस्था में श्रापको खींच ले जाते हैं, वह श्रपने निज स्वरूप का श्रनुभव है, जो तार खींचनेवाला या पदों की श्रोट में श्रमली तत्त्व है। ये उपद्रय श्राप पर स्पष्ट करते हैं कि श्रापको श्रपने श्रापका श्रनुभव करना चाहिये, श्रापको श्रपने स्वरूप की श्रसलियत का बोध होना चाहिये, जो सबके पीछे है, जो मनुष्य के मन श्रीर शरीर का भी शासक श्रीर नियन्ता है। लोगों के मन श्रीर शरीर भी इस परम शक्ति, इस बास्तिवक प्रेम, इस उत्कृष्ट तत्त्व के शासन के श्रधीन हैं।

इस तरह यह देखना श्रीर समभना है कि जब श्राप किसी सुद्ध का श्रवलोकन करते हैं, तब श्राप उसकी श्रीट में स्वयं श्रपने शुद्ध स्वक्ष्म का श्रवनोकन करते हैं; जब श्राप उसे बातचीन करते सुनते हैं, तब सुनने की क्रिया का नियमन श्रापके भीतर के निज म्यक्ष द्वारा हो रहा है; जब किसी मित्र की शिक श्रापके ध्यान में श्राती है, तब उसके भीतर परमेश्वर पर श्रापका ध्यान जाना है; जब श्रापको इस शिक का परिज्ञान काता है, तब श्रापको कोश कीश नहीं नाता है, तब श्रापको कोश नहीं होते, श्रापको किश नहीं होते।

टीक जैसे लोग जड़ पुत्रियों की देखते हैं, उसी तरह वे े हैं कि इस सबके पीछे शक्ति मेरा सच्चा खरूप है। लोगों के कामों के पीछे की ताक़त को देखो। उसका श्रनुभव करों, श्रीर जानो कि तुम वही हो। उसे भी उसी उपता या गंभीरता से जानों, जिस उपता से तुस रूप श्रीर रंग को जानते हो।

महा तं परादाद् योऽन्यत्रात्मनो महा वेद ।
एत्रं तं परादाद् योऽन्यत्रात्मनः एत्रं वेद ।
लोकास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो लोकान् वेद ।
देवास्तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो देवान् वेद ।
मूतानि तं परादुर्योऽन्यत्रात्मनो भूतानि वेद ।
सर्वं तं परादाद् योऽन्यत्रात्मनः सर्वं वेद ।
सर्वं महां, इदं एत्रं, हमे लोकाः, हमे देवाः ।
हमानि भूतानि, हवं सर्वं, यदयनात्मा ॥ ६ ॥
(एह० उपनिपद)

"जिस किसी ने ब्राह्मगुल्य को ख्रपने ख्रात्मा से ख्रन्यत्र देखा, इसे ब्राह्मगुल्य ने त्याग दिया। जिस किमी ने च्रियत्य को ख्रपने ख्रात्मा से ख्रन्यत्र देखा, इसी को च्रियत्य ने त्याग दिया। जिस किमी ने लोको को ख्रात्मा के निवाय कहीं ख्रन्यत्र समम्मा, उसी को लोको ने त्याग दिया। जिस किसी ने देवताखों को ख्रात्मा के निवाय कहीं ख्रन्यत्र जाना, उसको देवताखों ने उर कर दिया। जिस किसी ने प्राण्यों को ख्रात्मा के निवाय कहीं ख्रन्यत्र जाना, उसको देवताखों ने उर कर दिया। जिस किसी ने प्राण्यों को ख्रात्मा के निवाय कहीं ख्रन्यत्र देखा, इसी भी हरण्य वस्तु ने त्याग दिया। बहु ख्राह्मण्यत्व, यह सावयत्व, ये लोक चे देव, ये द्राहणी, यह सब वही ख्रात्मा है। "यह तो ख्रान्मदेव वर त्यार ख्रीर सरच त्याल्या हुई।

इसे ख्रपने दिलों में उत्तर जाने दो। ख्रीर तव ख्राप अ



अपेना असली तस्य को ही खिंधक देखना चाहिये। ऐसा करने में सांसारिक सम्बन्ध खीर सांसारिक काम वड़ी मधुरता से, सरलता से, खिंबपमता से चलेंगे। खन्यथा संघर्ष, दिनकत खीर क्लेश होगा। यही विधान है।

यहाँ पर हम एक कहानी कहेंगे:-

एक छोटे गाँव में एक पगली छौरत रहती थी । उसके पास सुर्गा था। नोंच के लोन उसे छेड़ा करते थे, उसके नाम धरा करते थे, छोर उसे वहुत परेशान करते छोर क्लेश पहुँचाते थे। अपने निकट रहनेवाले अपने गाँव के लोगों से उसने कहा-"तुम सुके तंग करते हो, तुम मुक्ते हैरान और दुःखी करते हो, देखी, प्रव में तुमसे बदला लूंगी, में तुम्हारी करतूतों का प्रत्युत्तर दूँगी और तुमसे सख्त बदला लूँगी।" पहले तो लोगों ने उसके फहने पर कोई ध्यान नहीं दिया। वह चीखी, "गाँववालो, खबरदार! सावधान! में तुम पर वड़ी सख्ती करूँगी।" उन्होंने बससे पृद्धा कि "तू क्या करनेवाली है।" उसने कहा-"में इस गाँव में सूर्य न उदय होने रूँगी।" उन्होंने उससे पूछा कि "किस तरह तू ऐसा करेगी।" उसने उत्तर दिया, "जब मेरा मुर्गा वाँग देता है. तब सूर्य उदय होता है। यदि तुम मुक्त इसी तरह दिक्क करते रहोगे. तो मैं अपना मुर्गा लेकर रसरे गाँव को चली जाऊँगी. छीर तब इस गाँव में सूर्य न उदय होगा।"

यह सही र कि जब मुर्गा बाँग देना था। तब सूर्य उदय होता था। किन्तु मुर्गे को बाँग सूर्योदय का कारण न थी। करापि नहीं। उसे बड़ा कष्ट था। उसने गाँव छोड़ दिया। श्रोर दूसरे गाँव को चली गई। जिस गाँव में वह गई। वहाँ मुर्गा बोला छोर उस गाँव में सूर्योदय हुआ। किन्तु जिस गाँव को वह छोड़ श्राई थी। उसमें भी सूर्य उदय हुआ। इसी प्रकार मुर्गे का व देना श्रापकी अभिलापाओं की याचना श्रीर चाह भरी

पूर्व सर्वेषां रूपाणां चष्ठरेकायनम्, पूर्व सर्वेषां शब्दानां पूर्व सर्वेषां संकरपानां मन एकायनम्, पूर्व सर्वासां विधानाम् मेकायनम्, पूर्व सर्वेषां कर्मणां इस्तावेकायनम्, पूर्व सर्वेषामानन्दानां सुपस्य प्कायनम्, पूर्व सर्वेषां विसर्गाणां पायुरेकायनम्, पूर्व सर्वेषामान्दानां पादावेकायनम्, पूर्व सर्वेयां वेदानां वागेकायनम् ॥ ११ ॥

"जिस तरह जल-मात्र का केन्द्र समुद्र है, इसी प्रकार सब स्परों की त्वचा, सब गन्धों की नाक, सब रसों (स्वाहुओं) की जिह्ना, सब रंगों का नेत्र, सब शब्दों का कान, सब संकल्पों का मन, सब विद्या का हृद्य, सब कर्मों का हाय, सब आनन्दों का उपस्थ, सब त्यागों की पायु, सब गतियों का पैर और सब वेदों की वाणी केन्द्र वा गति है।"

चसी तरह सम्पूर्ण संसार श्रीर संसार के सव पदार्थे श्रपना केन्द्र निज स्वरूप, पवित्र श्रात्मा में रखते हैं। सव रंगों का केन्द्र मी चसी में है। सव शब्दों, रंगों, रसों, इन्द्रियों द्वारा कर्मों का श्रपना केन्द्र केवल श्रात्मा या निजस्वरूप में मिलता है। उसी से हरएक वस्तु निकलती है।

स यया सैन्धविख्य उदके प्रास्त उदक्रमेवानुविद्धीयते, न हास्योद प्रहृणायेव स्थात् । यतो यतस्त्राददीत खवग्रमेव । एवं वा घर इदं महद्दमूत मनन्तमपारं विज्ञानवन एव, एतेम्यो मूतेम्यः समुत्याय तान्येवानुविनश्यित, न प्रेत्य संज्ञास्तीत्यरे ब्रवीमि, इति होवाच याज्ञवह्त्यः ॥ १२ ॥

"पानी में हाला जाने पर निमक का हेला जिस तरह गल जाता है श्रोर फिर निकाला नहीं जा सकता, किन्तु सब कहीं (पानी में) हमें निमक का ही स्वाद मिलता है, उसी तरह सचमुच, ऐ मैत्रेयी, यह श्रनन्त, निःसीम, महद्भून, जो विज्ञान-है, इन तत्त्वों से श्राविर्मत होता है, श्रोर फिर में विलीन हो जाता है। हे मैत्रेयी! में कहता हूँ, जब वह

जाता है, तब कोई संज्ञा नहीं रहती।" यह याज्ञवल्क्य

ने कहा। इन तत्त्वों का श्वनुभव हो जाने पर मनुष्य की उससे एकता हो जाती है, तब वह नाम और रूप के श्वाधित नहीं रहता।

् सा होवाच मैत्रेथी, 'श्चीव मा, भगवान् मृसुहत्, न प्रेत्य संज्ञास्ति', इति ।

हाता तव मैत्रेची ने कहा, यह कहकर छापने मुक्ते सम में डाल दिया कि "जब वह चला जाता है, तव उस (प्रेत) की लंजा नहीं रहती।"

मैत्रेयी के मन में सन्देह हुआ कि यदि यह आप ही सब क्लेशों का लानेवाला है, यदि यही कष्ट और रंज तथा प्रत्येक उत्पत्ति का कारण है, यदि हमारा मन छुछ भी नहीं है, यदि हमारा न्यक्तित्व जब विनष्ट हो जाता है, तब तो अवस्य हमारा पूर्ण लोप है। इसलिये उसने कहा, "में विलोप नहीं चाहती। आपका यह अपना आप किस काम का जब कि वह विलोप, मृत्यु, विनाश रूप हैं " में इसे नहीं चाहती। यदि सर्वस्व खोना पड़ेगा, तो भी में इसे नहीं चाहती।"
म होवान, त वा अरंश मोहं प्रवान्यतं वा. अरं हवं विशानाय ॥९३॥

यत्र हि है तिभित्र भवति तिहता हता जिल्लाति, गरितर हता परपति, तिहतर हता प्रशंति तिहतर हतामित्रवाति, गरितर हता मनुते, तिहतर हता जिल्लाचि यत्र वा धम्य सर्वभानीयानुत, तत् केन कं जिल्लेत्, तत् केन २ प्रशंत तत्र केन २ प्रण्यात, तत्र केन क्याभियदेत्, तत् केन २ प्रशंत तत्र केन २ जिल्लान्यात् विनेत्रं सर्व विज्ञानाति, तं केन विज्ञानायात्र विज्ञानायात् विनेत्रं सर्व विज्ञानाति, तं केन

यातवालय ने बन्द अया जो नैजेया मैंन सम में बातनेवान बोर दार नार्ग करा अये ' जानने के लिये या बाको '। बयो व जरा या है तन्मा होता है. दही एक दूसरे क्री को ने जा ' एवं दूसरे को दादता है. एक दसरे

किसी बात या तथ्य को पुरी तरह समफने का क्या अर्थ है ?

पूरी तरह में किसी चीज को समफ़ने का अर्थ उसे इन चुंगलों से, इन फलटों से मजबूबी के साथ पकड़ना है। जब किसी नीज का 'क्यों', 'कब' और 'कडाँ' स्त्राप जान लेते हैं, तब श्राप उसे समक जाते हैं, उसका बोल हो जाता है। यों कह सकते हैं कि तब वह आपके, बुद्धि के, अभीन स्थित है। श्रापकी बुद्धि उसमें खीर उसके मध्य में होकर स्थित है। खीर वह वृद्धि के अधीन स्थित है।

बुद्धिः समभः तीन ग्ंगलवाले विचित्र निमटे के समान है। बुद्धि से सब चोजें समकी जा सकती हैं. किन्तु इसके साथ ही यह वृद्धि, आपका यह चिन, खद चिमटे की तरह शरीर रूपी 'राज्य' के इस विचित्र 'शासक' व विचार-कर्त्ता के शासनाधीन है। समक इस विचित्र शक्ति (त्र्यात्मा) के शासन के अधीन है। इसके प्रभुत्व में है।

क्या आपकी यांद्र, आपका चिन्न स्वतंत्र है ? यांद्र है, नो वह सुपुष्ति की दशा में। गाउ निज्ञा की अवस्था में। क्या नहीं है ? यदि वह स्वतंत्र होती नो सब दशास्त्रों में ऐसी ही रहती। वह स्वाधीन नहीं है। बृद्धिः समभ, एक उजनर शक्ति के वश में है। युद्धि में यह बन नहीं है कि बह उलटकर अपनन्त वा शुद्ध आत्मा को पकड़ ले जिसके अधीन कि वह स्वयं है। वह आपसे यह प्रश्न नहीं कर सकती। "क्यों कब और कहाँ तुम थे ?" बुद्धि 'श्रमली' व शुद्ध 'त्र्यात्मा' मे प्रश्न करने की शक्ति नहीं रखती। बुद्धि 'त्रात्मा' को समक या प्रहण नहीं कर सकती। 'आत्मा' बुद्धि से ऊपर है। परे है।

बुद्धि यद्यपि आतमा को प्रह्ण नहीं कर सकती, तथापि वह श्रपने को उसमें वैसे ही निमज्जित कर सकती है, जैसे युलयुले

तमुद्र में । युलयुले समुद्र से वाहर नहीं निकल सकते, किन्तु वे फुट कर उसमें हूच सकते हैं । इसी प्रकार युद्धि आत्मा को प्रहरण नहीं कर सकती, किन्तु वह अपने को आरमा में लीन कर सकती है। फौर वस्तुतः माया का यही सारांश स्रोर तात्पर्य है। बुद्धि आत्मा या परमेश्वर से यह नहीं पूछ सकती कि "क्यों, कब और कहाँ तुमने दुनिया की सृष्टि की ?" साहस-पूर्वक वह प्रश्न नहीं कर सकती।

यह घात्मा, सत्ता का सच्चा समुद्र, यह शासक श्रीर परि-चालक स्वरूप, यह अनुभव करने योग्य, निदिःयासन करने योग्य, देखने योग्य और जानने योग्य है जिससे अनन्त के

साथ एक हो जाय। यह सच्चा स्वरूप या स्नात्मा 'में हूँ' फहलाता है। यह सच्चा स्वरूप वा पूर्ण 'अहं' देशकाल-वस्तु से परे हैं। इस पूर्ण, सच्चे स्वरूप का निरूपण ॐ से किया जाता है। ॐ का अर्थ है भें हूँ, और ॐ को उवारण करते समय आपको किसी दूसरे के प्रति सम्बोधन नहीं करना पड़ता अ को उद्यारण करने समय यह न समको कि आप श्रपने से वाहरबाले किसी दूसरे को पुकार रहे हैं। अ को



इसी तरहा यदि युद्धि को अपने को किसी से तरूप करना है, तो अपने ही तक से, अपनो हो सत्य प्रकृति से (जिसको कि यह बनी हुई है) उसे तरूप होना चाहिये। उसे युद्युदा हो जाना चाहिये। फोर फुटकर महान् समुद्रः आत्मा 'में हूँ' से एक हो जाना चाहिये। देह से उसको एकता नहीं को जा सकती। देह तो केवल एक कार्य वा परिणाम है। आरे इसीलिये देह से अपने को एक करने का युद्धि को कोई अधिकार नहीं है।

घरे! सत्य ईश्वर को, खात्मा को, इस क्षेत्र शक्ति को संसारिक सम्बन्धों, दुनयबी मामजों से एक नहीं किया जा सकता। तुम बही क्षेत्र परमात्मा हो। सत्य तत्त्व हो। यह जानो, यह विचारों, यह घतुभव करों, घोर (इस तरह) सकज क्लेशों तथा शोकों से परे हो जाको वा छूट जाको।

घर यानन्दमय कैसे बना सकते हैं

२० दिसम्बर १६२२ को एकेउेमी चाळ साहंसेत में दिया हुआ स्थाप्यान ।

गिह्लाओं तथा भट्ट पुरुषों के रूप में मेरे ही आतमत्!

आ ज एमारे पास लोगों के बहुत से प्रश्न-पत्र हैं।
जब एक बकील किसी प्राचालत को जाता है,
तब सायद वह इतने ही काराजात अपने साथ लाता है,
किन्तु वे सब नहीं सुने जाते। इन प्रश्नों की विपुल संख्या
ही इन सबको न सुनाये जाने और इनका उत्तर न देने का
अवसर देती है। एक दूसरा कारए भी है, जिससे हम इनमें से
बहुत से प्रश्न-पत्रों को हाथ में न लेवेंगे। इनमें से आधिकांश
का सम्बन्ध प्रेत-लोक या परलोक से है। अभी आप इस
लोक में हो, और जिस विपय से बतमान में आपका कोई
सरोकार नहीं है, उस पर कुछ कहने की अपेचा से यह बेहतर
होगा कि आपके हृद्य और व्यवसाय से अधिक सम्पर्क
रखनेवाले विपय की कुछ चर्चा की जाय।

पिछली वार जो विषय उठाया गया था, उसी को हम जारी रक्खेंगे। वह विषय वड़ा महत्त्व-पूर्ण है। "आत्मानुभव प्राप्त करने की आकांत्ता करना क्या किसी विवाहित मनुष्य के लिये युक्ति-सङ्गत होगा ?" यह विषय है। यह विषय लम्बा है, और आज की वकृता में ही इसकी पूरी व्याख्या नहीं की जा सकती। फिर भी, आुआ, देखें कि आज इसके वारे में

हम क्या-क्या जान सकते हैं।

मालिक था। वह अपने नौकरों को वड़े ही मजेदार ढंग से घोर पीड़ा दिया करता था। एक चार नौकर ने एक अत्यन्त स्वादिष्ट न्यंजन (खाने की चीज) मालिक के लिये तैयार किया। मालिक चाहता था कि नौकर उसे न खाय। वह चीज रात को पकाई गई थी। मालिक ने कहा, "हम इसे श्रभी न खाउँगे, सबेरे खा लेंगे । इस समय लेटो जाकर, सवेरे इम लोग इसे चक्छेंगे।" मालिक का असल इरादा इसे सवेरे जाने का इसिलिये था कि उस समय तक उसे खब भूख लग जावेगी। रात को इन्छ भी न खाने के कारण वह सवेरे चाट पोंहकर खा जायगा, और मौकर के लिये कहा भी न वचेगा। यह मालिक की श्रसली नीयत थी। वह चाहता था कि नौकर द्विलके श्रीर हुकड़े खाय, परन्तु इस श्रमिप्राय को नौकर से साफ नहीं कह सकता था। उसने नौकर से कहा, "जाओ, जाराम करो, और सबेरे हममें से वह मनुष्य से खायना, जो वड़े ही सुन्दर और सुखकर स्वप्न देखेगा। यदि सबेरे तक अत्युत्तम खप्न तू देख लेगा, तो सारा हिस्सा तेरा होगा, अन्यथा सब में ले लेगा और खा जाऊँगा, श्रीर तुन्हें अपने को दिलकों श्रीर दुकेंड़ों से संतुष्ट करना पड़ेना।" सबेरा हुआ और मालिक तथा नौकर एक दूसरे के सामने देठे। मालिक ने नौकर से कहा कि अपने स्वप्न को वयान करो। नौकर ने कहा, 'जनाय, आप मालिक हैं, श्रागे श्रापको पलना चाहिये । श्राप श्रपने स्वप्तों को पहले वतावें दाद को मैं अपने वयान करूंगा।" मालिक ने अपने मन में सोचा कि यह ग़रीय नौकर यह जाहिल, छपढ़ मनुष्य छति मनोहर स्वप्न नहीं गड़ सकता । वह कहने लगा, "मैं खपने खपन में हिन्दुस्तान का नदारान



रहा था।" मालिक ने पूछा "और तुमने क्या किया ? तुम्हें क़त्ल फरने में उसका क्या ख्रिभिप्राय था ?" नौकर ने कहा, "उसने मुक्तसे वह स्वादिष्ट भोजन खा जाने को या मर जाने को कहा।" मालिक ने पूछा "और तब तुमने क्या किया ?" नौकर ने कहा, "मैं चुरके से रसोई घर में चला नया और हरएक पराधे ला गया।" मालिक ने कहा, "तुमने मुफ्ते क्यों नहीं जगाया ?" नौकर ने जवाव दिया, "जनाव, छाप तो सारी दुनिया के धाइसाह थे। छापके दरबार में चड़े लोगों का बहुत ही शानदार जमाव था, और लोग तलवारें निकाले तथा तोपें-वन्द्रकें लिये हुए थे। यदि मैं आप महाराजाधिराज के पास पहुँचने का यत्र फरता, तो वे सुके मार डालते। मैं आपके पास पहुँचकर न वता सका कि मैं किस संकट में था। इसलिये वह स्वादिष्ठ भीजन या जाने को मैं लाचार हुआ, मुक्ते अकेले ही उसे चलना पडा।"

राम कहता है कि छाप वचन-इत्त स्वर्ग (pormised paradise), बचन-इत्त वैकुष्ठ व प्रतिज्ञाबद्ध परलोकों का स्वप्त देख रहे हैं। छाप इन्हीं चीजों का स्वप्त देख रहे हैं। छोप इन्हीं चीजों का स्वप्त देख रहे हैं। छोप छाकाश में महल बना रहे हैं। छोप दाल पर ही बना रहे हैं। छाप छाकाश में महल बना रहे हैं। छाप खाकाश में महल बना रहे हैं। छोर सोच रहे हैं कि "हमें यह करना चाहिए छोर हमें रिवर ने उरना चाहिए। हमें रेस करह पर्वाव करना चाहिए छोर हमें रिवर ने उरना चाहिए। हमें रेस करह पर्वाव करना चाहिए। छोर हमें रिवर ने उरना चाहिए। हमें रेस करह पर्वाव करना चाहिए। छाप हमें इस करह पर्वाव करना चाहिए। छाप हमें कि वह नौकर होना देहतर रहे कि किन्तु राम कहना है कि वह नौकर होना देहतर है, जिसने देन के इर से उरिश्वर स्वाहिट मीजन सा लिए या। पेसा करना छरड़ा है। यह एक ऐसी बात धी। नि

जिल्द तीसरी

सम्बन्ध वर्तमानं से था। वह एक ऐसी बात थी, जो उस समय सत्य थी । जो मामले आपके हृद्य के निकट हैं, जिनका सम्पर्क आपके व्यापार और चित्त से है, पहले उन पर ध्यान देना अधिक वाञ्छनीय है, और परलोक अर्थात् स्वप्नों का वह लोक, अपनी फिक आप कर लेगा। उदारता का श्रारम्भ घर से होता है। पहले घर से श्रारम्भ करो।

राम अब उस प्रश्न पर आता है, जिसका बास्ता आप सबसे है। वह प्रश्न यह है, "विवाहित जोड़ा किस तरह रहे कि **उनके विवाह का परि**गाम संकट, चिन्ता, पीड़ा और रंज न हो? " लोग कहते हैं, "ऐ ईश्वर ! तू हमारी तकलीकों को दूर कर दे। हे ईसा! तू मेरे क्लेशों को हटा दे। हे कृष्ण श्रौर बुद्ध ! मेरे दुःखों को हर ले ।" किन्तु राम कहता है कि मृत्यु के बाद वे आपकी तकलीकों को दूर करें यान करें, पर इस जीवन में आपके कप्टों को कौन हरेगा ? इस जीवन में पित को स्त्री का ईसा मसीह होना चाहिए, श्रौर स्त्री को अपने पति का ईसा मसीह। पर हालत यह है कि हरएक स्ती अपने पति के लिए और हरएक पति अपनी स्त्री के लिये जुडास इसकैरियट* (Judas Iscariot) हो रहा है । मामला कैसे सुधरे, बात ठीक हालत में क्योंकर आवे ? प्रत्येक पति े रित्येक स्त्री को संन्यास का त्रालिङ्गन करना होगा। 🖰 🏿 मप जानते हैं कि हजरत ईसा, ईसाई संसार के अनुसार गया संन्यास की मृति थे। इसी तरह हरएक स्त्री यदि ा। की मृति हो जाय, तो वह अपने पति की त्राता हो ्रकी है। संन्यास एक ऐसा शब्द है, जिससे हरएक काँपता

^{ं *} हजरत ईसा के उस शिष्य का नाम है, जिसने ईसा की समय पर धोला ु दिया था। इसलिये घोकेदाच वा दसादाच से ऋभिप्राय है।

३३६

श्रौर धर्राता है। हरएक इस शब्द से धर्राता है, किन्तु विना त्यान के आपके परिवार में कोई स्वर्ग लाने की जरा सी भी सम्भावना नहीं है। त्याग शब्द के सम्बन्ध में वड़ी भ्रान्ति है। पिहुले व्याल्यानों में यह शब्द इतनी वार वर्ता गया है कि इसके असली अर्थ सममा देना अब बहुत जरूरी है। त्याग यह नहीं चाहता कि आप हिमालय के घने जंगलों में चले जायें ; संन्यास यह नहीं चाहता कि आप सब कपड़े कोलकर नंगे हो जायें : संन्यास आपसे नंगे सिर और नंगे पैर चलने को नहीं कहता। यह त्याग नहीं है। यदि त्याग का यही क्यर्थ होता, तो विवाहित जोड़े के लिये त्याग का अभ्यास कैसे संभव हो सकता था ? वे दोनों स्त्री और पति की तरह रहते हैं उनके परिवार है उनके सम्पत्ति है। वे लोग त्यागी कैसे हो सकते हैं ? हिन्दू-धर्म-प्रन्थों में त्याग का जो चित्र खींचा गया है, वह है एक साथ वैठे हुए भगवान शिव और भगवती पार्दती का, और उनका परिवार उनके छाल-पास है। सगवान् शिव और उनकी स्त्री पार्वती, एक साय खी-पुरुष की तरह रहते हैं। अपने कर्चव्यों का पालन करते हैं। हिन्दृ-धर्म-इन्यों में वे त्यान की मृति कहे नये हैं। लोग समकते हैं कि त्यान शब्द से हिन्दुओं का स्रीमप्राय है वन को दले जाना समाज से अलग रहना हरएक वस्तु से दूर भागना हरएक चीज से नकरत करना। पर हिन्दुर्जी के जहसार त्याग शब्द के ये कर्ष नहीं हैं। करने गाईरुव जीवन में भी हिन्दुकों को 'मंन्यान' वा चित्र खींचना पड़ता है। यदि यद् वेदान्तः यदि यह तन्यहान या सत्य फेवत बन को पते डानेबाले थोड़ में होंगों के हिये होता को पर्किस बाम का है ऐसे इसकी जरूरत नहीं। इसे गंगा नदी के पेंच दो- एके यह न चाहिए। यह .

जिसका हिन्दू प्रचार करते हैं, सप्रके काम का है। जिस तरह के त्याग की हिन्दू शिज्ञा देते हैं, वह सफलता की एक-मात्र कुंजी है। कोई बीर अपने को विख्यात नहीं कर सकता, यदि वह त्यागी परुप नहीं है। कोई भी कवि आपको कोई कविता नहीं दे सकता, यदि वह त्यागी पुरुष नहीं है। आप चाइरन (Byron) का नाम लेंगे, जो इंग्लैंड से निकाल बाइर किया गया था, क्योंकि वह वड़ा ही दुराचारी समका जाता था। वेदान्त कर्ता है कि वाइरन की भी मेथा-शक्ति (genius) का कारण संत्यास हो था । संत्यास की जो कल्पना राम आपके सामने रक्षेगा, वर धाति विलक्त है। वाशिगटन त्यागी पुरुप है। यदि उसमें त्याग न होता, तो सभा में वह विजयी न होता। यह वड़ी ही अद्भुत बात है। क्या आप बह नहीं समकते कि हरएक नायक को, चाई वर नेपोनियन बोनापार्ट हो चाहे वाशिटन वा विलिंगटन हो, चाहे एतिक बैंडर वा मीजर हो, चाहे कोई भा हो, बिजयो होने के लिए, राज्यों कः स्वामी बतते के लिए, सेनाओं का सञ्चातन करने की शक्ति पाने के लिए, श्चपने को व्यवहारतः सब संसार से सब सम्बन्धों से परे रखना पड़ता है । उसका चित्त संज्ञोभ-रहितः शांन, सौम्य, बद्धेग-रहित स्रोर स्रचंचल स्रवश्य होना चाहिए, स्रोर एक ैि बिन्दु पर उसे अपनी सत्र शक्तियाँ लगा देनी चाहिये। । हाजतों से उसे जुब्बन होना चाहिए। अरेर इसका मतलब है ? इसका अर्थ मानो सब पदार्थों का त्याग 🐧 जा सकता है। इस त्याग की मात्रा जितनी ही अधिक ी मनुष्य में होती है, उतना ही वर् श्रेष्ठ है। नेपोलियन ्भूमि में श्राता है, श्रीर केवत एक शब्द 'ठहरों' से हजारों आदमियों को रोक लेता है, जो उने परान्त करने हे थे। यह कैसे ? यह शक्ति कहाँ से आई ? सच्वे, अनती

685

हत्त्व में, भीतर के परमात्मदेव में, खन्तरात्मा में नेपोलियन

के लीन हो जाने से यह शक्ति मिज़ी। यह शक्ति वहाँ से षाती है। उसे चाहे इसकी खबर हो या न हो। वह शरीर से, चित्त से, हरएक वन्तु से परे खड़ा हुऋा है; संसार उसके लिए संसार[े] ही नहीं हैं। इसी प्रकार, सर श्राइजक निउटन जैसे श्रेष्ठतम नेयावी (genius) को भी, श्रपने तत्त्वज्ञान श्रौर विज्ञान से दुनिया का दैभव बढ़ाने के तिए, प्रत्यत्त इस त्याग का अनुभव करना पड़ा है। वह देह, चित्त क्रोर हरएक चीज से ऊपर उठ जाता है। वह घर में चैठा हुआ है, किन्तु घर उसके

लिए घर नहीं है, मित्र उसके लिए मित्र नहीं हैं। कैसी समाधि की अवस्था है! लोग कहते हैं कि वह कुछ नहीं कर रहा है। लेकिन जब आप कहते हो कि वह छुछ नहीं कर रहा है। तभी वह अपनी सर्वोत्तम अवस्था में है। जाहिरा वह निस्तव्य है, उसने हरएक वस्तु त्याग दी है, किन्तु वह ध्रपनी परमोक्त्व दशा में है। ये लोग, ये वीर, ये नायक, ये श्रलोकिक-दृद्धि महापुरुष श्रक्षाततः त्याग पर पहुँच जाते हैं। जिस सत्य को वे अनजाने खमल में लाते हैं, और जिसके द्वारा वे उन्नत होते और अपने को विख्यात करते हैं. उसी को आपके सामने विधिवन् रखना हिन्दृ-तत्त्रज्ञान का उहेरय है। इस (सत्य) तक ठीक राखे से धानको पहुँचानाः इसे एक विज्ञान का रूप देना और उन क़ातूनों नियमों तथा तरीकों को, जो उन तक खापको ले जाते हैं। खापको नमनाना इस

हिन्दू-साख का उद्देश्य है। यह स्वान हिन्दुओं में ज्ञान-दुल्य कहा नया है। जिल्ला

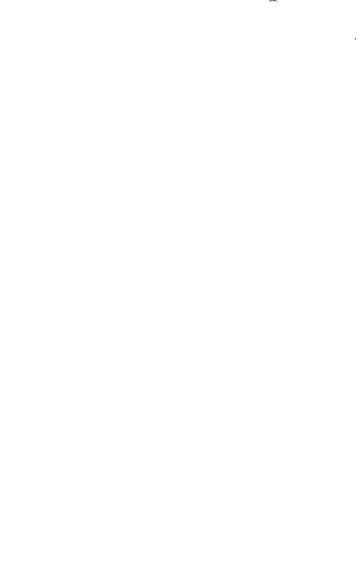
अर्थ विया है अर्थात् स्थान और झान एक ही और मभिन्त परंतु हैं। साग शहर ज्ञान का पर्यादवाची है किन्तु यह प्रचलित हान नहीं, भौतिक पदार्थी का हान नहीं,

ठीक, इस (भौतिक ज्ञान) से भी आपको बड़ी सहायवा भिल्ली है। किन्तु यह असली झान नहीं है। यह अहेला आपको कदापि कोई शान्ति नहीं दे सकता। जो हान त्याग का पर्यायवाची है, वह सत्य का ज्ञान है। असली आत्मा का ज्ञान है। आप जो यास्तव में हैं, उसका ज्ञान है। अच्छा, आप जो कुछ हैं, उसका ज्ञान प्रापको बुद्धि द्वारा मिज्ञ सकता है। क्या वह यथेष्ट होगा ? किसी हर तक किन्तु पूरी तरह नहीं । इस-लिये कि आप ज्ञानी हो सकें, आप जीवन्मुक्त हो सकें, यह विशाल संसार आपके लिये स्वर्ग हो जाय, आपको इस दिन्य ज्ञानका अनुभव करना होगा-इस ज्ञान का कि ''आप परमात्मा हैं, श्राप देवी विधान हैं, श्राप विदेह, परम शक्ति या तेज हैं, श्रथवा जो कोई भी नाम देना पसन्द करें, वह वस्तु आप हैं, या यह ज्ञान कि छाप परमेरवर हैं।" यह ज्ञान फेवल बुद्धि द्वारा प्राप्त हुआ ही नहीं, वल्कि भाव की भाषा में मावित, आपके आचरण में आचरित, आपके रक्त में रंजित, श्रापकी नसों में दौड़ता हुआ, श्रापकी नाड़ी के साथ फड़कता हुआ, श्रापमें भिद कर श्रीर व्याप्त होकर श्रापको जीवन्मुक्त वना सकता है। यह ज्ञान त्याग है। यह ज्ञान प्राप्त करो, और आप त्यागी पुरुष हैं।

्रेंदिन को चला जाना तो उद्देश्य-प्राप्ति का एक माधन दे हैं, विश्वविद्यालय को जाने के समान हैं। महाविद्यालय तिद्योपार्जन करते हैं, परन्तु यह कभी नहीं समभा । कि हमें वहाँ सदैव रहना है। इसी तरह इस ज्ञान पाने के लिए आप कुछ काल के लिए भले ही जंगल को जायँ, किन्तु वेदान्त-दर्शन यह कभी नहीं सिखाता कि का नाम त्याग है। त्याग का आपके स्थान, स्थिति शारीरिक कार्य से कुछ भी प्रयोजन नहीं है। उसे इन द तीसरी धर श्रानन्दमय कैसे वना सकते हैं। ों से कोई मतलब नहीं । त्यान तो आपको केवल आपकी रोच्य दशा प्राप्त कराता है, ज्ञापको ज्ञापके श्रेष्ट पद पर

ि दिठाता है। स्वाग केवल आपकी राक्तियाँ वड़ाता है। पके तेज को वृद्धि कराता है, आपका वल पुष्टतर करता र्छीर छापको ईश्वर बना देता है। वह आपका सब रंज लेता है। वह आपकी सन्पूर्ण चिन्ता श्रीर भय भगा देता । स्त्राप निर्भय स्त्रोर सुत्ती हो जाते हैं । एक विवाहित पुरुष इस त्यान को कैसे पा सकता है ?

देस्त्री और पुरुष एक दूसरे को सुखो करने की ठान लें, श्राज ही मामला निपट सकता है। सब इंजीलें नव तक द्व भी भन्ना नहीं कर सकतीं जब तक कि नित्रवाँ छौर पति ांग एक दुसरे के रचक फ्रांर ईसा मसीह होना न ठान लें। क्षेत्रे जब लोग धार्मिक न्याख्यानों में स्नाने हैं। तद उनसे त्एक चीज त्यागने को कहा जाता है। घपने सरीर और रपत्ति को हिन्दर का समझने के लिये कहा जाता है। धौर रपने को यह देह न मानकर ईश्वर सानने को पहल हाल । परत ऐसा प्याप्ता विया जाना है। परत पार द्वान निरुदा ाप । हें बें के भर लगा है। सब स्था हाला है 🧍 हही



जिल्द तीसरी घर श्रानन्दमय कैसे वना सकते हैं १४४

होती। यदि स्नाप सचमुच उसे प्यार करती या करते हो, तो उस पर कुछ निहावर भी श्राप को करना चाहिए। पर क्या श्चाप कुछ स्वार्थ-त्याग करते हो ? नहीं करते नहीं करते। स्त्री पति को अधिकार में रखना चाहती है, और पति

स्त्री का श्रधिकारी वनना चाहता है, मानो वह कोई जड़ पदार्थ है, जिसका वह ऋधिकारी हो सकता है, जो उसकी सम्पत्ति हो सकती है। एक दूसरे को अपने अधीन करना

चाहता है। यदि सचमुच आप एक दूसरे से प्रेम करते हो। तो आपको एक रूसरे के हित की वृद्धि करने की चेष्टा करनी चाहिए । क्या सचमुच श्राप ऐसा करते हो ? श्राप सममते

हो कि मैं ऐसा करता हूँ, पर आपकी समक्त में भूल है। भाई! स्त्री या पति की इन्द्रिय-वासनात्रों की तृष्ति करना

इसे सुद्ध पहुँचाना नहीं है, उसे सच्चा सुद्ध देना नहीं है, कदापि नहीं। यदि सुख पैदा करने का यही एक उपाय होता, तो नभी परिवार मुखी होते। स्या ऐसा है १ क्या ये

परिवार मुर्ची हैं ह इजारों में एक भी नहीं। वे सुर्ची क्यों नहीं

जो उपयोग करते हो, वह दूपित है, श्रीर वही श्रपने साथ रंज लाता है।

हिन्दु-धर्मप्रन्थ में एक कथा है कि मारत के प्रसिद्ध देवता, भारत के प्रभु ईसामसीह, भगवान् कृष्ण को एक वड़ा दैत्य खाये जाता था। उन्होंने अपने हाथ में एक खंजर ले लिया। वे खा लिये और निगल लिये गये। अपने को श्रजगर के पेट में देखकर उन्होंने श्रजगर का हृदय वेध दिया। हृदय फट गया, श्रजगर घाव से मर गया, श्रौर भगवान कृष्णचन्द्र वाहर निकल आये। ठीक यही मामला है। प्रेम क्या है ? प्रेम कृष्ण है, श्रर्थात् प्रेम पर्मेश्वर है, प्रेम ईश्वर है, और वह हृदय में प्रवेश करता है विपय-लोलुप मनुष्य के चित्त के भीतर वह पैठ जाता है, वह हृद्य में घुस जाता है, श्रीर जब श्रासन जमा लेता है, जब हृदय के भीतर में उसे स्थान मिल जाता है, तब वह वार करता है। श्रोर, परिणाम क्या होता है ? हृद्य टूट जाता है, इदय घायल हो जाते हैं। फल-खरूप व्यथा और शोक हाय लगते हैं। सांसारिक प्रेमके हरएक मामले में रोना श्रौर दाँतों का पीसना ही होता है। यही रीति है। यही देवी विधान है। यही घटना है। किसी भी सांसारिक पदार्थ से ज्यों ही छापने दिल लगाया, किसी भी लौकिक वस्तु को क्यों ही आप उसके लिए प्यार करने लगे, त्यों ही कृष्ण भगवान् श्रापमें प्रवेश कर जाते हैं श्रीर आपको घायल कर देते हैं, हृद्य कट जाता है, श्राप शोक-पीड़ित हो जाते हो, श्राप विलाप श्रीर रोदन करने लगते हो; "अरे, यह प्रेम वड़ा निष्ठर है, इसने मुंके तवाह कर दिया।"

यह एक देवी विधान है कि "इस दुनिया में जो कोई छादमी किसी व्यक्ति या दुनयवी चीच से छपना दिल

क्या वह मित्र अपना चित्र आपके पास छोड़ेगा ? नहीं नहीं। उसने अपनी तसवीर आपको इसलिए दी थी कि आप उसे याद रक्तें। उसने श्रपनी तसवीर श्रापको इसलिए नहीं धी थी कि आप उसे भूल जायेँ। वह चित्र आपका पूज्य नहीं होना चाहिए था। चित्र को चित्र की खातिर ही प्यार करने लगना वृतपरस्ती थी। श्रापको ईश्वर से प्यार करना था, श्रापको मालिक से, चित्र के स्वामी से प्यार करना था। इसी तरह, इस संसार में सब चीजें ईश्वर का चित्र, चिह-मात्र हैं। रित्रयाँ श्रौर पति इन चित्रों के शिकार होते हैं। वे बुतपरस्ती का शिकार वनते हैं, श्रौर मूर्ति के गुलाम हो जाते हैं। श्रापकी इंजील श्रापको बताती है कि श्रापको कोई मूर्ति न स्थापित करना चाहिए, ईश्वर की प्रतिमा न बनाना घोहिए, श्रोर श्रापको मूर्ति-पूजा न करना चाहिए । मूर्ति-पूजा शब्द से यह मतलव नहीं था कि आपको इन प्रतिमार्ओ की उपासना न करना चाहिए। मतलव यह था कि ये जो जीती-जागती मूर्तियाँ हैं, इनके फेर में पड़कर श्रसली को न भूल जायो, यह श्रभिप्राय था।

भारत में एक क्रत्रिस्तान में राम ने एक क्षत्र पर एक

श्रमिलेख देखा, जो इस प्रकार था:-

Here lies the babe that now is gone,

"An idol to my heart.

If so the wise God has justly done

'T was needful we should part."

"यहाँ वह वच्चा लेटा हुआ है, जो अब (परलोक) सिवार गया है, और जो मेरे हर्य-मन्दिर की प्रतिमा था। यदि ऐसा हुआ है, तो विज्ञ ईश्वर ने ठीक ही किया है, हमारा जुदा हो जाना जरूरी था।"

यह छाभिलेख एक महिला ने लिखा था। वह उस वन्ने को वेहद चाहती थी। वह मूल से, उस असली से, जिसका चित्र-मात्र वरुचा था। वरुचें को छिधिक मानने लगी थी। और इसलिए बच्चे का हरता उचित ही था। यही देवी विधान है, यही नियम है। यदि आप चित्रों का ठीक उपयोग

१४६

करोगे, तो वे आपके पास रहेंगे, यदि उनका दुरुपयोग करोगे, तो स्तेह्मंग वा वियोग, रंज, चिन्ता और भय होगा। ठीक उपयोग करो । हम चित्र घ्रपने पास रख सकते हैं, किन्तु तभी

जय इम खसली को अधिक प्यार करें, उसको चित्र से श्रिधिक प्यार करें। केवल तभी हम चित्र श्रपने पास रख सकते हैं।

अन्यथा करापि नहीं। यही देवी विधान है। यही स्थान है। इस ढंग से हरएक घर में संन्यास का श्रभ्यास किया

जाना चाहिए।

जिल्ड तीसरी घर जानन्दमय कैसे बना सकते हैं १४१ है। चेतनता, ज्योग-शक्ति या गति किसके कारण से हैं ? देखिये! स्त्राप मार्ग चल सकते हो, ढालू पहाड़ों पर चढ़ सकते हो, आप इधर-उधर विचर सकते हो, जहाँ चाही जा सकते हो। किन्तु देहान्त होने पर क्या हो जाता है ? प्राणान्त होने पर, वह चेतनता वा उद्योग-शक्ति, श्रापके भीतर का वह ईश्वर, जो आपको ऐती-ऐती उँचाइयों पर उठा ले जा-सकता था, पहले जैसी सहायता किया करता था, वैसी अब नहीं करता। तो फिर इस शरीर के अन्दर कौन है, जिसके कारण नसें डोलती हैं, वाल वढ़ते हैं,

आपकी नाड़ियों में रक्त का सद्धार होता है ? वह कौन है ? शरीर के छंगों को यह सब चाल, शक्ति, फ़ुर्ती देनेवाला कोन है ? वह कौन है ? वह एक 'विख्यव्यापी शक्ति' है, एक 'चिश्वेश्वर' है, जो श्राप वस्तुतः हो, वह 'श्रात्मा' है। जय कोई मनुष्य भर जाता है, तब कुछ खादिमयों को उसे स्मशान या क्रिस्तान उठाकर ले जाना पड़ता है। और जब वह जिन्दा या तद वह काँन चीच थी जो उसका मनों भारी दोम बढ़ी-बड़ी डँचाइयों पर ऐसे ऊँचे पहाड़ों पर उठा ले जाती शी ? वह कोई छहरयः छवर्शनीय वस्तु है परन्तु है खबरय। यह आपके अन्दर आत्मदेव हैं वह हरएक शरीर में परमात्मा है, खीर दही परमेरवर हरएक वस्तु को शक्ति और कर्मरयता प्रवान करता है। प्रत्येक व्यक्ति की गति वा चेष्टा में शोभा का फारण भी वही परमेश्वर है। जब कोई मनुष्य सोबा होना रे. तब उनके नेत्र नहीं देखते: जब वह सोया होडा है, तब इसके बान नहीं सुनते। इद मनुष्य सर हाता ै, तद भी

इसके नेव हर के नहीं रहने हैं. पर दह रंगता तहीं, इसके कान ज्यों के त्यों पहने हैं. पर बह सनवानहीं । क्यों 💓 🕏 उत्तर का 🚈 र्जिंग्यर या स्थानीत सन्दर्श 🏖

१५६ घर धानन्दमय कैसे वना सकते हैं राम कहता है, "अपने संगी के मांस-पिंड पर विश्वास न करो, भीतर के ईस्वर पर दिस्वास करो।" इस वाहरी दाल और मांस की परंदे के तुल्य जानों। और इसे आप अपने ित पारहर्शी चना लो, तथा परहे के पार भीतर के ईश्वर हमको पत्ती की तरह होना चाहिए कि जो एक ज्य क्तिती मुनती हुई फुनगी (डाली) प्र उत्तर पड़ता है। त्राकता रहता है यह जानता हुआ कि उसके पंच है। डाली जाता रहता है, यह जानता हुआ कि उसके पंच है। डाली जगरनीचे मृत्तती है, पर पत्ती भयभीत नहीं होता, क्योंकि पर्चिप वह डाली पर बैठा हुआ है, त्यापि अपने परों के भरोते हैं ऐसा समना । पनी जानता है कि वह डाली पर भरोसा नहीं कर रहा है, चिक्क स्त्रपने परो पर । यही डं है। उत्तका भरोसा उस डाली पर नहीं है जिस पर वह वैद हुन्त्रा है। यह प्रपने पंद्धों पर भरोसा करता है। इसी तरह जहाँ कहीं आप हो, अपनी स्त्री ह वर्षों से किनने ही अनुरक्त क्यों न हो, किन्तु इनमें

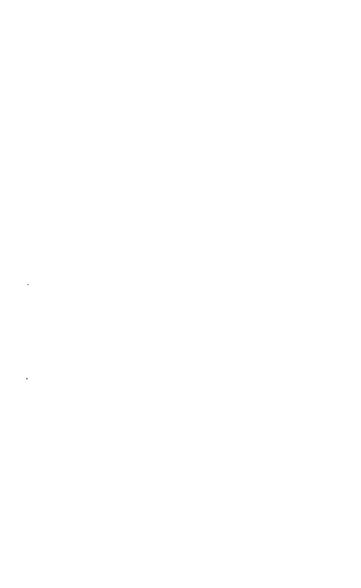
न तनाजा। हत्य को परमत्वर के साथ रक्यों। दिल की न्नप्रमारमा से लगाये रही। यही उपाय आप स्वयं स्वरं वस्त करा. स्वरं स्वयं स्वरं नया वर्ष आर्थाः व्यावः कावाच्याः हो जा भीतिस्य व्यावः कावाच्याः हो जा आर वे इस्तान होते प्रारंतन वा नाम नहीं व स्वरीतः स्वरमा इस तर हराइ समारकार खा राम राष्ट्राव पार १

स्यार रात के प्राचक स्वर स्वर स्वर रात है. एक स्थान पर हैं अर्थेत संभाग (५३) हमा गया।

क े मा दे वह बहु खरता खासने (००००)



से साज्ञीवत् हम इसे देखते हैं। तब हमें आनन्द आता है। तव यह ऋति रुचिर हो जाता है। इसी तरह अन्तर्गत परमेश्वर को प्राप्त करो। राम के सब व्याख्यान सुनो, धीरे-धीरे उन्नति करते हुए आपको विश्वास हो जायना। राम जिम्मा लेता है कि इस संसार का कोई भी व्यक्ति चिद राम के सव च्याख्यान सुन लेगा, तो उसके संशय दूर हो जायँगे, अपनी ईस्वरता में उसे श्रवस्य विस्वास हो जायना। पहले श्रपनी दिन्यता तथा ईश्वरत्व में गहरा विश्वास (पवका निश्चय) प्राप्त करो । इसे पा लो फिर उस विधि से, वा उन उपायों से, जो वताये जायँगे, ञ्चाप उस परमेश्वर में श्रपना केन्द्र जमास्रो, वही हो जाञ्जो, शास्वत और सर्वशक्तिमान परमेश्वर अपने को अनुभव करो। "वही में हूँ, वही।" यह खनुभव करो छौर अपने सव घरेलू सन्दन्धों तथा इन सव मामलों को इस तरह देखों कि मानों वे एक तसवीर हैं, मानो हुमसे कोई लगाव ही नहीं है। यह विपरीत और स्वतः विरुद्ध जान पड़ता है। लोग कहते हैं कि चदि हम इन मामलों में न उलमें तो कोई चन्नति कर ही नहीं सकते। छरे! छाप भूल रहे हो। उन मामलों में फँसते ही आपकी उन्नति हक जाती है। जब आप लिखते हो। तो लिखना अञ्यक्तित्व (अकर्तृत्व)भाव से होता है। उस समय आपका आई-भावः आपका तुन्ह, आहंकारः मिध्या अहंकार विलब्जल गैरलाजिर होता है। और अनायास बंबदन काम किया जा रहा । यह एक प्रकार से ए तज्ञ या रूप वर्स है, हाथ अपने छाप १ स्वता जा रहा है। अयो विश्वीप छाप न्यपने तुच्छ छहंबार को स्वाधी छन को सामने सारस्या हो हो । इसी ही आप अपने उपन के बचारते रहेको । अहर नेने राय हा लिखा है, सेने कमान 'क्या है, 🙉 हा आप मूल कर हैंदोंने । इस तरह हम देखते हैं व अभ वंबल तभी होता है,



१६३

दैवी विधान यह है कि मन तो शान्त, स्थिर स्त्रीर ष्पचञ्चल हो, और शरीर सदा कर्मच्य रहे। चित्त तो स्थिति-शास्त्र (स्टेटिक्स Statics) के नियमाधीन रहे, और देह गति-सास्त्र (डाइनेमिक्स, Dynamics) के नियमायीन हो । बाह्य शरीर काम करता रहे खौर भीतरी अपना आप सदा स्थिर रहे, यही देवी विवान है। स्वाबीन बनो। वस्तुओं को ठीक उसी तरह कोमजता से स्थित रहने दो, जिस तरह नयनगोचरीभूत भूप्रदेश [Landscape] नयनों पर स्थित रहा करता है। हष्टिगोचर भूप्रदेश नेत्रों पर सचमुच, पूरी तरह, समप्रता से, अवस्थान करता है, किन्तु अति कोमजता से । वह नेत्रों पर वोम नहीं डालता । सम्पूर्ण भूभाग (Landscape) का अवस्थान नेत्रों पर है। किन्तु नेत्र स्वाधीन हैं भार से दये नहीं हैं। श्रपने घरेलू मामलों में, खपने पारिवारिक या सांसारिक जीवन में श्रापकी स्थिति भी ठीक ऐसी ही होनी चाहिए। छाप इन सव न्यापारों को हेखो और निर्तित वने रहो। स्वतंत्र रहो। श्रीर यह स्वाधीनता मिल सकती है केवल सच्चे आत्मज्ञान के द्वारा, पूर्ण तत्त्व के अनुभव हारा। जिसे वेदान्त कहते हैं। सच्चे आत्मदेव का अनुभव करो। और सब नक्त्र नथा तारागए। आपकी खादा पालेगे !

सूर्यों घीर नहत्रों या सूनियों घीर समुद्रों ! चक्कर देते रही मेरे स्वप्त की प्रतिच्हाया को , मैं चलता हूँ, मैं फिरता हूँ, मैं घाता हूँ, मैं जाता हूँ। गति, गतिमान् घीर गतिकारक मैं (हूँ)। न विश्राम, न गति हैं मेरी या तेरी।

कोई शब्द मुक्ते कदापि वर्णन नहीं कर सकता।

चमको. चमको, होटे तारो !

चमकते हुए. पलकते हुए. संकेत करो, मुक्ते पुकारो ।

उत्तर पहले दो. ऐ मुन्दर तारो !

कर्रा के लिए संकेत नुम्हारा. कर्रों मुक्ते पुताते हो ?

नुम्हारे नयनों की प्रभा हूं ,

तुम में जो जीवन वह में हैं।

यह है तुम्हारा सच्चा स्वरूप। तुम वास्तव में जो कुछ हो। वह यह है। यह अनुभव करो और मुक्त हो। यह अनुभव करो और तुम विश्व के स्वामी हो जाते हो। यह अनुभव करो और तुम दिवा विश्व के स्वामी हो जाते हो। यह अनुभव करो और तुम देखाँग कि तुम्हारे उत्तम के सब मामले तुम्हारे सब स्वप्याप क्यानं क्यानं अस्याम

गृहस्याश्रम श्रोर श्रात्मानुभव ।

(ता० र फरवरी १६०३, रविवार, सन्ध्या-समय)

कोई विवाहित मनुष्य (गृहस्य) श्वातम-साचात्कार की श्रीभेलापा कर सकता है १ * यह प्रश्न कुछ समय पहिले राम से पूछा गया था और उसका पूर्ण उत्तर भी उस समय दिया गया था।

राम बाज उसी विषय को नहीं हेड़ेगा, किन्तु उसी के समान ब्यन्य विषय पर बोलेगा।

इस प्रश्त के उत्तर में कामनाओं के स्वरूप का निरूपण दिया गया था। अर्थात् "कामना क्या वस्तु हैं और मनोरथ मनुत्य के स्वभाव पर क्या प्रभाव डालते हैं? कामनाओं की पूर्ति से क्योंकर सुख और अपूर्ति से क्योंकर दुन्स होता है?" आदि प्रश्नों का विचार किया गया था। यह प्रश्न बहुत वहा और जटिल हैं। और इस पर राम ने बहुत गंभीरता-पूर्वक विचार भी किया है। राम के अनुसंधानों का फल "मनोवेग सास्त्र (Dynamics of mind)" । नामी प्रस्थ में प्रस्तत किया जावेगा।

े "क्या छपने पुत्रः कलत्रः स्नेहीः सम्यन्धियों में रहनेवाला गृहस्य वा वृक्षरे राष्ट्रों मे एक साधारण सांसारिक मनुष्य

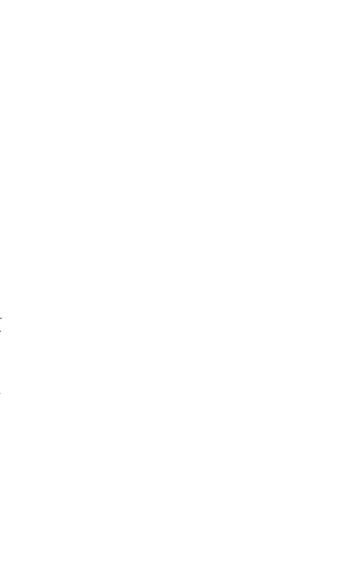


जिल्द तीसरी गृहस्थाश्रम श्रोर खात्मातुभव

की शैली ऐसी थी कि गंभोर-से-गंभीर मनुष्य भी उससे मल्ला उठता। पर वह धर्मात्मा मालिक उस नोकर पर कभी कृद्ध न होता, उत्तदे वह उस दुष्ट के साथ अति प्रेम का वर्ताव करता। एक समय उसके एक अतिथि ने उस नौकर के विरुद्ध बहुत-सी शिकायत की। वह उसके कामों से बहुत विन्न और कृद्ध हुआ था. और उसके मालिक को उसे निकाल देने को कहा। पर मालिक ने उत्तर दिया — "आपकी

सत्ताह अत्युत्तम है और आपने शुभेच्छा-पूर्व क यह सम्मति ही है। मैं जानता हूँ कि आप मेरे शुभ-विन्तक हैं और मेरे कार्य्य को वृद्धि चाहते हैं, जिससे केंग्र यह सम्मति देते हैं। पर में इस बात को अधिक जानता हूँ। में जानता हूँ कि पर में इस बात को अधिक जानता हूँ। में जानता हूँ कि मेरा काम-काज खराब हो रहा है। इससे मेरे क्यापार को हानि पहुँच रही है। किन्तु में उसे इसीलिये रखता हूँ कि

वह इतना अनाज्ञाकारी वा अविश्वासी है। यह उसका दुष्ट श्राचरण श्रोर खराव स्वभाव है. जिससे वह मुक्ते इतना प्रिय हो जार श्राद करता हूँ।" उसका ऐसा कहना यहा ही छारपण्य-अधिक प्यार करता हूँ।" उसका ऐसा कहना यहा ही छारपण्य-जनक था।



श्रीर ले जाने के स्थान पर सम्पूर्ण शरीर को अपने साथ ले जा सकते हो। छाप अपने पुत्र-फलब को। मानो छपने दिल-दिमारा श्रीर हाथ-परों को। साथ ले जा सकते हो।

इस तरह परमात्मा के साथ अभेदता और एकता अनुभव करने के पूर्व छाप छपनी स्त्री और पुत्र के साथ एकता अनुभव करो । जिस मनुष्य ने अपनी अर्थांगिनी और पुत्र-कलत्र के साथ एकता अनुभव नहीं की, वह सबके साथ अपनी एकता का अतुभव कैसे कर सकता है ?

वेदान्त की दृष्टि में स्वामाविक मार्ग तो यही है कि जिसके साय ज्ञापका सन्वन्व हो. उसी के साथ एकता अनुभव करना आरंभ करो। आपके जो प्रियतम हों उन्हीं में आप अपने को लीन कर दो। अपने हित को उनके हित में लीन कर दो। नव शरीरों को मिलाकर एक कर दो। सर्वो को मिलकर एक धारा-प्रवाह वन जाने दो. और फिर अनुभव-पर-अनुभव प्राप्त करने जास्त्रो । तदनन्तर इसरे परिवारों को लो श्रीर क्रमशः इन्नित करने हुए सब परिवासे को अपना शरीर वना लो । जब आप सब व्यक्तियों को अपना शरीर समभ लोगे. तब त्राप परमात्मा के साथ एकता अनुभव कर सकोगे, तब आप प्रस्येक की अपने साथ ले जा सकोगे।

इसाइयो का पर्म-पुस्तक । बाहाबिल में शिष्य सेट जोस मंत्रा सम्बन्ध में हम पटने हैं कि उससे हजरत (स' ंम वरते थे । (सा समस्त संसार से प्रेम करते वे । " व्याने इसा ने पेम किया।" इस कथन को थोड़ा बरल हुने के बी हो लगा है के शिष्य ने ईसा से प्रेस किया इसने १५१६ भिज्ञान । सा जरा मुक्ति । का मृत्रमुव मिल जाना है

"आंगन-पत्यागत बरावर और परस्पर विरोधी

श्वापको याद होगा कि श्वात्मानुमव वा तत्त्व-साज्ञात्कार की यह पहली सीड़ी है। यह समस्त जगन् हो जाना है। फिर दूसरी सीड़ी उस (जगन्हप) से अपर उठना है। एक दिन राम ने श्वपने ज्याख्यान में दो प्रकार के श्वध्यासों का वर्णन किया था—एक स्वरूपाध्यास श्रीर दूसरा संसर्गाध्यास।

स्दर्भाध्यास के कारण नाना व्यक्तित्व एवं उनमें परस्पर भेद-भाव को कल्पना उत्पन्न हो आती है, और इसी से वह ध्रन्धापन व ध्रन्थकार उत्पन्न हो आता है कि जिससे मनुष्य को प्रत्येक में ईस्वर देखना नहीं मिलता। यही उस मानसिक व्याधि का हेतु है, जो आपको विश्व के सब पदायों में एकत्व का ध्रनुभव करने नहीं देती। संसर्गाध्यास बाह्य विपमता है, नाम-त्रप का भ्रम है।



अपनी एकता अनुभव करने लगते हो। और फिर धीरे-धीरे समस्त देश के साथ एवं समस्त जगत् तथा विश्व के साथ उत्तरोत्तर एकता श्रनुभव करते हो । यह वहुत कठिन काम मालूम होता है, पर वास्तव में यह बहुत कठिन है नहीं। आरंभ करना कठिन है। पर कुछ ही काल वाद प्रगति (progress) तीत्र हो जाती है। जब एक बार कोई न्यक्ति किसी अन्य न्यक्ति के साथ अपनी अभेदता अनुभव कर लेता है तथा दूसरे में नानों विलीन हो जाता है। तय वह प्रत्येक के साथ अपनी एकता अनुभव करने लगता है। अनुभव से यहाँ यह स्पष्ट होना है कि प्रकृति के श्राटल नियमानुसार जगन में जो कृद्ध प्रीति है। बह हमको बलात्कार ऐसी नियति में ले जाती है कि जहाँ हमारा प्रेम-पात्र याग्र जगन का विषय नहीं रहना, जहाँ हमारा प्रेम दान रग-रप-प्राशृति वा लिग चिह्नो पर नहीं टिकता वरन जा प्रेम अधिकाधिक श्रन्तरात्मा सर्वादार सन्त पर हो जिस्ता ह

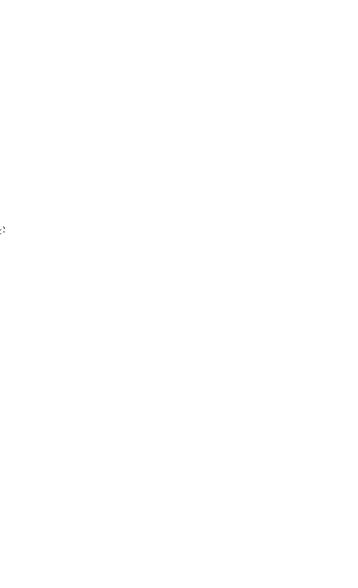
্টিয় লংগা হল ব্যান বী নহগ্ৰ বিষয় লালক न्यराद्धाः ३ ५ ३ ५ ३ वर्षास्यक्ताः स्थानः । १० वर्षेत्रः नाते লাক্ষ্য (১৯০৮) কে জন্ম কোৰো কোনা কৰিছে জন



काहत्व की फवस्था में कुछ काल रहने के बाद दूसरी इससे भी उच्चतर स्थिति छाती है। तब हम परमात्मा में पूर्णतया लीन हो जाते हैं। जब हम इस तरह समाधि पूर्णतया एकता निमन्तता वा लय की अवस्था में होते हैं तो वह परमात्म-अवस्या है। इसको इम निर्वाण या समाधि अवस्या कहते हैं, ऐसी अवस्था में अन्त करण में न कोई स्करण होता है, न जोभ और न विरोध।

उस स्थिति में कमशः पहुँचने के लिए हम अपने सांसारिक क़द्रस्थियो तथा सन्दरिययों से किस प्रकार सहायता प्राप्त कर सकते हैं ^

भारतवर्ष में ऐसे लोग हैं, जो रोमन कैयोलिको की नरह ईरवरंग्यमना जरते हैं, जो ईरवर-पूजन प्रतिमात्री द्वारा करों हे हो बहु राम वा कुप्ता की प्रतिमा को (अधिकतर)











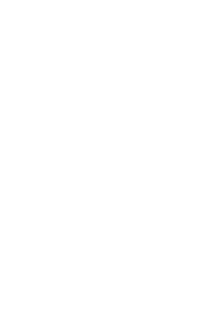














पहनना पड़ता था, उन्होंने ही संसार के लिये इतना उपकार किया है। भारतवर्ष के हिन्दू लोग पहिले जंगली कन्द्र-भूल पर ही गुडारा करते थे, पर रन्हीं लोगों ने जगन् को सर्व-श्रेष्ठ तत्त्वज्ञान, वेदान्त (मोच श्रोर भिक्त का दर्शन-शास्त्र) प्रदान किया है।

श्रपने को श्रेष्ट श्रीर सत्पुरूप बनाने का प्रयत्न करो ।
मन्य भवन श्रीर सुन्दर सदन दनाने में श्रपनी शक्ति मत
जर्चो । श्रपने विचार नष्ट न करो । बहुतेरे गृह वड़े के चे
श्रीर शालीशान हैं। पर उनमें रहनेवाले मनुष्य दिल्कुल ही
ितने श्रीर जुद्र हैं। मारत में श्रनेक विशाल कवरें हैं। पर
जानते हो। उनके भीतर क्या है १ केवल सड़ी लाशें, रींगनेवाले
कीड़े श्रीर सौंप ।

चड़े-चड़े मकान यनाने खाँर उनमें चमकदार चीजों के सजाने में खपनी राक्ति का नाश कर खपने को खमतो पत्नी खाँर खपने मित्रों को बहा बनाने का यत्न मन करों। यदि खाप इस विचार को प्रहण कर लोगे इसे हर्द्रपंगम पर लोगे हसे जान खाँर समक लोगे कि जीवन का एकमात्र खाइर्रा खाँर इहेर राक्ति का पुरुष्योग खाँर धन का मंच्य वरना नहीं है, वरन भीतरो शक्तियों का विकास वरना ईर्पास्य खाँर मोह प्राप्ति के लिए खात्म-शिक्स परना है। यहि खाद इसका खनुभद वरके इसा खाँर खन्ना सारी शक्ति यो लगावांने, तो पारिवांस्य बन्दन बभी खादके लिए विकास सम न होंगे।

्राप्त लोग वर्षे हैं। इस तो सारी रीति से रह सहते हैं। पर इसारे मेहमान भी लोही। याद इस लोग बसरएल शाहि धारण बरेनों वे क्या बहेंगे।

में मेरे प्यारे विम अपने लिए बींग हो। या दूसरों के

तिए ? अपने लिए जीओ । तुम्हारे जीवन में दूसरों को दखल देने की आवश्यकता नहीं है । अपना भोजन करते समय तुम भोजन करते हो या वे ? तुम अपना खाना आप पचाते हो वा तुम्हारे लिए वे पचाते हैं ? देखते समय तुम्हारी अपनी आँखों के स्नायु तुम्हें सहायता देते हैं या उनकी आँखों के ? अपने गुरुत्वाकर्पण का केन्द्र (centre of gravity) तुम आप वनो । स्वान्नयी हो। जरा अपने भीतर के आधार।वा अधिष्ठान को पा लो, और मेहमानों के मत वा विचारों की परवाह मत करो। भोजनों श्रीर विद्यावनों को श्रतिथि-सत्कार का मूल-मंत्र न वनात्रो। लोग सममते हैं कि मेहमानों को स्वादिष्ट मोजन श्रीर सुन्दर पलंग नहीं देंगे, तो हम पूरे श्रतिथि-सेवी न होंगे। इस प्रकार घर का स्वामी इन चीजों का एक अनुबंध (appendage)-मात्र रह जाता है। कृपा करके अपने को द्रव्य का उपकरण (appendage) न वनात्रो, द्रव्य को ही अपना उपकरण 🤏 बनाश्री, अपनी शक्तियों का श्रनुभव करो।

ऐसा करो कि जब तुम्हारा मेहमान (श्रातिथि) तुम्हारे यहाँ से अपने घर को जाने लगे, तो वह स्वच्छ चित्त, उदित और संमुन्नत होकर जाए। यह योजना करो कि जैसा वह अपने घर से आया है, उससे अधिक वुद्धिमान बनकर जाए। अपने स्वजनों के प्रति अपना यही कर्तव्य समको। अपने परिवार को सुखी करने का यही मार्ग है। इसी नरीक़ से गृहस्थी श्रपने क़ुटुम्ब को विघ्न-चाधा के स्थान पर उन्नति का सोपान वना सकता है। यदि तुम्हारा श्रातिथि पहिले की श्रापेक्ता श्राधिक बुद्धिमान होकर लोटता है, तो उसके खाने-पीने की श्राधिक परवाह न करो। उसे इनसे कुछ श्रेष्टतर चीज दो: उसे ज्ञान श्रीर बुद्धि दो। उसे श्रापको पीति का

\$ 6.3

श्रानन्त लुटने हो । याद रचन्यों कि याँद में तुम्हें एक कीई।
भी न दुः लुह भी शारीरिक भेषा न कमें केयल प्यार से,
भरूचे खाँर सारु दिल से तुम्होरे प्रति प्रमन्नता भरी हुँसी
(Sante) हूँ, तो तुम्हारा प्रकृत्तित होना, सगुन्नत होना
श्राँर उद्गलना प्रानिवार्क्त हैं। हनने से ही तुम्हारी यहीं सेवा
हो जाती हैं। किसी मनुष्य को धन देना कुछ नहीं है, यह
वसा है कि पहिले पस्ती को धन देकर पीछ से त्याग देना।
पत्नी को धन नहीं चाहिए, उसे प्रीति चाहिए। किमी मनुष्य
को धन देकर तुम पातकी का-सा श्राचरण करते हो। तुम
इसे घोला देकर मुलाया चाहते हो। उसे प्रेम श्रीर ज्ञान दो,
उसे स्वच्छ चित्त श्रीर समुनत बनाश्रो। यह भारी श्रतिधिसत्कार है, श्रीर यही तुम्हें करना चाहिये। ऐसी ही प्रीति
तुम्हें श्रपनी स्त्री श्रीर यच्चों के साथ रखनी चाहिये।

338

कितने पाप छौर भूलें करुए। के नाम से की जाती हैं ? साधी को सुख देने (Congeniality) की इन्छा से कितनी भूलें हुचा करती हैं ? एक मनुष्य की कुछ ऐसे नवयुवकों की संगति हो गई कि जो खाना-पीना और मौज उड़ाना पसन्द करते थे । श्रस्तु, नौजवानों की टोली में से एक कहता है कि मद्य पी जाय। दूसरे साथी राजी हो जाते हैं, और यह नया (जजनवी) चादमी चन्हा साथी (संगी) वनने की इच्छा का शिकार होता है, और केवल उन्हें (श्रपने साधियों को) खुश करने के लिए शराव पीना शुरू करता है । उसकी अपनी इच्छा मद्य-पान की नहीं है. किन्तु अपने सहचरों (संगियों) को ख़ुश करने के लिए वह उनका अनुकरण करता है। उसमें दूसरों को प्रसन्न करने की अभिलापा है, और यह इच्छा ही इसे शराव पिलाती है। दूसरी बार यही सज्जन वैसी ही संगति में पड़ जाता है, और दूसरों को केवल प्रसन्न करने की इच्छा से शराय पीने को फिर प्रलोभित होता है। श्रौर समय-समय पर ऐसा ही करते-करते एक वह समय आ जाता है कि जब मश-पान के न्यसन का वह तुच्छ दास वन जाता है। इसी तरहः केवल दूसरों को प्रसन्न करने के अभिप्राय से नारियां भी वह काम करती हैं जो धीरे-धीरे उन्हें किन्हीं दुरुर्यसनों की दासी बना देता है। इसलिए वेदान्त कहना है कि दूसरों को प्रसन्त करने की यह रच्छा वालव ने छज्ञान, व्यक्तिता और मिध्याभिमान के योग के सिवाय और बुद्ध नहीं है। बूसरो को प्रसन्न फरने की नीयन (उदेश्य) से कभी कृद्ध मत करो। जो 'नहीं कह सकता है। वह बीर है। 'नहीं' कहने की खपनी सामध्यें से खापका परित्र-यल खौर बहाउुरी प्रकट होती है।

श्रव दया के सम्बन्ध में लीजिये। केवल यह समकते हुए कि दूसरों के भावों का उन्हें श्रादर करना चाहिए, कितने लोग श्रपने को नरक में रखते हैं ? राम जो कह रहा है, उसे श्राप चाहे दारुण वा घोर पापिष्ठ क़ानून कह लें, किन्तु यह वह क़ानून है, जिसका गुण श्राप एक दिन श्रनुभव करेंगे।

जरा खयाल तो कीजिए कि इस संसार में कितने लोग केवल इसीलिए नरक भोग रहे हैं कि वे दयावान हैं; सम्बन्धियों या सुहज्जनों के विरुद्ध होने के कारण अथवां किसी मनुष्य का हृद्य दूट जाने के भय से वे सत्य का अनुसरण करना या सत्य की आज्ञानुसार वरताव करना निद्यता सममते हैं।

वेदान्त कहता है, आप सत्य पर इसीतिए आपित करते हो कि उससे किसी का दिल टूट जायगा, तो सत्य की हत्या होने की अपेचा किसी व्यक्ति की मृत्यु वेहतर है। वेदान्त कहता है, "इस या उस व्यक्ति के भावों की अपेचा सत्य का अधिक आदर करो", क्योंकि सत्य का आदर करना वास्तव में मित्र की क़र्र करना है। उसके मिध्याभिमान या इच्छाओं का जितना ही अधिक आदर या ध्यान करोगे, उननी ही अधिक चेष्टा आप कर रहे हो उसके सच्चे आत्मा के वय को, जो 'मत्य' स्वरूप है। "उसके वाह्य शरीर की अपेना 'मत्य' का अधिक आदर करो।"

पुनः कितने लोग ऐसे हैं, जो आत्म-सम्मान की इस कल्पना के कारण अपने लिए नरक की मृष्टि रच रहे हैं? कैसा घोर अनर्थ समफा जाता है। 'आत्म-सम्मान' से लोग इस तुच्छ शरीर का, इस तुद्र व्यक्तित्व का, 'आत्म-सम्मान' सममते हैं।

मातात्रों, बहनों, पितात्रों, भाइयों त्रौर बच्चों के रूप में हे परमात्मस्वरूप ! हे परमेरवर ! तू देख कि त्रातम-सम्मान का द्यर्थ इन तुच्छ शरीरों या व्यक्तित्व का सम्मान नहीं है, समस् ले कि ज्ञात्म-सम्मान का अर्थ है 'सत्य' का सम्मान, सच्चे स्वरूप (ज्ञात्मा) का सम्मान । जिस प्रकार के 'आत्म-सम्मान' को तुम उत्तेजना दे रहे हो, उससे 'आत्म-सम्मान' की ज्ञोट में तुम जपने सच्चे 'ज्ञात्म' का अपमान करते हो ।

जव आप ईश्वर-भावना से परिपूर्ण हो जाते हो, तब आप अपने आत्मा (स्वरूप) का सम्मान करते हो; जब आप अन्तर्गत ईश्वर के ध्वान से परिपूर्ण होते हो, तब आप आत्म-सम्मान से परिपूर्ण हो। देह की पूजा के द्वारा आप आत्महत्या कर रहे हो, आप अपने लिए गड़ा खोड़ रहे हो।

मांस के विषय में वेदान्त कहता है, ''श्रयने रारीरों से लग्न न लगाश्रो, श्रपने रारीर के मरने या जीने की चिन्ता न करो, श्रापके रारीर की लोग पूजा करते हैं या उस पर देले मारते हैं, इसकी परवाह न करो। इससे अपूर उठो।'

एक मनुष्य इस शरीर को बस्त्र पहनाता है और दूसरा उन्हें फाड़ डालता है, इसकी कोई परवाह न होनी चहिए।

"जय कि स्तुतिकर्ता और स्तुत्य, या निदक श्रीर निद्य (वास्तव में । एक ही हैं, तो न निन्दा है न स्तुति।"

इस दशा में, यदि आप अपने सच्चे स्वरूप (आतमा) का अनुभव करें यदि इस जुद्र शरीर का ज्ञान आपके लिए मिध्या हो जाय तो जहाँ तक आपका सम्बन्ध है. दूसरों के पाहरी मांस और खून का आदर तायब हो जायगा।

श्राज राम श्रापके कुछ श्रति प्रिय श्रन्थ-विश्वासों को चकना-चूर कर देगा।

वेदान्त कहता है. "दूसरी मूर्तियों को छाप उसी छंश तक सधी समक सकते हो. जिस छंश तक छाप छपनी देह-हसी प्रतिमा को छसली समकते हो।" यह नियम है। दूसरों

है, उसमें विकार हो ही नहीं सकता, वह निर्विकार श्रौर निर्विकल्प है। श्रौर उन्होंने उससे कहा, "श्रर्जुन, तू मर नहीं सकता। इन देहों में से चाहे किसी को भी मिटा दे, पर उसका श्रसली स्वरूप (श्रात्मा) कभी नहीं मरता । तुम कभी नहीं मरते। और यदि तुन्हें पूर्ण सत्य का वीध भी नहीं, तथा श्रावागमन की चार दीवारी में ही तुम केंद्र हो। तब भी जान लो कि अपना या उनका व्यक्तित्व सत्य नहीं है, सच्चे खरूप (जात्मा) का श्रतुभव करो, जो परमेश्वर हैं, श्रीर जो श्रमर है। तुम कॉपते और धर्राते क्यों हो ? श्रपने उपस्थित कर्तव्य को देखों । यदि इस समय तुम्हारा सांसारिक कर्तव्य इस सब मतुष्यों का वध करना है, तो इन्हें मार डालो।" भगवान् कृप्ण उससे कहते हैं, "में देवों का 'परमदेव' हूँ, प्रकाशों का 'प्रकारा' हूँ, और क्या प्रतिक्षण में कोटियों पत्ती-पशुत्रों का नारा नहीं कर रहा हूँ ? उन्हें शून्यता में नहीं फेंक रहा हूँ ? में—'प्रकृति', परमेश्वर, जगन्नियन्ता—सदा चे काम कर रहा हूँ, फिर भी में सदा निर्लिप और निर्मल हूँ। ईश्वर नाश करता है, तो क्या ईश्वर दोपी है ? नहीं, ईश्वर फिर भी शुद्ध है।" फिर भगवान् कृप्ण अर्जुन से कहते हैं, "यदि तुम सत्य का अनुभव करो, यदि तुम परमेश्वर से श्रमेद हो जान्नो, यदि तुम इपने शुद्ध स्वरूप का श्रतुभव करो, तो तुम्हारी देह परमात्मा का यंत्रमात्र वन जाय। यदि न्यायः धर्मः सत्य खौर छिधकार के लिए तुन्हारा हारीर लाखों और करोड़ों का संहार भी कर दे तो भी तुम शुद्ध, श्रविकल और निष्कलंक रहते हो।"

यह सत्य लोगों को अनुभव करना होगा। किन्तु आप इसका अनुभव करो या न करो। राम को सत्य कहने से रफना उचित नहीं। वह वेदान्त था, जिसने नर-संहार करने में, विलक् ऋजुंन के अपने वहुत नगीची और प्रियतम सम्बन्धियों का तथा अपने गुरु, चचा, भाई, वन्धुओं का नाश करने में कोई आगा-पीछा नहीं किया था। वेदान्त कहता है, इनके वध करने से अर्जुन दूपित नहीं हुआ। तो फिर चकरों या भेड़ों, वैलों या कोई भी पशुओं को मारने में वेदान्त कैसे संकोच कर सकता है ! पर फिर भी वेदान्त मांस से परहेज करने को आपसे कहता है, पर विल्कुल अन्य कारणों से।

मांसाहार श्रापको उस दशा या श्रवस्था में पहुँचा देता है, जिसमें श्राप चित्त को श्रासानी से एकाग्र नहीं कर सकते। यदि मांस-भन्नण श्राप छोड़ नहीं सकते, यदि इस श्रादत को श्राप जीत नहीं सकते, तो वेदान्त कहता है, 'श्वाश्रो, मत छोड़ो।" विभिन्न खादा पदार्थ भिन्न-भिन्न श्रसर पैदा करते हैं। मद्य पीने से मनुष्य को नशा होता है। श्रकीम खाई जाने पर एक खास तरह का श्रसर पैदा होता है। एक मनुष्य संविया खाता है श्रीर उसका एक विशेष प्रभाव होता है। इसी तरह भोजन विशेष भी श्रपना खास श्रसर पैदा करता है। श्रीर मांस भी ऐसा ही करता है। मांस शरीर पर जो श्रसर डालता है, उस (श्रसर) की धर्म के विद्यार्थियों को श्रावश्यकता नहीं है।

पदा फरता है। श्रार मास भा एसा हा करता है। मास शरीर पर जो श्रसर डालता है, उस (श्रसर) की धर्म के विद्यार्थियों को श्रावश्यकता नहीं है।

यदि श्राप सैनिक हो, श्रथवा उद्यम-पूर्ण कृत्यों के पुरुप हो, तो वेदान्त कहता है, श्रापको मांस खाना चाहिए, क्योंकि श्रापको उसकी जरूरत है, श्रोर श्रापको केवल शाक श्रादि भोजन पर न वसर करना चाहिए। दूसरी वृत्तियों के लोगों के बारे में राम कहता है, श्रपनी-श्रपनी प्रकृति पर उसे श्राजमाकर देखों। कुछ लोगों के लिए वह हितकर है, श्रोर कुछ के लिए हानिकर। प्रकृति को योजना (plan) है कि









था। इस रमणी ने एक मातहत कर्मचारी को घ्रपना दिल दे दिया था । मातहत पदाधिकारी छुट्टी लेकर घर गया। रमणी भी मौके से लाभ उठाकर उसके घर पहुँची। विवाह की ठहर गई, श्रौर इसलिये उसने श्रपनी छुट्टी वड्वाना जरूरी समका। छुट्टी वड्डि को उसने अपने अपर के अफसर को तार दिया। अकसर को सब हाल मालूम हो नया छौर वह जान नया कि रमणी से न्याह करने के लिए छुट्टी माँगी गई है। वह अकसर ईर्ष्याल या और छुट्टी नहीं देना चाहता था । जवाव में उसने जल्दी से हुटप्पी (संत्तिष्त) भाषा में यह संदेश भेजा, ''तुरन्त मिल जान्त्रो (Join at once) ।" उसका मतलव था कि मातहत पदाधिकारी तुरन्त आकर सेवा में सम्मिलित हो। यह मनुष्य वह संदेश पढ़ रहा था, जिसमें कहा गया था "तुरन्त सम्मिल्त हो" श्रीर वह बहुत पाहता या कि पर पर ठहरू किन्तु सन्देश कहता या "तुरन्त सम्मेलन करो।" उसे इस यात से बड़ी निराशा श्रीर व्ययता हुई। जब उसके चित्त की यह हालत धी तव रमणी छाई छौर उसे इतना निराश देन कर कारण पृद्धने लगी। उसने उसे तार दिखाया। रमणी को पपत मति ने संदेश का अपने अनुकूल अर्थ लगाने में उने सहायता दी। और उसने संदेश का बढ़ा ही प्रसन्तकारी प्ययं लगायाः तथा खुरी से नाचने लगी। इनने इस (प्रेमी) से पूला कि इतने उदास क्यों हो। हुन्हें तो नेरी समन से प्रमुक्तिन होना चाहिए। यह वसरे से नियनने को थी तद स्तने (प्रेमी ने) पृताः जाने की रतनी जत्ही क्यो है ? रमणी ने उत्तर दिया । 'जरहां से विवाह होने वो तैयारी परने पे लिए। इस तरा लोग धर्मधन्यों है धनना मनचड निगात तिया वरते है। ऐसा कर्य विदार वरते को कहुक

प्रश्न किया "ईरवर के कान कहाँ हैं ?" यही खेरियत है, वे इस वचन की फ़ौर भी फ़िधिक स्थूल व्याख्या नहीं करते, जो व्याख्या की जा चुकी है, वही काकी स्थूल है।

यदि देह ईरवर का आलय (मन्दिर) है, तो आपको देह भूल जाना चाहिए देह भूल जाने ही के लिए है। मन्दिर का अच्छा उपयोग उसे भुला देना ही है, न कि सब तरह की निधियों से उसे परितृप्त करना और लादना। अन्दर के ईरवर का अनुभव करो। मन्दिर अपनी चिन्ता आप कर लेगा।

क्या ईरवर सर्वव्यापी नहीं है ? क्या ईरवर का मन्दिर सर्वत्र नहीं है ? सूर्य परमेरवर का मन्दिर है । क्या सव नक्तत्र परमेरवर के मन्दिर नहीं ? हरएक वस्तु परमेरवर का मन्दिर है । राम कहता है प्रत्येक परार्थ ईरवर का मन्दिर है । देह ईरवर का मन्दिर इसलिए है कि वह आपसे अत्यन्त निकट है ।

प्रत्येक पदाध आपको परमेश्वर की शिक्षा देता है। प्रत्येक पदार्थ का मूल परमेश्वर है। इस सम्बन्ध मे राम आपसे एक बात कहना चाहता है मानमिक पीड़ा, आन्तरिक शूल, चिन्ता या क्लेश में त्य धेत सब लोगों को वह बैकुएंट का एक संदेश देन चातता है

सम्पूर्ण विश्व के इतहास के पत्नों से ईश्वर ने यह सन्देश भेजा है इश्वर यह सरोश तुम्हारी नाइयों से, तुम्हारी स्नायुख्यों से, तुम्हारे सिन्त के से नेजता है। पत्येक कुरुम्ब से, हरएक परिवार ने, भरावान इस सनोश का प्रचार कर रहा है। इस सन्देश को सुनो, इस पर ध्यान दो, खोर जपना उद्धार कर लो। यहि इस सन्देश पर ध्यान ने दिया, इसका खनाइर किया, तो अपने को फाँसी पर चटा लोगे, सरोगे, नष्ट होंगे हैं इसरा कोई उपाय नहीं है।



के इस रोग से, मिध्याभिमान के इस रोग से, देह निमित्त प्रेम के इस रोग से, दूसरों की देह के लिए इस प्रेम से, इस घद्धमूल रोग से, इस छतान से जो हुम्हें शरीर में आत्मा का विश्वास कराता है और जिसके कारण हुम देह को छपने छम्दर का सार पदार्थ सममने की भूल करते हो, इस छज्ञान से जो छपने को पूजा जाने की लालसा में बदल लेता है, हरएक व्यक्ति संसार में व्यथा पा रहा है। विना उचित मूल्य दिये इस रोग का, पूज्य होने की इस कल्पना का, छानन्द नहीं लूटा जा सकता। परमेश्वर का यह देवी विधान किसी को माफ नहीं करता, न तो ईसा को छोड़ता है और न छुण्ण को। ईसा को जीमत देना पड़ी थी, पहले सूली मिली छोर पीछे वह पूजा गया। जानून के छनुसार सुकरात ने पहले मूल्य दिया, और पीछे वह पूजा गया। कानून के छनुसार सुकरात ने पहले मूल्य दिया, जीर पीछे वह पूजा गया।

सव सिद्धों ने पहले मूल्य दिया और पीछे वे पूजे गये। तुम्हारे नेपोलियन, वाशिंगटन और अन्य महापुरुपों ने पहले मूल्य दिया और पीछे पूजे गये। न्यूटन और अन्य महापुरुपों का सहापुरुप काल में जी रहे हैं, अब वे कालों में उन जीवनों को विता रहे हैं, जो पहले बिलदान (crucifixion) के जीवन थे। वे शरीर से (अर्थान् देह-दृष्टि से) अपर हैं, भूख और प्यास की पीड़ाओं से परे हैं।

न्यूटन का जोवन-चरित्र पढ़ों, और तुम देखोंगे कि श्रनेक बार वह भोजन करना भूल गया। इन लोगों ने पहले मृत्य दिया और पीछे पूजा पाई।

क़ानून (हैवी विधान) किसी को नहीं होड़ता, वह व्यक्तियों का खादर नहीं करता, वह तुम्हारे पापियों या पुरुपदानों (साधुक्रों), तुम्हारे सिद्धों या तत्त्वद्गानियों का लिहाज (पत्त्) नहीं करता। यह निष्ठुर ख़ौर निर्देशी क़ानृन (विधान



कामनायें, जो छाप में हैं, उनकी रुप्ति के लिए उन्हें दूर कर देना चाहिए। कामनाओं से ऊपर उठो; व्यक्तित्व से, इस तुच्छ देह से ऊपर उठो।

यह एक दीपक है। पतंगों को दीपक भाता है, वे उसे प्यार करने हैं, श्रीर वे श्रांत तथा श्रपनी देहों को उसके लिए भरम कर देते हैं। एशिया में इस जल जाने को प्रेम का एक चिह्न सममा जाता है, श्रीर लोग कहते हैं, "ये पतंगे दीपक से इतना प्रेम करते हैं कि श्रपने को जला देते हैं।"

वेदान्त कहता है. "नहीं, नहीं, पहले दीपक श्रपने को जलाता है. श्रोर तत्पश्चान् प्यार किया जाता है।"

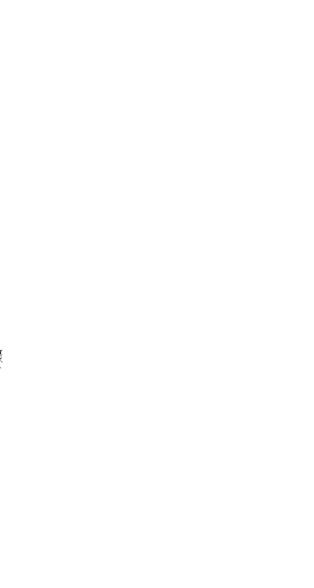
इसी तरह शरीर से अपर चठों। श्रपने इस व्यक्तित्व को जला हो। इसका दाह करों, इस नष्ट करों। इसे भरम कर दों, केवल तभी तुम श्रपनी हरूद्वाञ्चों को पूरा होते देखोंगे। तब तुम्हें पूजा जायगा। तब तुम्हारी कामना के पदार्थ तुम्हारी उपासना करेगे। उसरे शब्दों से 'श्रपना श्रद्धकार त्यागों।' यह कहना सहज करवात हमें श्रमन से लाना चाहिए।

रिक्तियों से हा तुम्हीरा मामला ईश्वर से समाप्त नहीं तो जाता मान्या से तथा राजयों को या करने से ती तुम ईश्वर से उता छार स्वायानता नहीं या सकते ईश्वर को वरवारवार कर छात से बार से बेलेगा तमा अपने ताबन के त्रसाव गान व्यवना छावार से बालेस्सान से साबेन व साथ साथसा व्यवनायान वालाय से बालेस्सान से नाबेन जारी से प्राप्त स्वयन्त्र में से उसमा प्राप्त के वालेस्सा

हरव का पहारा पानेहार अंतर की तरव प कायह सिराये नार रा हरव वे क्विम रहेद के फिल्म नम्र जाते क्विप रमें याएशा जात है कि इतना हादार नहीं होता है केवल रमका शुक्क से देशांशय साथ तिया है उसे तब है



यही था कि विभिन्न नियमों को राम ने यहाँ तक याद किया था कि वे उसकी उँगिलियों के पोरों पर मौजूद रहते थे। राम का अभ्यास इतना बड़ा-चड़ा था कि उदाहरणार्थ १ - अंकों के गुण्यांक (digits) और १७ अंकों के गुण्यक का गुण्यक फल राम तुरन्त एक ज्ञ्ण में बता देता था। क्योंकर १ अभ्यास की बदौलत। इस तरह तुम्हारा भगवन् मिन्दर केवल तुम्हारे हृदय में न होना चाहिए। वेदान्त का मिन्दर तो दुकान में है, सड़क पर है, तुम्हारे विस्तर पर (इस सत्य के मनन और अभ्यास करने में) है, तुम्हारे अध्ययन में है, तुम्हारे भोजनागार में है, तुम्हारे वैठकलाने में है, और तुम्हारे वातचीन करने के कमरे में है। इन मिन्दरों में तुम्हें रहना और सत्य का अनुभव करना होगा। ये स्थान है, जहाँ तुम्हें अपने सवाल हल करना होगा। ये स्थान है, जहाँ तुम्हें अपने सवाल हल करना होगे।



उसने विचारा ["छड़ी से काम न लेना लड़के को विगाड़ना है।" (तुम जानते हो कि अध्यापक सममते हैं कि लड़कों पर छडियाँ तोड़ डालने से उनका सुधार हो जाता है, श्रीर जितनी ही अधिक छड़ियाँ वे लड़कों को पीटने में तोड़ेंगे, उतना ही लड़के सुधरेंगे।) मन की इस अवस्था ने गुरु को घत्यन्त निर्ह्यी बना दिया, श्रीर उसने युवराज को ठोकना तथा मारना शुरू किया, किन्तु युवराज सावधान रहा। वह पहले की तरह प्रसन्न रहा, वह सदा की भाँति खुरा रहा। गुरु ने कई मिनटों तक उसे पीटा, किन्तु राजकुमार के सुन्दर मख पर क्रोध या चिन्ता, भय या रंज का कोई चिह्न नहीं विद्यःई दिया। तव तो युवराज का चेहरा देखकर गुरुजी को तरस आ गया, मानों पत्थर भी तो पिघल जाता है। गुरु ने विचार किया श्रीर श्रपने मन में कहा, यह मामला क्या है ? यह बात क्या है कि यह राजकुमार, जो श्रपने एक शब्द से मुक्त बरखास्त करवा सकता है। स्त्रीर जो एक दिन मुक्त पर स्त्रीर समग्र भारत पर हुकृमत करेगा। इतना शान्त है ? मैने इस पर इन्सी करोरना की स्त्रोर वह उस सा भी नाराज नहीं

से छड़ी गिर पड़ी, उनका हृद्य कोमल हो गया। उन्होंने युवराज को पकड़कर श्रपनी छाती से लगा लिया श्रीर उसका मत्तक चूमा। साथ ही उन्हें खपनी मूर्वता का और खपने में व्यावहारिक विद्या के स्त्रभाव का यहाँ तक योध हुस्रा कि उन्हें छपने पर शर्म छाई, छोर युवराज की पीठ ठोककर उन्होंने कहा, "पुत्र! प्रिय राजपुत्र! कम से कम एक वाक्य ठीक ठीक पढ़ लेने के लिए में तुम्हें वधाई देता हूँ। में तुम्हें वधाई देता हूँ कि कम से कम एक वान्य तो धर्म-प्रन्थों का तुमने यथार्थ में पढ़ लिया है। ऋरे! में तो एक वाक्य भी ु नहीं जानता, मैंने तो एक जुमला भी नहीं पढ़ा है, क्योंकि मुमे कोथ आ जाता है और मैं जुन्य हो जाता है, सड़ी सी भी वात मुक्ते रुष्ट कर सकती है। ऐ मेरे पुत्र! मुक्त पर द्या कर, तू अधिक जानता है, तू मुमसे श्रिधिक पठित है।" जब गुरुजी ने यह कहा जब उन्होंने युवराज को उत्साहित किया, तव युवराज ने कहा. "पिता ! पिताजी ! मैंने श्रभी यह वाक्य अन्हीं तरह से नहीं पड़ा है, क्योंकि मुक्ते अपने हृदय में कोप और रोप के कुछ लज्ञ जान पड़े थे। जब पाँच मिनट तक सके ताड़ना मिली नव सुके अपने हृदय में कोप के कुछ चिह्न मानुम हुए थे।" इस तरह पर उसने इसरे वाक्य के अर्थ भी बदल ये. इस तरह पर वह साथ बोला जब कि अपनी आन्तरिक उर्वत्तरा छिपाने क उसके लिए प्रत्येक प्रलोभन था, ऐसे में पर जब कि उसकी खशासद हो रही थी। छपने अन्त करण में गुप्त दुर्बन्ता को छपने ही कमीं से प्रकट करवे युवराज **ने** सिद्ध कर दिया कि <mark>उसने</mark> इसरा वाक्य 'सन्य बोलों' भी पढ़ लिया है। श्रपने कायां ने स्त्राने जावन दुग्रा उसने उसरे वाक्य पर भी अमन किया

तो तुरन्त उसे साफ करने का यत्न करती है। इसी तरह, ऐसी सोइवत में समय विताने के बाद कि जहाँ आपका व्यक्तित्व श्रीर श्रहंभाव उत्पन्न हुए थे, ऐसे संगियों से श्रलग होने के बाद तुरन्त ही पहला कर्त्तव्य यह है कि खाद अपने हाथ धो डालो, अर्थात् उनसे निलिप्त हो जाश्रो श्रीर फिर ईश्वर होकर बैठो।

पुनः जब श्राप रुप्ट श्रीर पीड़ित हो, जब श्रापका धड़ा ठीक न हो, खर्यान् जब श्राप श्रस्थिर-चित्त हो, तब श्रापको क्या करना चाहिए ? समान भार करने श्रयांन् स्थिर चित्त करने की उसी शैली का श्रनुसरण करो।

वैद्य का तराज् हवा के कारण जय हिल जाना है तब पलंड़ जपर-नीचे लहराने लगते हैं। इसका ये (देश) क्या हलाज करते हैं? वे उसे किसी निश्चल स्थान में रख देते हैं श्रीर फिर वह समय श्रा जाता है, जब धड़ा ठीक हो जाता है, और पलंड़ अचल हो जाते हैं। इसी तरह जब श्रापका चित्त ज्यप्र या रुष्ट हो जाय नव श्रपने को एक कमरे में बन्द कर लो. मित्रों का साथ होड़कर एकान्त में चले जाशां। समय और एकान्त श्रापको बणवान बना हो। हो का उशारण करो श्रीर बहान्त का मनन करो. श्रपने हश्यरत हो। श्रपनी हिल्ला वो सोची पर अनुनव करों। श्रपने हश्यरत हो। श्रपनी हिल्ला वो सोची पर अनुनव करों। श्रपने हश्यरत हो। श्रपनी हिल्ला वो सोची पर अनुनव करों। श्रीर श्रापका हो। हो।

रह सकते हो, यह भागीरथ श्रम आप अपने भीतर कर सकते हो, यह सम्भव है, यह आपके अपने तेज पर निर्भर है।

राम आपसे कहता है कि मैं भय से, चिन्ता से, रोप से परे हूँ। किन्तु निरन्तर साधन से इसकी प्राप्ति हुई है। निर्वलता और अन्धिविश्वास के अत्यन्त गहरे गढ़े से अभ्यास ने राम को उपर निकाला है। एक समय राम अत्यन्त अन्धिविश्वासी था, हवा का हरएक मकोरा राम के चित्त की समता को विगाड़ देता था। पर अब सर्व अवस्था में चित्त अचल और सम रहता है। यदि एक आदमी ऐसा कर सकता है, तो आप भी कर सकते हो।

お!器!! #!!!

एकसाँ है। सभी को सत्य की यह कसौटी मान्य है। जो ज्ञायम रहता है, वह असली है। अधिष्ठान अर्थात् द्रष्टा के स्थिति-बिन्दु से यह चेतना तीन विभिन्न रूप प्रह्म करती है। जायन द्राा में यह चेतना देह से अपनी अभेदता स्थापित करती है और जब आप 'में' शब्द का प्रयोग करते हैं, तब श्रापको इस शरीर, इस देह-चेतना का दोध होता है। स्यप्नशील अवस्था में वह विलक्कल दूसरो ही दशा धारण करती है। श्राप बदल जाते हैं। स्वप्नशील द्रष्टा वैसा हो नहीं है, जैसा कि जावत्-द्रष्टा है। आप अपने न्द्रप्तों में अपने को निर्धन पाते हैं, यद्यपि म्राप धनी हैं। श्राप श्रपने को शत्रुश्रों से विरा हुआ पाते हैं, आपका घर अन्ति से नष्ट हो जाता है, और आप विवस जीने बचते हैं। अपने स्वप्त में आपने चाहे कुछ पानी पिया हो। किन्तु जाराने पर आप अपने को प्यासा पाने हे । स्वानशीन दृष्टा जाप्रन्-दृष्टा से भिन्न है । इस तरह चेतना स्वान की श्रवस्था में एक रूप धारण करती है. छोर जायतु-स्रवस्था में इसरार स्त्रीर गांड निदावस्था में नीसरा रूप धारण करती है। स्त्रापकी चेतना नव । गाद निदा से । असना से अपना अभेदना स्थापन करनी है। आप कहते हैं सुनवी इतना गर्ग नीह आई वि मैंने कोई स्वात भी नता है। " गाइ निहा का दशा है ह्यापसे कोर्द ची हरे में बराबर जाएता रहना है। जो तन सोना बर्गा ख्रापका अस्यावक ध्रास्मा । स्वस्य ५ में । बहा जिल्लामन चनना से गुगव व वह हात चनना है। वह बागवर उदस्य व्यपना काउँ है

एवं मेलाय श्रीता छोर कहन है। एक्ट राम बा ब यके मैं ब्राहवे स्टीट पर था। श्रीर मैंने कुछ नहीं देखा । है समय वहाँ एक भी व्यक्ति नहीं था।" हम उससे कहते हैं कि वह अपना वयान लिख दे कि उक्त सड़क पर अमुक समय पर एक भी व्यक्ति मौजूद नहीं था। वह मनुष्य कहता है कि यह वयान सत्य है, क्योंकि मैं प्रत्यच्चदर्शी गवाह हूँ। तब प्रश्न किया जाता है, "नुम कोई चीज हो या नहीं हो ? यदि यह वयान तुम्हारे प्रमाण पर हम मानें, तो यह आत्मविरोधी है। यदि यह वयान सत्य है, तो आप वहाँ मौजूद थे।"

जब कोई गाढ़तम निद्रा में है, तब वह जागने पर कहा करता है कि मैंने कोई स्वप्न नहीं देखा। हम कहते हैं, भाई! तुम यह बयान तो करते हो कि वहाँ कुछ नहीं था, किन्तु इस वयान के सही होने के लिये तुम्हें घ्राकर गवाही देना पड़ेगी। यदि घ्राप वस्तुतः ग़ैरहाजिर थे, तो यह गवाही घ्राप कैसे देते हो ? घ्रापमें कोई चीज ऐसी है, जो उस गाढ़ निद्रा में भी जागती है। वह घ्रापका वास्तविक स्वरूप (घ्रात्मा) है, वह चेतनस्वरूप वा ज्ञानस्वरूप (Absolute will or \insolute consciousness) है।

देखिये, इससे सारे संसार का प्रमार कैसे होता है।
निदयों को देखिये। उनकी तीन दशायें होती हैं, एक हिमानी
(glacier), दृसरी छोटे चरमों छोर नालों की। वरफ पिचलते
ही नदी बहुत ही कोमल, शान्त छोर शिशु अवस्था में होती
है। तीसरी दशा वह है, जब नदी पहाड़ों को छोड़कर मैदान में
उत्तर छाती है, छोर बड़ी उत्पातिनी होती है तथा कीचड़ मे भर
जाता है। ये तीन दशायें हैं।

पहली दशा में पहाड़ों में, बरफ में, सूर्य का प्रतिबिन्न नहीं दिखाई पड़ता । दूसरी खोर तीसरी में बह (सूर्य का प्रतिबिन्व) दिखाई देता है। दूसरी दशा में नदी जहाज या नोका को चलाने के लायक नहीं होती। वह किसी ज्यावहारिक काम की नहीं होती, तथापि वह चड़ी सुन्दर होती है। तीसरी इसा में वह नाव या जहाज चलाने के लायक होती है, श्रीर देतों तथा घाटियों को भी उपजाऊ बनाती है। सो हम देखते हैं कि दो चोजें मोजुद थीं, एक सूर्य श्रीर दूसरी नदी।

देखते हैं कि दो चोजें मौजूर थीं। एक सूर्य और दूसरी नदी। एक भ्रापमें सूर्यों का सूर्य हैं। जो गाड़ निद्रावस्था में परमेश्वर है। वह सूर्यों का सूर्य जमी हुई बरफ पर चमकता है। वह सूर्यों का सूर्य, अच्छत, अञ्चल, साची है। जब वह स्यं सुप्रिप्तिकाल की शुन्य अवस्था पर हुछ समय तक चमकता रहता है। तय आपमें वह सूर्यों का सूर्य अपने को चमकीली, गरमानेवाली हालत में रखता है। और आपके कारण-शरीर को पिघलाता है, तब उस शून्यता से स्वप्नशील दशा प्रवाहित होती है। यही इंजील कहती है, "परमेखर ने शून्य से संसार की सृष्टि की।" परमेश्वर था और वह वही था, जो पहली दशा में शून्य कहा जाता है। जिस तरह सूर्य बरफ से निद्याँ पैदा करता है। ठीक उसी तरह जब सूर्यों का सूर्य, जो आपके भीतर परमेश्वर है, देखने-मात्र शून्यता पर (जिसे हिन्दू माया कहते हैं।) चमकता है तब उसी बक्त द्रष्टा और दृश्य पदार्थ वाहर वह निकलते हैं। द्रष्टा के अर्थ ज्ञाता हैं और दृश्य पदार्थ वह है, जो देखा वा जाना जाता है।

स्वप्नावस्था का अनुभव जात्रत्-अवस्था के अनुभव के लिये वैसा ही है, जैसा नन्हा, छोटा नाला महान् नदी के लिये है। लोग कहते हैं कि मनुष्य परमात्मा के रूप में वना है। गाढ़ निद्रा में आपमें कोई अहंभाव नहीं है। किन्तु स्वप्न और जात्रत्-अवस्था में आपमें आहंभाव है। स्वप्न और जात्रत्-अवस्था में आपमें आहंभाव है। स्वप्न और जात्रत्-द्शा में आप परमेश्वर का प्रतिविक्त्य रखते हो। असली आत्मा परमेश्वर है, सूर्य है, न कि यह प्रतिविक्तित सुरत (मृति)। स्वप्न में आप सव प्रकार की



काम की नहीं होती, तथापि वह चड़ी सुन्दर होती है। तीसरी दशा में यह नाव या जहाज चलाने के लायक होती है, स्वीर खेतों तथा घाटियों को भी उपजाऊ बनाती है। सो हम देखते हैं कि दो चोजें मोजूर थीं, एक सूर्य स्वीर दूसरी नदी।

एक आपमें सूची का सूर्य है जो गाड़ निद्रावस्था में परमेश्वर है। वह सूचों का सूर्य जमी हुई वरक पर चमकता है। वह सूर्यों का सूर्य, अचल, अन्यक्त, साची है। जय वह सूर्य सुपुप्तिकाल की शून्य अवस्था पर कुछ समय तक चमकता रहता है. तद आपमें वह सूर्यों का सूर्य अपने को चमकीली, गरमानेवाली हालत में रखता है, और आपके कारए-शरीर को पिघलाता है तब उस शून्यता से स्वप्नशील दशा प्रवाहित होती है। यही इंजील कहती है, "परमेश्वर ने शून्य से संसार की मृष्टिकी।" परमेश्वर था और वह वही था जो पहली वहा। में शुन्य कहा जाता है। जिस नरह मूर्य वरक से नदियाँ पैदा करता है। टीक इसी तरह जब सू**यों का सूर्य**। जो आपके भातर परमेश्वर है। अवने-मात्र शुन्यता पर (जिसे हिन्दू माया करते हैं। चसरता रेतव उसी बक्दरा और हहय पदार्थ बारर यर 'नजाते हैं। उद्यापे अर्थ ज्ञाता है और हश्य पहार्थ बर है, हो देश का हाला हाता है।

स्वानावरण गा चनुसव लागत्-स्रवरण के सनुसव के निये वैसा हो है जिला नाता हो हो नाचा सान नेश के निये है लोग प्राप्त है कि सनुष्य परसासा के रूप में बना है गए जिला में चापते कोई स्वानाव नहीं है। किस्त स्वान चीर लागत्-स्वरण में चापने चालाव है। स्वान चीर लागत्-द्रण में खाप परसेश्वर का प्रतिश्वस्व राजे हो। प्रसंधी प्राप्ता परसेश्वर का सुण है। का यह प्राप्तावस्वत सरत (सूने) स्वान में खाप गव ज्लार ही चीजें देखते हैं। किसी वस्तु को (स्वप्त में) देखने के लिये, किस प्रकाश में आपको उसे देखना पड़ता है? वह चन्द्रमा का प्रकाश है या नज्ञों का या भौतिक सूर्य का कि जो हमें स्वप्त में वस्तुओं को देखने की शक्ति देता है? किसी का भी नहीं। फिर वह कौन-सा प्रकाश है, जो स्वप्त में सब प्रकार की वस्तु देखने के योग्य बनाता है? वह आपके अन्दर का प्रकाश है। वह वही प्रकाश है, जो प्रत्येक पदार्थ को हिं। गोचर बनाता है। यह प्रकाश जो स्वप्त में सब प्रकार की वस्तुओं को देखने की शक्ति आपको देता है, केवल गाढ़ निद्रावस्था में स्वच्छन्द रूप से चमका था। स्वप्त में वह पदार्थों को अवलोकनीय बनाता है। इस तरह पर चनसुपित में और स्वप्तावस्था में भी वह प्रकाश निरन्तर रहता है। स्वप्त में यदि आप चन्द्रमा देखते हैं, तो चन्द्र और साथ ही उसके प्रकाश की स्थिति का भी कारण आपके अन्दर का प्रकाश है।

श्राज यह सिद्ध किया गया है कि तुम प्रकाश कर हो। जैसे कि नदी के संबंध में जानते हो कि उसके मृल में भी बही सूर्य है, जो मुहाने पर है; उसी तरह श्रम्पली श्रारमा तुममें सुपुनि, स्वप्न श्रोर जायत् दशा में बही है। तुम बही हो। श्रपने को उस श्रंतर्यामी श्रारमा से श्रमेद कर दो, तब तुम बिल्पट श्रीर शक्ति से पूर्ण होते हो। यदि श्राप बंचल, परिवर्तनशील वस्तुश्रों से श्रपनी श्रमेदना कायम करते हो, तो श्राप उस लुदकते हुए परथर के समान हो जाते हो कि जिसमें काई या सेवार नहीं जमती। सूय केवल एक ही नदी के उत्पत्ति-स्थान, बीच श्रीर मुहाने पर नहीं है, किन्यु दुनिया की सब निहंगों की सब श्रवस्थाश्रों में भो वहीं है। श्रापमें जो श्रवाशों का प्रकाश है, वह दुनिया के सब लोगों

की मुप्रिम, स्वप्न श्रीर जायन्त्र्यवम्थात्रों का वास्तविक श्रात्मा

है। वह प्रकाश उन पराधों से निन्न नहीं है। जिन पर वह समकता है। आप वह प्रकाशों के प्रकाश हो। इस विचार (ख्याल) पर टिको कि में प्रकाशों का प्रकाश हूँ। वहीं में हूँ। प्रकाशों के प्रकाश से अपनी अभिन्नता क़ायम करो। वहीं आपका असली स्वरूप है। कोई डर नहीं, कोई मिड़कियों नहीं, कोई शोक नहीं। सर्वत्र वह है। प्रकाशों का प्रकाश अविन्दिन्न, निर्विकार। कन और आज नया सदा एकरस । में प्रकाशों का प्रकाश हूँ। सारी दुनिया केवल तहरें। केवल तरंगें और चक्कर जान पड़ती है।

'ज़ुद्रात्मा वा परिच्छिन्नात्मा' को जो पर्दा घेरे हुए है, उसे हटाने में निन्न-लिखित उपाय वहुत ही उपकारी सिद्ध होगा।

े लोग कहते हैं. ''सैर करते समय वातचीत के लिये एक मित्र होना चाहिये।'' नीचे लिखे कारणों से यह कथन म्रमजनक वा श्रसत्य है:—

प्रथम—जब हम अकेले चलते हैं, तब हमारी साँम स्वाभाविक, ताजब ह जीर स्वास्थकर होती है। इस कारण से कांट के अपने जीवन के अस्तिम भाग में सदा अकेला मेर करता था तालि माँग का ताल बरावर बना रहे, और उसने अस्ता में तांची आप पाई। जब हम अकेले चलते हैं, तब हम नथतों से तांच ले मकते हैं किंन्तु जब हम बात करते होते हैं, तब हम नथतों से तांच ले मकते हैं किंन्तु जब हम बात करते होते हैं, तब हैं अपने मांच लेनी पड़ती हैं नथतों से मांच लेना महा शक्ति हैं आर फेकड़ों को बलवान बनावा है परमेशवर ने मनुष्य के तथनों में सांच भरा हुए से नहीं हम मुख से सांच बाहर खोड़े । तकते से नहीं हम मुख से हम सीचना खाड़े परमेशवर जो हवा फेकड़ों में प्रवेश करतों है वह तथनों के बालों से लन कर जाती है।

केन्द्रच्युत न हो

(ता० ६ जून १६०३ को कैसिल स्प्रिंग्स में दिया हुआ ब्याच्यान)

यहाँ के लोगों का ढंग यह है कि भोजन करते समय बातचीत करते रहते हैं, किन्तु भारत में दूसरी ही चाल है। वहाँ भोजन करते समय वातचीत नहीं की जाती। श्राप जानते हैं कि वहाँ भोजन करते समय प्रत्येक व्यक्ति को खाने की किया मानों धार्मिक भाव से करनी पड़ती है, उसे पवित्र कृत्य वनाना पड़ता है । श्रापके मुख में जानेवाले भोजन के हरएक प्रास के साथ श्रापको इस विचार पर ध्यान देना होता है कि यह कौर (ग्रास) वाह्य संसार का प्रतिनिधि है, और इस प्रकार में सम्पूर्ण विश्व को अपने में सम्मिलिन कर रहा है। और वे खाते समय निरन्तर इन विचार को अपने चिन में रायते हैं और अ जपते रहते हैं। मन से अनुभव करते और समस्ते जाते है कि सम्पूर्ण संसार मुसमे सम्मिलित है। अ. १०० विष्व मुममे है उनया मेरी देह है। इस प्रकार प्रत्येक श्रास के लाप वे ज्याच्यात्मक चल प्राप्त करते हैं। आध्यात्मक श्रीर शार्रपरेक भोजन लाय-लाप तोता है। सारी दुनिया मैं हूँ, मेरा ही माम छीर रॉधर है। मोजन सम्पूर्ण संसार कार जो भेरा छपना हो मास छोर रक्त है. एक प्रतिनिध्य है। सब एकता है। हिन्दस्रों का इसमें प्रीत्य प्रश्चय होने के कारण ये सब विचार उनके वित्ती स्त्रीर मध्यतास्त्री मे एकत्रित हो जाते हैं अ। में अंग अंग । श्रीर मंत्रल्प रे भावुक प्रकृति 🦂 power की यहाँ तक पुष्ट होती है कि 🚮 🎠

राम भाषमे से हरएक में एक दान को निकारिश करना । संदेरे जब आप उठने हैं या मनते हैं अथवा कोई और जम करते हैं। तब अपने विचार मदा निज धाम में रिनये। । या अपने आपको केन्द्र से रिवये। केन्द्रचपुत मन जिये। जिस तरह महालियों जल में रहती हैं। जिस तरह महालियों जल में रहती हैं। जिस तरह चिड़ियाँ वायु में रहती हैं। उसी तरह आप प्रकाश में हो। । प्रकाश में आप रहा। चलो। फिरो और अपना प्रस्तित्व रक्त्यों। जब अधेरा होता है। आन्तरिक प्रकाश प्रस्तित्व रक्त्यों। जब अधेरा होता है। आन्तरिक प्रकाश प्रहास मंजूद है। गाड़ निद्रा-अवस्था में प्रकाश उपस्थित है। एकाप्रता की सहायता में। आत्मानुभव के उच्चतम शिखर र चड़ने के निमित्त, जिज्ञासुओं के लिये यह अत्यन्त । आवश्यक पाया गया है कि वे अपनी सत्ता को प्रकाश का साथों मानें।

भौतिक बस्त के रूप में हम प्रकाश की पूजा नहीं करते हैं। जैसा कि रोमन कैथोलिक ईसाई अपनी मृतियों के साथ करते हैं। आज्ञानुमव के अत्यन्त निरिचत उपाय के तौर पर, हिन्दु-मन्पनारे में। यह बार-बार उपदेश दिया गया है कि अपने न्यापको तिरत्तर संसार का प्रकाश समभते हुए पूजा का प्रश्न करना चारिय जब आप अज्ञान समभते हुए पूजा का प्रश्न करना चारिय जब आप अज्ञान समभते हुए पूजा का प्रश्न करना चारिय जब आप अज्ञान रहे हों। तब प्रनम्भव राज्य कि आप प्रकाश है। तज्ञ है। प्रकाश आप के प्राप्त का जिल्ला का प्रकाश में बढ़ विज्ञान के साम प्रकट क्षण गणा प्राप्त करनी लोकर सब मतातमाओं को लगा था। उसा ने कहा, जो समार का प्रकाश है। मालस्मा प्राप्त स्थान नहान पुरुष स्थान है। इन विचारों पूर्व करने आप सब बस्तुओं में प्रशान है। इन विचारों पूर्व निरम्तर आपको अपने सामने राजना चाहिये और वि



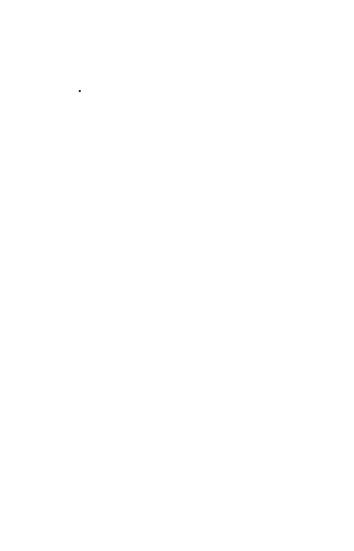


किसी विषय पर विचार करना शुरू करो, श्रार श्रापको जान पड़े कि आप अपने विचारों को कावू में नहीं ला सकते, तव त्राप यह प्राणायाम करो, और इतसे जो छापको दुरन्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी। इस पर आपको विस्मय होगा। हरएक वस्त क्रमानसार (ठीक स्थान पर) है। हरएक वस्तु अत्यन्त वांब्नीय अवस्था में रक्ती हुई है। प्रारायाम के ये लाभ हैं:— इससे आपके बहुत से शारीरिक रोग दूर हो जायेंगे। प्रालायाम से छाप पेट के दुई से सिर के दुई से दिल के दुई से अच्छे हो सकते हैं। अब हम देखेंगे कि यह प्रारायाम क्या है। इस देश में लोग इस या उस विधि से प्रारा का नियमन करने का यत्न कर रहे हैं। किन्तु रान आपके सामने वह च्पाय रखता है. जो समय की परीज्ञा में पूरा दतर चुका है. जो भारत में ऋति प्राचीन काल में प्रचलित था। और जिसका आज भी वहाँ प्रचलन है। तथा अति प्राचीन काल से लगा-कर आज तक जिस किसी ने उसका अभ्याम किया है। उसी ने **उसे** ऋत्यन्त उपयोगी पाया है।

अस्तुः शाराचाम वरते के तिये छापको छत्यन्त सम्बद्धः सरत स्थिति है हैतन चार्य एक २ व अमरे पर चड़ाकर **दैटना बड़ा हो सराकर छासत है। किल दर जासन, के पारबसी** भारत-बासी, ऋषको मण हाले । इस्तरा व ४ क्रायमन्त्रासी पर बेठ सकते है जाना है सार गार गाउँ उड़ी कड़ी रक्यों (सर इसर सामा ४००० है र राम्य रस्त्री) दाहिने हाथ का करिएए इसीने संपत्ते पर रक्ती हीर उसी नयने से धोर-प्रोर सत्तर साम प्राचीता तथा तथा प्रोराधी भीतर सांस प्राचित रही। जब 👍 🕬 प्राप्तान मेरी उच्च तक आराम से गीच सको तक तक से गमाना सीवन रही । सांस भीतर रतेवते समय विन के शून्य न होने

फ़मराः साँस बाहर निकालिये। तब भी मन को सुस्त न होने दीजिये वह काम में लगा रहे, उसे अनुभव करने दो कि ज्यों-ज्यों साँस आ रही है। और पेट की सब मलिनता दूर हो रही है, त्यों त्यों सारी मिलनता, अशुद्रता, सारी गंदगी, सारी दुष्टता, दुर्गन्धवा, सम्पूर्ण श्रविद्या वाहर निकल रही है, दूर की जा रही है, श्रोर त्यांगी जा रही है। सारी दुर्वलता छूच कर गई, न कोई दुर्वलता है, न श्रविद्या है, न भय है, न चिन्ता, न व्यथा, न परेशानी, न क्लेरा है, सबका अन्त हो नया सद चले नये। श्रापको होड़ नये। जब श्राप साँस वाहर निकार चुको, छाराम से जितनी साँस वाहर निकाल सकने हो, उतनी जब आप निकाल चुको ; तब तक सांस बाहर निकालते रहो, जब तक आप आराम से निकाल सकते हो। श्रीर जब श्रापको समक पड़े कि श्रद ध्रीर मांस दाहर नहीं निवाली जा सकती नव दोनों नधनों को खेले रापने हुए यस्त करों कि तनिक भी हवा







जैसा कि दूर तक चलने के बाद होता है। साँस का यह स्वाभाविक भीतर जाना और वाहर निकलना, जो वहुत शीघता से होता रहता है, स्वतः प्राखायाम है। यह प्राकृतिक प्राखायाम है। इस प्रकार विशाम लेने के बाद, कुछ देर तक अपने फेफड़ों को भीतर साँस लेने और बाहर निकाल देने के वाद पुनः प्रारम्भ करो । छद शुरू करो, वार्ये से नहीं वल्कि दाहिने नथने से। मानितक क्रिया पूर्ववन्। केवल नथनों में घदला-बदल हो गया। दाहिने नथने से साँस भीतर खींचो और ऐसा करते समय समको कि मैं परनेश्वर को साँस में भीतर सीच रहा हूँ। यथाशक्ति साँस भीतर सीच चुकने के बाद जब तक छोराम से हो सके तब तक साँस अपने भीतर रिदिये । और पिर जब साँस छापके भीतर है, छन्भव कीजिये कि छाप सम्पूर्ण विश्व का जीवन छोर साँस हैं। छाप विशाल विश्व की परिपूर्ण छीर संजीधित करने हैं।



प्रतिफलित होता है छोर इससे वढ़कर कुछ भी नहीं है, वे राजती पर हैं। प्राणायाम या साँस के इस नियंत्रण में कोई छलोकिकता नहीं है । यह एक साधारण व्यायाम है। जिस तरह वाहर जाकर शारीरिक व्यायाम करते हैं, उसी तरह यह एक प्रकार की फेकड़ों की कसरत हैं। इसमें कोई वास्तविक महिमा नहीं है, इसमें कोई गुप्त भेद नहीं है।

प्राराणियाम के संबंध में एक बात और कही जानी चाहिये । जब आप साँस भीतर खींचना या वाहर निकालना शुरू करें, तब अपने पेड़ू (इस शब्द के ब्यवहार के लिये राम को समा को तिये) को , शरीर के अधो भाग को, भीतरी छोर खिंचा रखिये। इससे छापका वड़ा हित होगा। पुनः जब स्नाप साँस भीतर खींचे या बाहर निकालें, तब साँस को अपने सन्पूर्ण उदर में पहुँचने और भरने दीजिये। ऐसा न हो कि साँस केवल हृदय तक जाय और हृदय से श्चागे न जाने पाये। साँस को नीचे श्रीर गहरा उतरने दीजिये। श्चपने रारीर का प्रत्येक छिद्र (खाली स्थान), श्रपने रारीर का सव ऊपरी खाधा भाग परिपूर्ण हो जाने दीजिये। छस्तु, प्राणायाम के संबंध में रतना यथेष्ट है, खौर वेदानत की रीति पर जो लोग अपने मन को एकात्र करना चाहते हैं. वे ॐ का उच्यारण (जाप) ग्रहः करने के पूर्वः वेदान्तिक साहित्य में पड़ी हुई किसी विधि पर सन की एकाप्रता आरम्भ करने के पूर्व, प्राणानम करना जत्यन्त उपयोगी पावेंगे।

खब राम चित्त को एकाम करने की एक विधि छापके सामने रचखेगा । इस काराज (प्रचन्ध । को जभी पड़ना हुक्ष करने की छापको कोई उकरत नहीं है। राम छापको दतावेगा कि इसे कैसे पहिंदे । भला छाप जानते हैं कि पर उनके लिये हैं। जो राम के ज्यारयानों में छाते रहे हैं। जिन्ह





हैं। बाहरी ज्यापार के संबंध में छापने मोह-बश प्रपने को एक जड़ता में परिएत कर लिया है, फ्राँर बही बात है कि आप अपने को सब तरह की बीमारियों और क्लेशों में फैंसाते हैं। जब आपका चित्त बहुत गिरा हुआ हो, तब इस काराज को उठा लीजिये और अनुभव कीजिये कि 'मस, केवल एक सत्य हैं'। देखिये कि यह एक कथन उन सब नाम-नाज सत्यों से उच्चतर कथन है, जो संबंधियों के द्वारा ष्पापमें धीरेधीरे भर दिये नये हैं। सब नाम-मात्र तथ्य, जिनको ष्राप तथ्य मानते रहे हैं, माया-मात्र वा भ्रम-मात्र हैं। इन्द्रियों के इन्द्रजाल ने आपके लिये इनको बना रक्ता है। इन्द्रियों के चकने में न आखो। एक न्यक्ति आता है और आपमें दोप निकालकर आपकी आलोचना करता है। दूसरा आता श्रीर श्रापको गालियाँ देता है, तीसरा श्राता श्रीर श्रापकी खशामद करना तथा आपको अति स्त्रति करके फ़ला हेना है। ये सब तथ्य नहीं हैं, ये सब सत्य नहीं हैं। असली तन्त्र, वटोर तथ्य तो आपको अनुभव करना चाहिये। इसे उपने समय उस सारे विश्वास की पाप उड़ा दीतिये व निकार प्रेंटिंग के जो आपने बादरी हुस्य रूप परिदेशितयों में बतारक्या । ज्यती तब राज्यों और बन इस तथ्य में लगाखी, वस, बेबल १४ २००५ हैं। हो १० छान्यू, प्रायः क्याप किसी कि किया है। साम्य है के विद्यार का प्रथम पार व्यवसी प्रसन्न वर्ग एक कर कर जेगा स्थापको सब कांट्रेनाइ प्योग व्यापा से मुक्त कर हैला अस्ट यहि आपकी फीर खागे पहने की अपने ही। तो प्राप्त पा लाउने रे. स्थापा यादे आप स्थाना तेष के उन जात का उन्हें तो बाक्य अमन में ते सके तो योष्ट्र है स्था कार समने कि आपको वृद्ध और बन का आवश्यकी



तरह, जातमा ही के कारण, सर्वशक्तिमान् परम स्वत्त्प के ही कारण विश्व में प्रत्येक व्यापार हो रहा है। 'सर्वशक्तिमान, सर्वशक्तिमान् ॐ! ॐ !! ॐ !!! इस तरह उन सब सन्देहीं को, जो आपको दुर्वल बनाते और पराजित करते हैं, उन सव म्रान्तियों को, जो छापको कायर वनाती हैं, स्रापके सामने घुस आने का कोई अधिकार नहीं है। अनुभव की जिये कि श्राप सर्वशक्तिमान हैं। जैसा श्राप ख्याल करते हैं, वैसे ही छाप हो जाते हैं। ऋपने छापको पापी कहिये और छाप पापी हो जाते हैं, श्रपने श्रापको मूर्ख किहये और श्राप मूर्ख हो। जाते हैं, श्रपने श्रापको दुर्वल कहिये, फिर इस दुनिया की कोई राक्ति श्रापको प्रवत्त नहीं वना सकती । श्रतुमव कीजिये कि सर्व-शक्ति और सर्वशक्तिमान् आप हैं।

तय 'मर्वत' का भाव आता है। इस सर्वज्ञता के भाव को श्राप प्रहरा करें, मन को इस भाव पर मनन करने दीजिये, अ का गान करने दीजिये । ॐ शब्द सर्वत का स्थानीय है, श्रीर ॐ उच्चारिये । शब्द या सूत्र जो उच्चारा जाना चाहिये वह ॐ है। सर्वज्ञ. ॐ, ॐ। इस तरह चलो और उन गलत विचारों का, जो आपको मुग्ध करके जाहिल वा मूर्च बनाये हुए हैं। दूर कर दो । परमेश्वरता का लवसे सीधा रास्ता चही है ।

ऐसा ही साव 'सर्वव्यापी' का लीजिये। छतुसव करो कि "मैं परिच्छित नहीं हूँ। यह जुद्र रारीर नहीं हूँ। मैं यह परिच्छित्रात्मा नहीं हूँ: यह जीय यह 'अहं' में नहीं हूँ। हर-एक असु और परमासु में तो ज्यान और भिदा हुआ है। वह में खर्च हूँ।" एस संबंध में तनिक भी सन्देह पित्त में न लाओं। मर्दराक्तिमानः सर्वव्यापीः सर्दद्यः यह में हूँ वह हरहक चीड में व्याप्त है। सब रारीर नेरे हैं। सं ! सं !! सं !!!

अस्तु- पाक्री वाक्यों पर खिधक टिकने दा टहरने की



हैं।" इसे मानो छोर इसे पर्ने समय उन इलीको को प्यान में राजी जिलें बेशन इम राध्य की भिन्न करने में पैरा करना ि। इस पथ्य को सिद्ध करने में छाप जो बुह भी जानने हैं। इते ध्यान में लाप्तोर फ्रांट पदि आपने ऐसी फोई भी पात पदी या सुनी रही है। जो सावित करती है। कि दुनिया नेरा संकल्प है। तो इस विचार पर विखास करो। श्रीर ्याप देखेंने कि दुनिया धापकी कल्पना-स्त्य है। 'तुनिया मेरी कल्पना है अ दल्लारो और ऐसा समस्ते । इसी प्रकार बाकी सब

सर्व प्रानन्य भें हैं। إنثق # II # III सर्व शान में हैं। सर्व न्त्य में हूँ। 27 सर्व प्रकाश में हैं। " 33 निडरः निर्भय में हूँ। 33 27 99 { न कोई श्रदुसन या विसन । } में सब इच्छाश्रों की े पूर्णता हूँ । 13 " " में परमात्मा हैं। 33 " में सब कानो से सुनता हूँ। 13 22 में सब जाँखों से देखता हूँ। " 53 में सब मनों से सोचता है। 33 " र्जो सत्य मेरा स्वरूप है. उसी को जानने रेकी साधु प्राक्तंचा करते हैं। " 33 " (प्राण और प्रकाश जो नज्ञों और सूर्य रे के द्वारा फलकता है, वह में हूँ । " " श्रव काराज समाप्त हो गया।

अब इसे स्पष्ट करने के लिये कुछ शब्द कहे जा सक[े]

हैं। हिन्दी-कहानियों में एक बड़ी सुन्दर कहानी है। एक समय में एक बड़े पंडित, बड़े महात्मा थे। कुछ लोगों को वे पवित्र कथा सुना रहे थे। ऐसा हुन्त्रा कि गाँव की ग्वालिने पंडितजी के पास से होकर निकलीं, जब कि वे पवित्र कथा बाँच कर लोगों को सुना रहे थे। इन न्वालिनों ने पंडितजी के मुख से ये वचन सुने "पवित्र-भ्यरूप परमेश्यर का पवित्र नाम वड़ा जहाज है, जो हमें भव-सागर के पार लगा देना है। मानों कि सागर एक छोटा सरोवर-मात्र है। बिलकुल कुछ नहीं है।" इस प्रकार का कथन उन्होंने सूना। इन व्यक्तिनों ने उस कथन को शब्दशः बहुए। किया। उन्होंने उस कथन में श्रचल विश्वास स्थापित किया। उस पार अपना दूघ वेचने के लिये उन्हें नित्य नदी पार करनी पड़ती थी। वे ग्वालिने थीं। उन्होंने श्रपने मन में सोचा। वह पवित्र वचन है, वह ग़लत नहीं हो सकता, अवस्य वह यथार्थ होगा। उन्होंने कहा, "नित्य एक एकत्री हम मल्लाह को क्यों हें ? परमेश्वर का पवित्र नाम लेकर श्रीर ॐ उच्चारती हुई हम नदी को क्यों न पार करें ? हम नित्य एकत्री क्यों दें ?" उनका विश्वास वज्र के समान कठोर था। दूसरे दिन वे आईं और केवल ॐ उच्चारा, मल्लाह को छुछ नहीं दिया, नदी पार करना शुरू किया, नदी उत्तर गईं श्रोर वे हूची नहीं। प्रतिदिन वे नदी पार करने लगीं, मल्लाह को वे कुछ नहीं देती थीं। लगभग एक महीने के बाद उस उपदेशक के प्रति कि जिसने वह वाक्य पढ़े थे और उनका पैसा बचाया था, अत्यन्त कृतज्ञता का भाव उनमें उदय हुआ। उन्होंने महात्मा को अपने चर पर मोजन करने को निमन्त्रण दिया। श्रन्तु, निमन्त्रण स्वीकृत हुन्ना, नियन तिथि पर महात्मा को उनके घर पथारना पड़ा। एक ग्वालिन महात्मा को लेवाने आई। यह

हूबने लगा। साथियों ने उसे बाहर निकाल लिया। अव तनिक घ्यान दीजिये। इस प्रकार को श्रद्धा जैसी महात्मा **में** थी, यह श्रद्धा जैसा विखास उत्पन्न करती है वह रत्ता का वीज नहीं हो सकती। आप हे दिलों में यह कुटिलता है। जब आप ॐ उच्चारना शुरू करते हैं या परनेरवर का नाम लेते हैं और कहते हैं, भैं स्वास्थ्य हूँ, स्वास्थ्य', पर अपने हृदयों के हृदय में आप काँपते हैं, आपके हृदयों के हृदय में वह तुच्छ काँपता, लरजता 'अगर' मोजूद रहता है कि 'श्रगर में द्ववने लगूँ, तो मुने वाहर निकाल लेना'-थ्यापमें वह जुद्र हिचिकचा 'अगर' है। श्रापके चित्त में कोई पक्का विश्वास, निर्वय, श्रद्धा व प्रतिज्ञा नहीं है। यह एक तथ्य है कि संसार के सारे भेद और परिस्थितियाँ मेरी सृष्टि हैं, तथा मेरी करतून हैं, ख्रोर कोई चीज नहीं हैं। श्राप परमेश्वर हो, प्रनृत्रों के प्रमृ हो। ऐसा श्राप सममो। इसी च्या इसे अनुभव करो। हुद, अचल विखास रक्खो । ज्ञान, व्यावहारिक ज्ञान को प्राप्त करो । त्र्याप देखेंगे कि आज बनाये गये ढंग से नित्य इस पत्र को पढ़ने से आप को वाँधनेवाले सव 'त्रगर-मगर' दूर हो जायँगे। श्रपनी परसेश्वरता से निरन्तर अपने आपका लगाव रखने से तुच्छ 'यदि' से छुटकारा हो जायगा। यदि पाँच बार नहीं, तो कम से कम नित्य दो दक्ते इस काग़ज को पढ़ों, खाँर खापके सब चुद्र 'ग्रगर' निकाल दिये जाउँगे ।

राम अब व्याल्यान बन्द करता है, और आपमें से जो तोग कुछ सामाजिक बातचीत राम से करना चाहते हैं वे, यह आसन छोड़ चुकते के बाद, ऐसा कर सकते हैं। यह आसन ॐ, ॐ, ॐ, उच्चारने के बाद छोड़ूँगा।

एक शब्द और । आपनें से जिन लोगों ने ये व्याख्यान

नहीं सुने हैं, श्रीर इसिलये राम के इस न्याल्यान को नहीं समक सके हैं, वे इस सम्पूर्ण वेदान्तिक तत्त्वज्ञान को पुस्तक के रूप में घत्यन्त दार्शनिक ढंग से प्रकाशित पावेंगे। सम्पूर्ण वेदान्त-दर्शन आपके सामने पेश किया जायगा। तथा एक शब्द छौर भी। जितने संदेह वेदान्त-दर्शन के संबंध में आपके मन में हैं, और आपमें जितनी आशंकाएँ हैं, वे ही सब संदेह और संशय एक समय में स्वयं रामु के रहे हैं। आपके ष्यतभव और ष्यापके सन्देह स्वयं राम के संदेह हैं। राम इन रास्तों में से होकर निकल चुका है, और आपको विश्वास दिलाता है कि हमारे सब सन्देह औं वे श्रज्ञान हैं। वे सब सन्देह च्रणस्थायी हैं। वे एक पल में उड़ सकते हैं। यदि आपमे से को: अपने सन्देहों के संबंध में राम से विशेष वार्नाचाप करना चाहता है, तो वह कर सकता है। पन या कहा जा सकता है कि यदि आप आपत्ति से

् है।

ये श्रति श्राशा-पूर्ण चिह्न हैं। किन्तु राम श्रापसे कहता है कि यदि आप सत्य को उसके पूर्ण प्रताप और सौन्दर्य के साथ प्राप्त करना चाहते हैं, तो चेदान्त मौजूद् है। आप इसका चाहे जो नाम रख लें, किन्तु इन हिन्दू-धर्म-प्रन्थों में वे (ऋषि) इसे ऋति सुस्पष्ट और स्वच्छ भाषा में उपस्थित करते हैं। यह सर्वश्रेष्ठ सत्य है कि 'त्राप परमेश्वर हो, प्रमुखों के प्रभु हो।' यह सममो, यह अनुभव करो, और फिर आपको कोई भी हानि नहीं पहुँचा सकता, आपको कोई भी चोट पहुँचा सकता, श्राप प्रभुत्रों के प्रभु हो। 'दुनिया मेरा हो। 'दुनिया मेरा हो, मैं प्रभुत्रों का प्रभु हूँ।' यह है सत्य। यदि श्राप सी वार्ते सुनने के श्रभ्यासी नहीं हैं, तो खोक न साइये। यदि आपके पूर्वजों का इसमें विश्वास नहीं था, तो क्या हुआ ? आपके पूर्वजों ने अपनी पूर्ण शक्ति से काम लिया। आपको अपनी पूर्ण शक्ति काम में लाना चाहिये । आपकी मुक्ति, स्त्रापके पूर्वजों का उद्धार श्रापका स्त्रपना काम है। वेदान्त को ग़ैर न सममो। नहीं, यह आपके लिये स्वामाविक है। क्या श्रापकी निजी श्रात्मा श्रापके लिये रौर है? वेदान्त श्रापको केवल श्रापकी श्रात्मा श्रीर स्वरूप के संबंध में बताता है। यह तब रौर हो सकता था, जब श्रापका श्रपना ही छात्मा छापके लिये ग़ैर होता । सब पीड़ाएँ-शारीरिक मानसिक, नैतिक और श्राप्यात्मिक—वेदान्त का श्रनुभव करने से तुरन्त रुक जाती हैं, श्रीर श्रनुभव कठिन काम

ااا ﴿ اللهِ اللَّهِ اللَّهِ

सोऽहम्

(ता॰ १० जून ६६०३ को दिया हुझा व्याख्यान ।)

एक वड़ा ही जपयोगी मंत्र है, जिससे हरएक को परिचित होना चाहिये। वह है 'सोऽहम्' (Soham)। श्रंबेजी मापा में 'सो' का अर्थ है 'ऐसा', किन्तु संस्कृत भाषा में 'सो' का अर्थ है 'वह', श्रोर 'वह' का अर्थ सदा परमेरवर या परमात्मा है। इस तरह 'सो' राव्द का अर्थ परमेरवर है। भारत में ली अपने पित का नाम कभी नहीं लेती। उसके लिये दुनिया में केवल एक पुरुष है, श्रोर वह (एक पुरुष) उसका पित है। वह स्त्री सदा श्रपमे पित को 'वह' कहती है, मानो समन्न विश्व में कोई श्रोर व्यक्ति मंजूद हो नहीं है। फलतः उसके लिये 'वह' सदा परमेरवर सदा उसके विचारों में है। इसी तरह वेदारता के लिये 'को' शब्द का अर्थ मदा परमेरवर या परमण्या के नाम करता है। उसके विचारों में है। इसी तरह वेदारता के लिये 'वह' विचार सिरावर 'चेदा करता के लिये 'वह' विचार सिरावर 'चेदा करता के लिये 'वह' विचार सिरावर 'चेदा करता के लिये करता करता का अर्थ मदा परमेरवर या परमण्या के का स्वर्थ करता करता का स्वर्थ स्वर्थ करता करता करता करता स्वर्थ स्वर्थ करता करता स्वर्थ स्वर्य स्वर्थ

निरन्तर हमारे मनों में रहनी चाहिये। साँस को ताहे रहो और इस मंत्र 'सोऽत्म्' के द्वारा उसे सुरीही बनात्रों। यह एक मानसिक, शारीरिक और छाध्यातिमक ज्यायाम है। साँस लेने में दो कियाओं का समावेश है, भीतर जाना श्रीर बाह्र निकलना। साँस लेना श्रीर साँस निकालना। भीतर साँस लेते समय 'सो' कहा जाता है, छोर बाहर सांस निकालते समय 'हम्' कहा जाता है। कभी-कभी प्रारम्भ करनेवाले को 'ॐ' की अपेचा 'सोऽहम्' जपना (उच्चारना) बहुत सहज पड़ता है। यह दोनों को छालिंगन करता है। जब इसे धीमे-धीमे उच्चार रहे हो. तत्र इस पर विचार करो, भीतर-ही-भीतर श्रीर चित्त से इस पर मनन करो, किन्तु इस सारे समय विलक्क स्वाभाविक रीति पर साँस लेते रहो। यह सच्चे प्रकार की श्रातम-सूचना है, जो मनुष्य को इन्द्रियों के सम्मोहन से हटा-कर परमेश्वरता में लौटा ले जाती है। वह हूँ मैं। विश्व में हर समय तालबद्ध गित हो रही है। संस्कृत में 'सो' शब्द का छर्थ सूर्य भी है। सूर्य हूँ में। मैं प्रकाश का दाता हूँ, में लेता छछ नहीं हूँ, पर देता सब हूँ। में दाता हूँ और लेने-वाला नहीं हूँ। मान लीजिये कि हम दूसरों से बहुत ही रूखी चिट्ठियाँ श्रीर डाही पुरुपों की कठोर श्रालोचनाएँ पानेवाले हैं। तो क्या इससे हमें रंजीदा श्रीर हैरान तथा परेशान होना चाहिये ? नहीं । श्रपनी परमेश्वरता में न्तोभरहित चैन से रहो। जो आपको सबसे अधिक हानि पहुँचाने की कोशिश कर रहे हैं, उनका कृपापूर्ण छोर प्रेममय चिन्तन करो। वे तुन्हारे अपने स्वरूप हैं, श्रौर अपने निजी ्प के लिये आप केवल अच्छे विचार रख सकते हैं। मैं सूर्यों का सूर्य हूँ। प्रकाश, प्रताप, शक्ति मैं हूँ। मुर्फ कौन हानि पहुँचानेवाला है ? मेरा अपना आप मेरे अपने आप

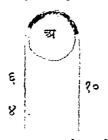
हानि नहीं पहुँचा सकता। श्रसम्भव है। दूसरों की सिध्या सम्मितियों से ऊपर उठो। परमेश्वर को सदा में द्वारा घोलने, सोचने श्रीर कार्य करने दो, श्रपनी मेश्वरता में शान्ति से चैन करो। में सूर्य हूँ, दुनिया को हाश देनेदाला हूँ।
पूर्ण शक्ति श्रनुभव करो। श्राप देखते हूँ कि हमारी सव दिनाइयों का कारण 'श्रहं', परिच्छित्र श्रपने छुद्र 'श्रहं'। सत्कार है। यही विचार है, जो हमें दुर्वल करना और ह हालता है। इस रोग को दूर करने के लिये किसी

पूर्ण राक्ति अनुभव करो। आप देखते हैं कि हमारी सब िताइयों का कारण 'अहं', परिच्छिन्न अपने जुद्र 'अहं'। सत्कार है। यही विचार है, जो हमें दुर्वल करता और सितात है। यही विचार है, जो हमें दुर्वल करता और हालता है। इस रोग को दूर करने के लिये किसी मिक्त या हरएक ज्यक्ति को स्वभावता एक कमरे में बैठ जाना ता है, और वहाँ रोना या विलयना, श्रयनी छाती पीटना, ति यह कहना होता है "निकल शैतान, निकल निकल शैतान, विकल।" अपने को ऐसी हालत में लाखी कि मानो यह छ आपकी कभी पैदा ही नहीं हुई थी। आप नो परमेहबर ते, श्राप यह है है। नहीं हो। यदि आप अपने आपको देश- हाल वे अपने के विजार होता के विजार होता के विजार होता के कान्त है। अनु के अपने अपने वा ले हिंगा हो। उन्ते का कान्त है। अपने अपने वा ले विजार हो। अने अपने अपने स्वार हो। यह का कान्त के विजार हो।

रचना है। श्रेष्ट राजकुमार की माँति अपना काम करो। हरएक चीज आपके लिये खेल की-सी चीज होना चाहिये। अपने सामने का काम प्रसन्नता से, स्वच्छन्दता से करो।

रोग दो प्रकार के हैं। भारतीय भाषा में हम उन्हें श्राध्यात्मिक (भीतरी) रोग छौर छाधिभौतिक (बाहरी) रोग कहते हैं। इसका शब्दार्थ है शैतानी रोग (demon disease) श्रीर देवी रोग (fairy disease), विकट रोग श्रीर नारी-रोग। इसका क्या अर्थ है ? अरे, माचिक या नारी-रोग वह है, जो हमारे भीतर से उठता है। हमारे भीतर की इच्डाएँ, हमारी आकांचाएँ, हमारे अनुराग, हमारी लालसाएँ मायिक या नारी-रोग हैं। और विकट रोग या यथार्थ रोग वे हैं, जो दूसरों के कार्यों या प्रभावों से हमें होते हैं। अस्तु, किसी मनुष्य को नीरोग कैसे किया जाय ? लोग कहते हैं, पुरुष-रोग जिसे श्राधिभौतिक रोग, दानव रोग, या बाहरी रोग कइते हैं, उसके संबंध में अपने आपको परेशान मत करो। जिस ज्ञाण आप अपने आपको अपनी निर्वलकारियो इच्छाञ्चों से रहित करते हैं, जिस चण श्राप श्रपना पिंड उनसे छुड़ाते हैं, उसी चएा तुरन्त वाहरी रोग आपको छोड़ देते हैं। किन्तु इस दुनिया में लोग एक भूल करते हैं, वे अपने निजी कर्तव्य को नहीं देखते। वे कठिनता के उस भाग पर नहीं ध्यान देते, जिसकी सृष्टि उन्हीं की इच्छार्थों से होती है। वे पहले वाहरी भयों से तः शुरू करते हैं। अतः वे गलत जगह से शुरू करते हैं। पहले परिस्थितियों से लड़ना चाहते हैं। वे नर-रोग की ो रोग दूसरों के प्रभाव द्वारा आता है, हटाना चाहते हैं। । , कहता है कि आपको इच्छायें आपको अपनी कमजोरियाँ , पहले इनको दूर करो, फिर हरएक वात का निर्णिय

में कोई इच्छा नहीं करता । सुमे कोई आवस्यकता, कोई भय, कोई आशा, कोई उत्तरदायित्व नहीं है।



यह 'श्र' चक्र एक चरखी है, श्रीर इस चरखी पर एक बड़ा सुन्दर रेशमी तागा लटका है, और इस रेशमी तागे के सिरों में दो बाट बँघे हैं, जिनमें से एक १० सेर और दूसरा ६ सेर का है। अब इस ६ सेर के बाट में हम दूसरा ४ सेर का बाट जोड़ते हैं। ६ सेर में चार सेर जोड़ने से दस होते हैं। सो श्रव एक तरफ दस सेर श्रीर दूसरी तरफ भी दस सेर हो गये। दोनों पलड़े बराबर । वे विलकुत नहीं डिगेंगे। अस्तु, अब मान लीजिये कि हमने चार सेर का बाट हटा लिया और नव एक श्रोर १० सेर श्रीर दृसरी श्रीर ६ सेर रह गये । बाट बराबर नहीं हैं। नतीजा क्या होगा ? १० सेर का नीचे चला जायगा, श्रीर ६ हम यह सेर का ऊपर उठेगा। एक पल के बाह चार सेर का बाट ६ सेर के बाट में जोड़ किर हम दोनों बोक दोनों तरक समान कर देते हैं। तब क्या परिगाम होगा ? बहुत से लोग कहेंगे कि पलड़े बरावर सब जायेंगे, किन्तु बात ऐसी नहीं है, वे डोलते रहेंगे। पहली दृष्टि से ऐसा जान पड़ता है कि बीफों के बराबर हो जाने के एक पल ही बाद गति भी समान हो जायगी।

बनी रहती है। हम देखते हैं कि यदि बाट शुरू में, गति आरम्भ होने के पूर्व, वरावर कर दिये जाते हैं, तो वाट वरावर होने के कारण स्थिरता बनी रहती है। यदि बाट ४ फुट की तेज चाल चल चुकने के बाद समान किये जाते हैं, तो बाटों की समानता चाल की तेजी में अधिक वृद्धि होने से रोक देगी, और यदि दूसरे पल के अन्त में बाट वरावर किये जाते हैं, तो परिणाम यह होगा कि हाथ लगी चाल न फूट होगी श्रीर इस तीत्र गति में श्रीर तरक्क़ी न होगी, श्रीर तीसरे पत के अन्त में लब्ध तीव्र गति १२ फुट होगी, तथा और आगे चाल में वृद्धि न होगी । पहले पल के अन्त में वेग की तरक्की वेग-वृद्धि (acceleration) कहलाती है। किन्तु यहाँ हम एक दूसरी ही बात देखते हैं। जब दोनों ओर बाट एक समान कर दिये जाते हैं, तब पलड़ों पर प्रभाव डालने को कोई शक्ति नहीं रह जाती। यदि पलड़ों पर कोई शक्ति (भार) प्रभाव न डालनी हो, नो विश्राम या प्रगति की ऋवस्था में कोई परिवर्तन नहीं उत्पन्न किया जा सकता। विश्राम या प्रगति (हरकन) में कोई परिवर्तन नहीं पैदा होता है। यदि वहाँ पहले की स्थिरता है, छोर हम भार एक छोर १० सेर तथा दूसरी स्रोर १० सेर कर देते हैं, स्रोर यदि बाटों में एक पत भर प्रगति रही है स्त्रीर नव बाट बराबर किये गये हैं, तो इस कान्त के व्यनुसार शुरू की प्रगति वनी रहेगी। इससे मौलिक स्थिरना या पहिले में प्राप्त बेग रकता नहीं है। किन्तु बाटों की समानता बेग में श्रामं को परिवर्तन न होने देगी। इस नरह यदि दूसरे पता के व्यन्त में हम बाट समान कर देते हैं, तो पहिले में प्राप्त वेग वही बना रहेगा। इसी तरह नीसरे पत के अन्त में बाटों की समानता पहिले से प्राप्त १२ फुट की तीत्र गति के वेग में श्रीर कोई पश्चितन न होने देगी।

श्रात्मानुभव-संबंधी संकेत नं॰ २

परमेश्वर का अब हम कुछ दूसरे अजङ्कारों में निरूपण करते हैं। विशाल, विशात चीरसागर में, जो विश्व को ब्यापे हुए है, एक सुन्दर रेंगता सर्प या शेपनाग (परमेश्वर का) कोमज विद्योना वनता है, स्त्रोर स्त्रपनी ्देह की परत को मानों इसका एक गद्दा बनाता है। उसके साइस फन छत्र का काम दे रहे हैं। ऐसे सागर पर एक अत्यन्त ं सुन्दर, मनोहर देवी बैठी हुई है, जो इस परमेश्वर की पत्नी हैं। उसकी देह पारदशंक है, नेत्र आधे खुले हैं और अधर मुसकराते हैं । वह इस परमेश्वर के चरण घीरे-घीरे दबारही है । यह सुन्दर मूर्ति एक सुन्दर, शोभायमान कमन पर वैठी हुई है, श्रोर उस पर बैठकर वह परमेश्वर के चरण दाव रही है। स्त्रोर देह मर्दन कर रही वा मुद्धियाँ भर रही है। दोनों के नेत्र मित रहे हैं। एक दूसरे के नेत्रों को देख रहे हैं। यह पत्नी क्या निरूपण करती है ? वह ईश्वरत्व, बुद्धि, कल्याण खीर खानत्व निह्पण करती है। यह इप पर तेश्वर की आतो महिमा है। इसका अर्थ यर हुआ कि मुक्तात्मा अपनो हा महिमा को हर समय देखा करता है, खोर वह खारमा तब म्बतंत्र है, जब कि दुनिया उसके लिये विजकुत इवी हुई होती है। सब नातीं खीर सम्बन्धों से पी, सब बन्धनों को तोइकर, उसे दुनिया मे कोई प्रयोजन नहीं होता है।

सागर का छार्थ छानन्तना है। छीर यह सागर शीर का क्यों कहा जाना है ? दूध में नीन गुण हैं। यह प्रकाश है, यह सकेंद्र है, जिसका छार्थ कल्याण है, यह बलदायक

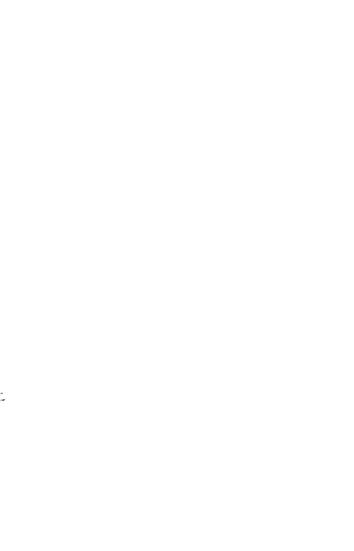


हिन्दू-धर्म-ग्रन्थों में परमेश्वर के दो रूप, परमात्मा के दो आकार दिखाये गये हैं। एक सफद, महान्, प्रभावशाली, सुन्दर, युवा पुरुप, प्रतापी आकार, हिमालय के शिखरों पर वैठा हुआ, ध्यान और विचार में मग्न, आँखें वन्द, दुनिया से वेखवर परमानन्द की सानात् मूर्ति, दिक्कतों और वखेड़ों से दूर, सम्पूर्ण चिन्ता और फिक्र से मुक्त है। ऐसा मुक्त कि पूर्ण स्वतंत्र, ऐसा प्राणी कि जिसके लिये दुनिया का कदापि अस्तित्व है ही नहीं। यह है परमेश्वर का एक चित्र। यह चित्र समाधि का है। यह एक स्वच्छन्द, मुक्त आत्मा है। श्वेत तो हिमालय का एक चिह्न।

इसके साथ उस परमेश्वर की पत्नी है, जो सिर से पैर तक गुलाव के रंग की है। वह इस परमेश्वर के घुटनों पर वैठी हुई है और उसके लिये सदा वनस्पतियाँ तथा अन्य जोशीले रस घोटा करती है। परमेश्वर अपने नेत्र खोलता है और तुरन्त उसकी पत्नी अपने तैयार किये नशीले अर्क से भरा हुआ एक कटोरा उसके मुख में लगा देती है, ताकि वह फिर अपनी ध्यानावस्था में निमग्न हो जाय। तव वह उससे सम्पूर्ण विश्व के सम्बन्ध में प्रश्न करती है, और वह उन प्रश्नों को उसे सममाता है। वह एक राजा की वेटी है, इस परमेश्वर के निकट रहने के लिये अपनी सव नेदर चीजें वह छोड़ चुकी है। परमेश्वर शिव कहलाते हैं, परनी का नाम गिरिजा (पार्वती) है।

30 | 30 || 30 ||





उपदेश-भाग

विना भोजन के मनुष्य की तरह हम आत्मानुभव के लिए भूखे श्रीर प्यासे रहते हैं, लालायित रहते हैं, मंत्र जपते हैं, मनकी साँस से वाँसुरी बजाते हैं। इसलिये श्राप मनकी भील में अगिएत स्वार्थपूर्ण इन्छाओं को हुँ इ निकालें, और एक-एक करके उनको कुचल डालें—दृढ़ प्रतिज्ञाएँ करें और गम्भीर रापथें लें। जब आप भील से बाहर निकल आवेंगे, तब जल किसी पीनेवाले के लिए विपेला न रहेगा। गौत्रों, नारियों, मनुष्यों को पीन दो- निन्दकों का विष ऐसे म्बच्छ जल में बदल जायगा कि जिसका स्रोत ईश्वरानुभव है। (खपने मन में) दुर्वलनाएँ तलारा करो खीर उन्हें निर्मल कर दो। वासनाएँ एकाप्रता को रोकती हैं, श्रीर जब तक विगुद्धता तथा श्रात्मज्ञान का श्रमितत्व न हो, तव तक सच्ची एकाप्रना नहीं हो सकती । पहले आप उसे (वासना को) उखाइ फेंको, जो एकायना की चेष्टा करते समय आपको नीन घमीट लाती है। छापने प्रति छाप मरुचे बनो। इस देश में विपुत्त संख्या में श्रीरों से ब्याख्यान दिये जाते हैं। हमें श्रापन खापको उपदेश देना नाहिये। बिना इसके कोई उन्नीत नहीं धा महर्ता।

नोने से पहने धेठ जाइये, श्रीर उन दोषी की सामने लाइये जिन्हें हदाना है। इंजील, गीला, उपनिषद् या इमर्गनाजीये स्ट्रेन्टों के नेत्वों की पहिये। यदि लीन या श्रीक का दोप ही, यी चुन्ह श्रास्त्रयम की सहायना से विचारिय कि यह दोप वर्षी मीजद

परिलाम भोगने पड़ेंगे। ये कानून एक-एक करके सिद्ध किये जायँगे। सिद्ध हो जाने पर मनुष्य नीच इच्छाश्रों के अधीन नहीं हो सकता।

मिलन इच्छास्त्रों पर एक बार प्रमुता पा जाने पर स्त्राप जितनी देर चाहें, एकायता लाभ कर सकते हैं।

न भूषे मरो और न अधिक खाओ । दोनों से बचना चाहिये। उपवास प्रायः स्वभावतः त्राता है, क्योंकि सहज स्वभाव का श्रमुसरण करना चाहिये, वह चाहे खाने का हो श्रीर चाहे उपवास करने का। दासता से वचना चाहिये। 🤏 स्वामी बनो ।

भारत में कुछ दिन, जैसे पृिएंगा इत्यादि एकाप्रता उत्पादक सिद्ध हुए हैं। उस दिन आप अभ्यास करें और आप ऐसे दिनों को श्रवश्य सहायक पाएँगे, यदि श्राप उस दिन विशेषनः वादाम त्रादि मराज्यात, रोटी और फल खाएँ।

30 ! 30 !! 30 !!!

तीसरा भाग

उत्तरार्द्ध स्वामी रामतीर्धजी

त. हिन्दी-उर्दु के लेख व उपरेग



गैर मुल्कों के तजरुवे

"सत्यमेव जयते नानृतम्"

हिंदिय की ही हमेशा जय होती है। मूठ की नहीं। पुराखों में जिला है कि "लक्सी विष्णु की सेवा करती है। विष्णु के पाँव दावती रहती है। अर्थान् लद्मी विष्णु की स्त्री है। लदमी विष्णु की छायावन् साधी है। विष्णु है तो लदमी है। विष्णु नहीं, तो लक्ष्मी भी नहीं है।" यह बात बहुत ठीक है। विष्णु के अर्थ सत्य और धर्म के हैं लद्दमी के अर्थ धन और जय के हैं। सो जहां सत्य और धर्म है, वहीं धन और जय है। जहाँ सत्य और धर्म नहीं, वहाँ धन और जय नहीं। देशों में लिखा है "यतो धर्मस्ततो जयः"। श्रतएव यदि विष्णु रूपी धमें की स्नोर स्त्राप बढ़ोगे. तो लक्सी कपी जब साँए धन आपको ह्याया के समान आपवे पाहे-पी पर वरर पर विष्णु रूपी धर्म से विमुख होने पर या अप जार पार लच्मी रूपी जय और धन प्राप्त बर ले के कि उस सहाहा सकता । सृध्यं वी स्त्रोर पीट वरते से चपर । पा वा कोई भी ध्यपन ध्यनगांमनी नहीं वर स्वर्ण कर है । श्राप भागत अले जान्योगे, लाया सबकान्यः । अरू र अरा जायमी। स्पैर हाथ नहीं स्त्रायमी पर १३० चीर मह बर ल'र तो उसी समय हाया । ० १८ ५ ५०० पीछ हा जायता चार प्यापको हो हु नहां सवता । 🕝 🕬 लक्षा (वन अमन्यालो को सदल सन्द हो . . अ अह राधना सामान । हमारे हिन्दुस्तान की खालकल नेसा ५० व्य है, वह सब पर बिदित है। एतंग राज्ञस हजारों आदिमयों का सकाया कर रहा है। अकाल लाखों आदिमयों का खुन चूम रहा है। हैजा, चेचक आदि सेकड़ों बीमारियों करोड़ों आदिमयों के प्राण ले रही हैं। कहां तक कहें, हिन्दुन्तान हर प्रकार से दुःखी है। हिन्दुन्तान की ऐसी शोकमयी दशा क्यों है? इसके उत्तर में राम यही कहेगा कि सत्य और धर्म का हास व हास हुआ है। हिन्दुन्तानियों की सत्य और धर्म पर अद्धा नहीं। हिन्दुन्तान में धर्म केवल बोलने के लिये है, बरताव

श्रव राम हिन्दुस्तान श्रांर श्रमेरिका का मुकावला करता है। श्रमेरिका हिन्दुस्तान के पैर के नीचे है। हिन्दुस्तान * में दाई श्रोर से जाते हैं। हिन्दुस्तान के पैर के नीचे है। हिन्दुस्तान * में दाई श्रोर से जाते हैं। हिन्दुस्तान में मिन्दिरों या मकानों में जाने से पहिले जूता उतारते हैं, श्रमेरिका में टोपी उतारते हैं। हिन्दुस्तान में पुरुष घर का मालिक होता है श्रीर स्त्री पर हुकूमत करता है। श्रमेरिका में स्त्री घर की मालिक होती है, पुरुप पर हुकूमत करती है। हिन्दुस्तान में कुत्ता सबसे श्रपवित्र श्रीर गधा सबसे वेवक्कूफ जानवर सममा जाता है। स्वये येवक्कूफ जानवर सममा जाता है। वे गधे से वड़ी-चड़ी श्रक्त (युद्धि) सीखते हैं। हिन्दुस्तान में उस किताव की विलक्कल कहर नहीं होती, जिसमें कुछ भी दूसरी किताव का प्रमाण न हो, श्रमेरिका में उसी किताव की प्रतिष्ठा होती है, जो विलकुल नई हो। हिन्दुस्तान में कोई

दाई श्रोर से जाने का रिवाज अमेरिका में और बाई श्रोर से जाने का अज भारतवर्ष में श्रमी थोड़ काल से हुआ है। पहले दाई श्रोर से ही जाने का रिवाज भारतवर्ष में और वाई श्रोर से चलने का रिवाज श्रमेरिका में था।

आद्मी ऐसा काम नहीं करता या करना चाहता, जिसका नतीजा वह अपनी आँखों के सामने न देख ले, यहाँ तक कि पूढ़े आइमी दर्गाचा लगाने में भी हिचकिचाते हैं। पर अमेरिका में यह बात नहीं है। वहाँ हरएक आदमी काम करता है और कल की इच्छा नहीं रखता। वे अपना कायदा नहीं देखते, किन्तु मुल्क का फायदा देखते हैं। जापान में एक अमेरिकन प्रोहेसर था, वह बहुत चूड़ा था, बारह भाषायें जानता था। इस श्रायु में रूसी भाषा पढ़ रहा था। राम ने उससे पृद्धा कि 'आप अब रुसी भाषा पढ़कर क्या करेंगे ?' उसने उत्तर दिया " मैंने सुना है कि रूमी भाषा में भूगोल सबसे उत्तम है सो मैं रूसी भाषा को इस अभिप्राय से पढ़ रहा हैं कि उस भूगोल को पहुँ, और उसका अनुवाद अपनी भाषा में करूँ ताकि हमारी जवान में भी छन्छा भूगोल हो। और एमारे मुल्क को फायदा पहुँचे।" वह फल की एच्छा नहीं रखता था। पर इस दुहापे में भी जो वह दूसरी भाषा पढ़ने का कड़ा परिधन कर रहा था। वह केवल अपने मुल्क के उपकार व फायदे के बास्ते था । क्या हिन्दुस्तानी कभी अपने मुल्क के लिये ऐसा परिश्रम करता है ? जीर फिर इस बहापे में ? यहाँ तो मरने का बड़ा भय रहता है। इस मुल्कबाज़ों (हिन्दुन्तानियो) को श्रकसर यह कहते सुनते हैं "मरना है। किसके लिये करना है ?" तो भला हिन्दुस्तान की कैसे उन्नति हो ? हिन्द्रस्तान ने कोई खादमी अपने पूर्व-पुरुषों में खागे

पर्ना ही नहीं चारता और जो आगे रहेता है वह नास्तिक समभा जाता है अर्थाद लोगों में इसकी प्रतिष्ठा नहीं होती है। अपने चाप-राहों की लगीर का अधीर न रहने से कर्नेक्ति जिया जाता है: पर अमेरिया ने इस धादमी की दिलहुल कार नहीं होती। जो अपने दाप से हो इतम धाने न बहा हो नेसिंगिक विचार की भूमिका है। अहो! हिन्दुस्तानियो! आपकी कैसी शोचनीय दशा है? आपकी आँख कव खुलेगी? क्या कभी आपके हृद्य में इन देव-तुल्य मनुष्यों के समान अपने मुल्क (स्वदेश) की भलाई, उन्नति और उपकार का ख्याल पदा होगा? क्या कभी आप लोग भी इन जर्मनों के समान अपने देश में विद्याओं का महाप्रकाश करने की इच्छा से इस प्रकार भिन्न-भिन्न देशों में जाकर वहाँ से विद्या का प्रकाश लाओगे?

पहले जब हिन्दुस्तानियों को ग़ैर मुल्कों में जाने के लिये रोक नहीं होती थी छोर यहाँ प्रकाश था, तब हिन्दुस्तानी अपने मुल्क के प्रकाश से अन्य मुल्कों को प्रकाशित करते थे। पर जब से बाहर त्र्याने-जाने का मार्ग बंद कर दिया गया। तव प्रकाश भी वन्द हो गया और ऋँवेरा फेन गया। यहाँ से प्रकाश क्यों चला गया ? प्यारे ! एक मकान के भोतर, जिसमें प्रकाश आने-जाने के लिये खिड़की और दर्वा जे हों, वाहर के प्रकारा (सूर्य्य की किरणों) से जब खूब प्रकाश हो गया हो। श्रीर तुम इस अभिपाय से उसका विवृक्तो और दर्बाते बंद कर दों कि भीतर का प्रकाश बाहर न जाने पावे. तो क्या उस मकान के भीतर प्रकाश कभी ठहर सकता है ? कभी नहीं। ज्यों ही मकान का दर्वाजा श्रीर खिड़िकयाँ बन्द होगी। मकान के अन्दर अँधेरा फैल जायगा, आर बाहर से प्रकाश स्राना भी वंद हो जायगा। वसः हिंदुस्तान की भी यही दशा हुई । बाहर श्राने-जाने के सब दर्बाचे बंद कर दिये गये। मा निर्ताज्ञा यह हुत्र्या कि यहाँ जो कुछ प्रकाश था, वह भी वंद गया, त्र्यार वाहर से प्रकाश त्र्याना भी वंद हुत्र्या, त्र्यार ुस्तान में ऋँवेरा फैल गया। शाखों में लिखा है कि विद्यान रतन नीच से भी लेना चाहिये और सबको देना चाहिये।

जितनी ही विद्या तुम दूसरों को दोगे, उतनी ही तुम्हारी विद्या वढ़ेगी और तरक्की पायेगी, किन्तु अफसोस है कि हिन्दुस्तानी दूसरों को विद्या देने में निहायत संकोच करते हैं और दूसरों से विद्या लेना भी नहीं चाहते। दूसरों की विद्या न सीखी जाय, इसके लिये समुद्र-यात्रा का निषेध हुन्ना। इस दशा में विद्या-रूपी प्रकाश का किस प्रकार प्रकाश रहता ? स्त्रहो ! खुद्गर्जी क्या किसी और चीज का नाम है ? वेड और शाल जिनसे परमात्मा विषयक ज्ञान होता है, किसी अन्य-देशीय को न पढ़ाये जायें, ग़ैर मुल्कों में उनका प्रचार न किया जाय, क्या इससे परमेश्वर प्रसन्न होगा ? क्या छन्य देश-निवासी परमेश्वर के बनाये मतुष्य नहीं हैं ? परमात्मा ने सच्चे ज्ञान के भंडार (वेदों) को आप लोगों के पास सौंपा, ताकि मनुष्यों को उसका यथार्थ ज्ञान हो। और त्राप लोग अपना कर्तव्य भूल कर उनको अपनी ही सम्पत्ति समफ्ते लगे, तो वताह्ये कि ईश्वर का कोप छाप पर न हो, तो क्या हो ? देखो, ईसाई लोग बाहविल को ईश्वरीय ज्ञान मानते हैं, उनकी नजर में बाइबिल के अनुकुल न चलने से किसी को मुक्ति नहीं हो सकती, बाहबिल ही उनकी समम से संसार के परित्राण करने का एकमात्र अवलम्बन या उपाय है. तो देखिये, ये लोग उसके प्रचार के लिये कितनी तकनी कें उठाते हैं कितनी जानें खोते हैं। कितने रूपये खर्च करते हैं। वे उदार मनुष्य संसार को भए करने के तिये ऐसा नहीं करते हैं। किन्तु संसार की महाई की इच्छा से ही ऐसा करते हैं। ईश्वरीय ज्ञान का सर्वत्र प्रचार करना अपना परम कर्वव्य समभते हैं। श्रोहो ! परमात्मा डन पर खुश न हो। तो किस पर खुश हो १ क्योंकि ईश्वर ने जो कहा जैसा और जितना हो। रनको दिया है, ये उसको जैसे का तैसा दूसरों को देने

संकोच नहीं करते हैं, किन्तु तकलीफ उठाकर, उनको विद्या पढ़ाकर, रुपया खर्च कर यहाँ तक कि प्राण् गवाँकर मी ज्ञान देते हैं। पर हिन्दुस्तानियों! तुम्हारे पास जो कृष्ठ सोंपा गया है, क्या तुम भी इन जगन्-हितेपी ईसाइयों के समान उसका संसार में प्रचार कर रहे हो ? यदि नहीं, तो क्या ईश्वर तुम पर ख़्श होता होगा? यदि कहो कि क्या माल्स कि ईश्वर ख़्श होता है कि नहीं, तो क्या श्रभी तक तुम समम नहीं सके कि ईश्वर का तुम पर कितना कोप हो रहा है? राज्य गया, लद्मी गई, विद्या गई, प्रतिष्ठा हो रहा है? राज्य गया, लद्मी गई, विद्या गई, प्रतिष्ठा न सममे, तो अकाल आया, प्लेग वा महामारी आई, हैजा आया, तो क्या श्रव भी समम में नहीं आता कि ईश्वर हम पर कोप कर रहा है! प्यारों! सम्हलो, अभी सम्हलने का समय है।

परमेश्वर की दृष्टि में सब बरावर हैं, क्योंकि परमेश्वर ने सबको बनाया है। श्रोर यदि हम परमेश्वर को खुश करना चाहें, तो हमको चाहिये कि हम प्राणी-मात्र से प्रेम करें। भाई के मारने या उसके साथ वैर करने या उसको नकरत करने से वाप कभी खुश नहीं हो सकता। तब क्या किसी मनुष्य को नकरत करने से या नीच सममने से परमेश्वर, जो सबका पिता है, कभी खुश हो सकता है ? कदापि नहीं। खाली मुँह से यह बात कहते जाना कि हम परमेश्वर को मानते हैं, उससे प्रेम करते हैं, काफी नहीं है। श्रापको चाहिये कम द्वारा इसका सबूत हो। सबूत यही है कि श्राप मनुष्य-मात्र प्रेम करें, प्राणी-मात्र से प्रेम करें, जगन्-मात्र से प्रेम करें, सबको बरावर श्रोर श्रपने ही बरावर सममें, श्रयांत यह ख्याल रक्खें कि जो कुछ में हूँ, वह वे हैं, श्रोर जो कुछ वे

हैं, वह में हूँ, अर्थात् में और वे अलग-अलग कुछ नहीं, किन्तु एक ही हैं। चाहे कोई किसी जाति का हो, किसी देश का हो, किसी रंग का हो, इसकी परवाह मत करो। जाति-धर्म, मजहब, देश और रंग से कुछ मतलब नहीं, आपको तो ईश्वर को खुश करने से मतलब है अर्थान् अपना कर्तव्य पालन करना है। डाथ शरीर के सब अंग और प्रत्यंगों को सहायता पहुँचाता है। पैरों को, उपस्थ इन्द्रिय को या छोर किसी अंग को जब तकलीक होती है, तब फौरन हाथ उनकी सहायता के लिये पहुँच जाता है। हाथ यह कभी विचार नहीं करता है कि पर मुक्तसे नीचा है, गुदा आदि इन्द्रियाँ अपवित्र हैं, मूंह में थूक है, नाक में सींड है, कान के अन्दर मैल है, वह सम दृष्टि से सबको सहायता पहुँचाता है, और सबकी तकती भी को दूर करने का प्रयत्न करता है। यह कभी ख्याल नहीं करना चाहिये कि यह मुमसे नीच है या भिन्न मजहव का है। श्रमेरिका में रविवार के दिन एक साहव से राम की मलाकात हुई। उसकी मेम दूसरे मजहव की थी, और वह दूसरे मजहब का था (ईसाइयों के भी कई मजहब हैं। कोई रोमन कैपोलिक श्रीर कोई श्रोटेस्टेंट कहलाते हैं), अर्यात उसको मेम (न्त्री) रोमन कैथोलिक थी और वह श्रोटेस्टेंट था। वह अपने-अपने गिर्जों में तो गये पर साहव पहले खपनी मेम को उनके गिर्जे में पहुँचा आया तद धपने निर्जे में गया. किर खपने निर्जे से खपनी मेस को लेने के तिये उत्तरे गिर्ज में गया, और तब वह साय-ताय पर आये। राम ने उस साहब से पूछा कि तुम स्त्री-पुरुष भिन्न मङ्हद के हो। वैसे एक दूसरे से प्रेम करते हो " इसने उत्तर दिया -"मजर्य का रिवर के नाथ सम्यन्थ है और इसका (मेरी) मेम का) और मेरा इस दुनिया का सम्दन्ध है। ईश्वर

सामने श्रपने कमों का उत्तरदाता में हूँ, श्रोर वह श्रपने कमों की उत्तरदात्री है, सो हमको विवाद करने से क्या मतत्त्व ? हम दुनिया के सम्बन्ध से श्रापस में प्रम करते हैं। साहब ने ठीक उत्तर दिया। ऐसा ही होना चाहिये। परन्तु हिन्दुस्तान में यदि स्त्री वैष्ण्य है श्रोर पुरुष शेव, तो उनके वीच कमी प्रेम नहीं होता है। श्रहों, कैसा श्रनर्थ है!

श्राप लोग (हिन्दुस्तानी) श्रन्य देशवासियों को नीच_र म्लेच्छ श्रादि नामों से संबोधन करते हो श्रीर उनसे नकरत करते हो; पर राम कहता है कि जिनको आप नीच सममते हो, वे उत्तम हैं, जिनको म्लेच्छ कहते हो, उनका हुद्य पवित्र है, और वे त्रापसे प्रेम रखते हैं। उन लोगों में और भी इतना विशेष गुरा है कि उनका देशानुराग इतना प्रवल है कि वे अपने देश के लिये खून वहा देने को हर समय तैयार रहते हैं। एक जापानी जहाज में कुछ हिन्दुस्तानी लड़के सकर कर रहे थे, वे लोग चौथे दर्जे में थे। चौथे दर्जे-वाले मुसाकिरों के लिए हिन्दुस्तानियों के मुत्राक्षिक साने का उचित सामान न था। वे लोग भूखे ही रह गये। इतने में एक जापानी लड़के की नजर उन पर पड़ गई, उसको माल्स हुआ कि ये वेचारे हिन्दुस्तानी भूखे हैं। इस उदार, दयालु जापानी लड़के से न रहा गया, वह फ़ौरन फ़र्स्ट क़ास (पहिले दर्जे के) कमरे में गया और वहाँ से फल और मेवे श्रपने पैसे लगाकर ले श्राया, श्रौर उनको उन भूखे हिन्दुस्तानियों के हवाले कर दिया। वे हिन्दुस्तानी लड़के वड़े खुरा हुए, श्रीर इस कृपालु जापानी लड़के को क्षीमत देने लगे, परन्तु जापानी लड़के ने उचित प्राश्वासन श्रीर मधुर वचन द्वारा सवका सत्कार करके कीमत लेने से इन्कार किया, श्रीर फिर उसी तरह चार-पाँच रोज तक उनको बरावर मेवे और फल देता

गया, और क़ीमत लेने से बरावर इन्कार करता गया। जब उनके जुदा होने का वक्त आया, तो हिन्दुस्तानी लड़के उसका शुक्रिया (धन्यवाद) छदा करने लगे. और फिर क़ीमत देसे लगे। उस जापानी लड़के ने फिर इन्कार किया और नम्रता-पूर्वक उन हिन्दुस्तानी लड़कों से कहा कि ''यारे! मैं दाम तो नहीं लेता, मगर एक छर्ज करता हूँ, यदि आप उसको स्वीकार करो तो।" हिन्दुस्तानी लङ्कों ने कहा-"आप फर्मार्ये तो।" जापानी लड्के ने कहा कि "मेरी यही प्रार्थना है कि जब श्राप लोग हिन्दुस्तान में जाओ। तो यह बात न कहना कि जापानी जहाज में हमको कष्ट हुन्ना था, वहाँ खाने का प्रवन्ध ठीक नहीं थाः क्योंकि आप लोग ऐसा कहेंने, तो इमारे मुल्क की वदनामी होगी।" छहो! कैसी मुहत्वत है! कैसा विमल देशानुराग है! वह लड़का न उस जहाज का मालिक था और न उस जहाज में नौकर था। पर वह जहाज हिल्ल देश का या वह भी उसी देश का रहनेवाला था इसी सम्बन्ध में उस जहांच की बदनामी को वह अपनी और ख्यपने देश की बदनाभी सममता था यही सनचा बेदानन है. इसा के सब की अब्दाबना करते हैं। क्या कोई हिन्दस्तानी क्भी हरा करताते. वया किसी हिरास्त्रानी ने हेसा वेदास्त मारग । अग्र कापने से विसी की इस सरवी वयावशा की प्राप्त 🙄 व्यती यही वा केपनत, वही की प्रस्निवस के बचन जार बजार बरने के उन्हें के कमार ने लाने के 'तर नहां वर याद क्ष्मर अद अद हेल' पूर्वा प्रमुख . भूजना ग्रामा त्या त्या त्या त्याच्या हो । श्रास्त्र न सहाहो सक्ता प्राथम देशन और प्रादश राज का स्तान भेषा हो। और हापन और शंभे खाला अस्ते जम्मूल . रा. राम राम-जापान व बनमान प्रत र जापा

यालों को अपने किसी जहाज के दुवाने की जरूरत पड़ी। यह निरचय था कि जो इस जहाज को उनाने जायेंगे, वे भी हुवेंगे, क्योंकि उनके बचाने के लिए कोई उपाय नहीं था, तो भी जहाज के कलान ने एक नोटिस ऋपनी पल्टन में फिराया कि "हम ध्यपने जहाज को बुबाना चाहते हैं. मनर जो उसको इवाने को जाएगा उसके वचने का उगय नहीं, सो इस पर भी जिसको वहाँ जाना मंजूर हो। वह दरख्वान करे।" कतान का दल्तर दरख्वानों से भर गया। ऐसा कोई जापानी नहीं था, जिसने दुरख्याल न दी हो। बाज-बाज जापानियों ने खपनी - खँगुनी को काटकर : खुन से ऋर्जी लिखी, वार्जों ने ऐसी धमकी की ऋर्जी दी कि "यदि हमको न भेजा गया, तो हम फाँसी लगाकर मर जावेंगे।" श्रहो! मरने के लिए ऐसी उत्कंब क्यों? प्यारों! उस जहाज को डुवाने से जापान को लाभ पहुँचता था, मुल्क के लाभ के मुकाविले में वे अपने प्राण विलक्त कुछ नहीं समफते थे। इधर हिन्दुस्तान में "त्राप मरा, तो जग मरा" की कहावत है। स्रगर किसी हिन्दुस्तानों से यह कहा जाय कि तुन्हारे मरने से हिन्दुस्तानियों को राज्य मिनता है, तुम मरना स्वीकार करोगे ? तो क्या जवाव मिलेगा ? यह कि हम नर ही जाएँने, तो राज्य आने मे कायरा ही क्या होगा ? उक् (हा शोक!)! कैसा घृिएत स्वार्थ भरा हुआ है! प्लेग से दो लाख से ऊपर आदमी हरएक महाने में मर रहे हैं, हैवा आदि न्य वीमारियों का हिसाव अलग है, पर हिन्दुस्तान में ऐसा ें माई का लाल नहीं है, जो अपने इस ज्ञाए-भंगुर शरीर अपने देशोपकार-ह्यो यज्ञ में हवन कर दे, अर्थान् देश की भलाई में अपने प्राण न्योद्घावर कर दे, या पसीना ही वहाये, या थोड़ी तकलीक उठाए। श्रपने मुल्क के लिये प्राण न्योछावर

करना एक तरफ पसीना बहाना एक तरफ, थोड़ी तकलीफ उठाना एक तरफ रहाः पर हम लोगों से देश की वुराई न हो, तो उतनी ही रानीमत है । अभी एक हिन्दुस्तानी लड्का जापान में पड़ रहा था । एक दिन वह स्कूल-जायनेरी (पुन्तकालय) से एक किताव अपने घर पढ़ने की लाया। उस किताव में एक सक्तरा। था। जिसका बनाना उसको अत्यंत श्रावश्यक था। पर उस लड़के ने उस नक्ष्यों के बनाने की तकलीफ उठानी पसंद नहीं की और उस किताब से वह वर्क जिस पर नक्ता बना हुआ था फाइकर अपने पास रख लिया। कितने दिन के पश्चान् एक जापानी लड़के ने वह फटा हजा वर्क देख लिया। उसने प्रिसिपल से रिपोर्ट कर दी। और यह क़ानून पाम हो गया कि किसी हिन्द्स्तानी लड़के को लायन री से कोई किनाब घर पर पड़ने के लिये न दी जाय। अफसोस ! अपने जरा स्वार्थ के लिये या जरा श्रपनी तकतीर को बचाने के लिये उस दिन्द्रमानी सड़के जे बालजे सरफ के रजते कित्रजा आश जब अब प्रतेसाला है ?

श्चर्जा मंजूर की श्रीर मुसलमानी पल्टन को नोटिस दे दिया कि जो सिपाही १४) रू० में रहना चाहें तो रहें, अन्यथा अपना नाम 🦠 कटा लेवें। उस मुसनमानी पल्टन के किसी सिपाही ने १४) रु माहवारी में रहना मंजूर नहीं किया, और सबने अपने नाम कटा लिये। पश्चात् उन्होंने विलायत तक इस वात की लिखा-पढ़ी की, मगर न तीजा कुछ भी नहीं हुआ। भला सरकार को भारी खर्च करने से क्या मतलव था, जब कि थोड़े से खर्च में सरकार का काम चल जाता था। मजवूत और वहादुर सिपाही भी मिल गये, खर्च भी कम हुआ, तो सरकार ऐसी वेवक्रूफ क्यों वनती, जो उन मुसल्मान सिपाहियों की अर्जी पर ध्यान देती ? गरज, यहाँ सिक्ख सिपाही भरती हुए श्रौर मुसल्मान सिपाही सब बर्खास्त हुए। नाउम्मेद (हतारा) होक्र वे मुसल्मान सिपाही आफ्रि.का में मुल्ला के देश में चले गये श्रीर उसकी पल्टन में भरती होकर उसकी श्राँगरेजों के विरुद्ध भड़काने लगे। मुल्ला उनकी पट्टी में छा गया छोर उसने अँगरेजों के विरुद्ध लड़ाई शुरू कर दी। अँगरेजों ने हांगकांग से यही पल्टन सिक्तों की उनके साथ लड़ने के लिये भेजी। उन मुसल्मान सिपाहियों को मालूम हो गया कि उनके मुकावले में वही सिक्ख पल्टन आई है, सो पुराना वैर लेने जोश में, उन्होंने खूब बहादुरी से लड़ना शुरू किया। स सिक्ख पल्टन के कितने ही सिपाही मारे गये, कितने ही . शी हुए, कितने ही उस रेगिस्तान की गरमी को न सह े के कारण मर गये, कितने ही वीमार हुए। मतलव यह प्रायः सभी तबाह् हुए। प्यारो! देखो, जो जैसा करता , वैसा फल पाता है। इन सिक्ख सिपाहियों ने अपने ४) रु० के स्वार्थ से उन मुसल्मान सिपाहियों का ४५) रु० का नुक्सान किया था, उसका इनको यह फल मिला कि मारे

नये, मर गये, जरूमी हुए, बीमार हुए और तवाह हुए। उक् (हा शोक)! स्वार्थ कैसी युरी वला है! यह (वला) पहले तो दूसरों को नुजसान पहुँचाती है, ख्रीर फिर उसका अपना नाश करती है, जो इससे काम लेता है। प्यारों! जैसे इस शरीर के जीवन के लिये हाथ, पैर, नाक, आँख, कान, दाँत, जिह्ना आदि सभी देदियों की आवश्यकता है, वैसे ही इस संसार के जीवन के लिये भिन्न-भिन्न जाति के सभी मनुष्यों की चाहे वह हिन्दू हैं, या मुसलमान है या ईसाई है, या यहूरी अथवा पारसी है, आवश्यकता है। तब हम दुःख पहुँचावें, तो किसको पहुँचावें ? नीच सममें, तो किसको सममें ? स्वार्ध करें तो किससे करें ? देखो, यदि आँख यह कहें कि देखती तो मैं हूँ और लाभ हाथ वरोरह का होता है, इसिलिये देखना बंद कर दूँ हाथ कहे कि काम तो में करता हूँ और मजा मुंह उठाता है इसिलिये में काम करना छोड़ दूँ; पेर यह कहे कि सार शरीर का बाम में लिय फिरता हूँ, और ये सब मज मे रहते हैं। इसिलये फिरना छोड़ हैं। इसी

श्रीर इंद्रियाँ भी तकलीक उठायेंगी । जब यह बात विलक्क सिद्ध है कि स्वार्थ स्वार्थी को ही कालान्तर में अधिक तुक्सान पहुँचाता है, तो स्वार्थ से काम क्यों लेना चाहिये? हिन्दुस्तानी लड़के ने स्वार्थ से किताव का वर्क (पत्रा) फाड़ा था, उसने ख़्द् नुक्सान उठाया और अपने मुल्क को नुक्सान पहुँचाया । सिक्ख पलटन ने अपने स्वार्थ के लिये मुसलमान सिपाहियों को नुक्सान पहुँचाया था, वे खुद तवाह हुए। कहाँ तक कहें, स्वार्थियों ने अपने स्वार्थ के लिये खुद नुक्सान उठाया श्रोर मुल्क को कितना नुक्सान पहुँचाया हैं। इस बात की सैकड़ों मिसालें हिन्दुस्तान के इतिहास में भीजूद हैं । कौरव-पांडवों का सत्यानाशी युद्ध होना, मुसल-ों का हिन्दुस्तान में राज्य होना, शाहजहाँ के लड़कों का ः में लड़ना, मुसलमानी बादशाहत का नाश होना, श्रँगरेजों का हिन्दुस्तान में राज्य की जड़ जमाना, मरहठों का च्च, सिक्खों का नाश, श्रॅंगरेजों का तमाम हिन्दुस्तान का वादशाह होना, इत्यादि इन सब बातों पर यदि नजर डालोगे, तो माल्म हो जायगा कि हम हिन्दुस्तानी लोगों के स्वार्थ के कारण यह सब कुछ हुआ है। अगर हम लोगों में म्बार्थ न भरा हुआ होता, तो हिन्दुस्तान आज परदेशियों के पाँव पर न लीटता ! छांह ! स्वार्थ ने ज्यापको किस दशा से किस दशा को पहुँचा दिया है ? स्वर्ग से आपको रसातल में फेंक दिया। ्न 👉 से श्रापको हैवान (पशु) बना दिया, शेर से श्रापको ीदः बना दिया है। तो क्या प्यारों! अब भी आप उसकी ें छोड़ोगे ?

हिन्दुम्नान में म्वार्थ का हमेशा से वर नहीं है। यदि श्राप अपने पूर्व पुरुषों के जीवन-चरित्र पर एक वार हृष्टि हालें, नो मालूम हो जायगा कि जिन ऋषियों की श्राप श्रीलाद (सन्गान) हैं, वे कैसे निःत्वार्थी होते थे। दूसरे की भलाई के लिये, द्सरे के उपकार के लिये, वे महात्मा कैसे तन-मन-धन न्योद्धावर करते थे ? और अपनी जान की भो परवाह नहीं करते थे। शरीर का मांस, शरीर की हड़ी तक वृसरों की भलाई के लिये दे देते थे। जब तक हिन्दुस्तान में ऐसे पुरुष होते रहे, तव तक हिन्दुस्तानी लोग चक्रवर्ती राज्य भोगते रहे, तब तक हिन्दुस्तान संसार में शिरोमणि गिना जाता रहा। पर जब से इस स्वार्थरूपी वला ने हिन्दुस्तान को घेरा है तव से हिन्दुस्तान का पलड़ा जलट गया। सो यदि आप फिर सन्दलना चाहते हैं, तो एक दम से इस स्वार्थ को हिन्दुस्तान से निकाल दीजिए। मरते तो सव हैं, किन्त इम लोग सिर्फ कालवश ही मरते हैं, और प्रकार से हम मरना नहीं जानते। मरना जानते हैं जापानवाले श्रमेरिका-वाले और योरोपवाले, सो हम लोगों को भी उनसे मरना सीखना चाहिए। श्रमेरिका में एक बार साइंस की तरक्की के लिये आवश्यकता हुई कि एक आदमी जिन्दा चीरा जाय, नाकि यह माल्म हो कि खून की हरकन किन वक किस नस में कैसी होती है। मरे हुए आदमी को चीरने से यह बात मालम नहीं हो सकती थी। क्यों कि मरे हुए आदमी में खन की हरक जहाँ होती सी एक त्याहमा इस बात के लिए . त्यार तर तया त्येर वट घंगर तया एक बार ह्याँग्य के न्यत्र वे परदे के 'बपय से नासने वी नकरन देशाव आदसी न व्यवसान्य व वस्त्राहा राज्या व्यासा हर जेली ने स्त्रपन क्षा के । अने शरप व अध्यक्षे ताल प्रकार था। न्तर राम सुन्य ने परिषय के लेप उनका राज पर उच्च र कुल के कि तसका के नाव अने र र सुन्त ने असे साविकार में दूसरे उन्हें र रहे ते ह्याँ र प्रांत का सब ना र त्यार शरीहाँ व न्यार यारा अपर्यात तो ये एक्टर जीग हुन अन की सी

जाएँगे, जिसको विना सीखे ये लोग दूसरे के शरीर व आँख को पूरा-पूरा कायदा नहीं पहुँचा सकते हैं, तब ये लोग पूरा-पूरा कायदा पहुँचा सकेंगे, श्रोर हमारा शरीर व श्राँख जिनसे श्रभी तक केवल हमारा ही फायदा हुआ है, छाव से प्रत्येक स्रादमी के शरीर खोर खाँख के कायदें के लिये होंगे, खर्यात हमारा शरीर और आँख सबके शरीर और आँख के साथ मिल जाएँगे। श्रहो! क्या ही उत्तम ज्ञान है। प्यारों! श्रापको भी यह ज्ञान सीखना चाहिए। जब तक छापको ऐसा ज्ञान नहीं होता, श्रापकी हरगिज तरक्की नहीं हो सकती।

यह बात भी नहीं है कि वे लोग मनुष्यों से ही ग्रेम करते हैं, किन्तु मांसाहारी होने पर भी वे प्राणी-मात्र से प्रेम करते हैं। श्रमेरिका का प्रेसिडेन्ट (राष्ट्रपति) एक वार दरवार को जाता था। रास्ते में उसने देखा कि एक सुखर कीचड़ में फँसा हुआ है। वह सुखर निकलने की जितनी ही ज्यादा कोशिश करना था, उतना ही वह श्रविक कीचड़ में फेँसा जाना था । प्रेसिडेन्ट से न रहा गया, वह दरवारी कपड़ों सहित, जिनको वह पहरे हुए था, कीचड़ में कुद पड़ा स्त्रीर मुखर को निकाल लाया । पश्चान वह कीचड़ से भरे हुए कपड़ों को पहिने हुए ही दस्वार में चला गया। राष्ट्रपति की यह दशा देखकर दरवारियों को बड़ा आश्वर्य हुआ। वे राष्ट्रपति से नम्रता-पूर्वक इस विषय में दर्यापत करने लगे। राष्ट्रपति ने सारा क्रिस्ता वयान किया । द्रवारी लोग बड़े खूश हुए श्रीर हाजार मुख से प्रेसिडेन्ट माहव की प्रशंला करने लगे। फुड़ 🚒 तं लगे कि हमारे प्रेसिंडस्ट साहव ऐसे मेहरवान (कृपालु) हैं

सुद्धर पर भी मेहरवानी (कृपा) करने हैं। खीर कोई कुद कहने लगा और कोई कुछ । प्रेसिडेन्ट ने कहा कि मेरी भूटमूट प्रशंसा क्यों करते हो ; मैंने सुखर पर हया नहीं की, फिन्तु उसकी

में वेतरह फँसा हुआ देखकर सुभे दर्द हुआ था। मैंने र्ह को मिटाया है, मैंने सुझर के साथ भलाई नहीं की न्तु अपने साथ भन्नाई की है। क्योंकि उसके फँसने पर ्य मुक्ते हुन्ना था, वह उसको निकालने से निकल गया तृ दूर हो गया। इतहा! सच्चे वेदान्त का यह क्या ही त नमूना है कि प्राणी-मात्र के दुःख को अपना दुःख क्ता, और प्राणी-मात्र पर दया करने से अपने ऊपर दया । समकता और प्राणी-मात्र का दुःख दूर करने से अपना दुःख दूर समकता। क्या कोई हिन्दुस्तानी राजा, रईस,

aidi

ोर होता, तो वह उस सुझर को कीचढ़ से निकालता ? ो नहीं। तो विचार करों कि 'प्राणी-मात्र पर द्या करना' आपका मुख्य धर्म है, सो आप अपने इस उदार धर्म से

तना भ्रष्ट हुए हो ? धर्म-भ्रष्ट तो हुए. पर धर्म-भ्रष्ट होते जो-जो सजा मिलती हैं. वह प्यारों ! श्रापको मिल रही हैं। प नव नक इस सजा से स्त्राप ह्युटकारा नहीं पा सकते, व तक कि किर उस उदार धर्म (प्रार्टी-मात्र पर दया करने) क्तान्य काद खपना आवश्स नहीं बनाते।

के माल पर महसूल मुखाक हुआ। धौंगरेज डॉक्टर ने अपने फायदे पर ख्याल न किया, किन्तु खपने मुल्क के कायदे पर किया। यदिवह अपने कायदे पर ख्यान करना और वादशाह के भारी इनाम को ले लेता, तो थोड़े दिनों के लिये वह श्रमीर हो जाता; पर जब उसने मुल्क का ख्याल किया, तो जसका सारा मुल्क ही अमीर हो गया। क्या हिन्द्रस्तानी भाई से कभी यह उम्मेद हो सकती है ? स्रोह ! उन लोगों में कैसा स्वामाविक बेदान्त है। तब वे लोग तरक्षकी न करेंगे, तो कौन करेगा ? इधर हिन्दुस्तानियों पर तो ठीक यह मिसाल चरितार्थ होती है कि एक साधु ने किसी मनुष्य को एक वस्तु दी। उस वस्तु का यह गुए। था कि वह मनुष्य उस वस्तु से जो कुछ माँगेगा, वह उसको मिल तो अवश्य जायगा, मगर उसके पड़ोसी को उसने दृना मिला करेगा। उस मनुष्य ने यन माँगा, हाथी-घोड़े माँगे, गाय-भेंस माँगी, श्रोर जो कुछ माँगा, वह सब उसको मिल गया, मगर उसके पड़ोमी को उससे दूना मिला। पड़ोसी को दृना मिलने पर वह बहुत जलता रहा। एक दिन वह यह बात सोचता रहा कि इस वस्तु से क्या माँगें, जो पड़ोसी को दूना मिलने पर उसका अधिक नुक्सान हो। सोचते-सोचते उसके ख्याल में यह बात आई कि अपनी एक श्राँख फूट जाय, इसलिये यही माँगना चाहिये कि मेरी एक श्राँख फूट जाय, क्योंकि तब पड़ोसी की होनों आँग्वें फुट जायँगी। उसने ऐसा ही किया। उसकी एक आँख और पड़ोसी की दोनों आँखें फूट गईं, फिर उसने अपने एक हाथ और एक पाँव टूटने के लिये उस वस्तु से यार्ज की। उसका एक हाथ और पाँव टूट गया और उसके पड़ोसी के दोनों हाथ और पाँच टूट गये। इत्तफाक से उसको लक्षवा हुआ, और उसके रहे-सहे हाथ-पैर भी टूट गये, और आँख भी फूट गई।

तय उसने उस वस्तु से दोनों हाथ, पैर झौर झाँखें माँगी, पर यह प्रार्थना अस्वीकार हुई, क्योंकि पड़ोसी को उससे दूना मिलना था, मगर उसके चार हाथ, पाँव छोर छाँखें नहीं थीं। तब उसने लाचार होकर श्रपनी एक श्राँख हाय, पाँव के अच्छे हो जाने की प्रार्थना की, यह स्वीकार हुई। उसके एक हाय-पाँव और आँख अच्छी हो गई और पड़ोसी के दोनों। पड़ोसी जैसा का तैसा हो गया, मगर उस कमयख्त (दुर्भागी) की एक झाँख फूटी की फूटी रह गई, झोर एक हाथ-पाँव हुटे के हूटे ही रह गये। सो त्यारों! विचार करो, जो अपने पड़ोसी की दुराई करता है, उसके लिए खुद् दुरा होता है। पड़ोसी अपने मुल्कवालों को कहते हैं, सो अपने मुल्क की बुराई नहीं करनी चाहिये। वाइविल में लिखा है कि अपने पड़ोसी को अपने बराबर प्यार करो बदापि श्रापके शास्त्रों में श्रीर भी उदारता पाई जाती है. क्योंकि उनमें मारं जगन क' श्रपने बरावर प्यार करना लिखा है। बाइबिल के माननेवाले तो बार्रावल में लिखी हुई यात को अत्तर-अत्तर मानते हैं। अंग आप जीन आपने शास्त्री में जिन्दी हुई इस बात को उक जगत को प्राप्त दरादा प्यार करो। एक हिस्सा नहीं सानते यह 'बटन' तजा की बात है े त्यारं जगत को आपने बराबर त्याप नते कर सकते हो। तो अपने मुल्क को तो अपने दरादर प्यार विदासको । मुल्क को भर्ग कर सकते हैं ते व्यन्त इ.स्व को तो 'यार करें। यह तथा बात है 'ते खारादे छन्। अहस्य हो से भेद पर रक्त्या है। प्रथमें कुट्रम्य सं सं प्रारं पाय से स श्योतः तो आप एकाइस इतना जाये स १०१५ और स्वापका क्षा वा चत्र एका क ऐसा प्रकार के राजन

भेल्भाव (हेन भाव) इस्तत व भर्म में इहा हा जानवार्य

में अमेरिका जादि मुल्कोंवाले आशातीत लाभ उठाते हैं। गधा और सुखर, जो हिन्दुस्तान की नजर से विलकुल पृिं हैं, अमेरिका में बड़े काम आते हैं। मैला, जिसकी तरफ नजर पड़ने से ही के (वमन वा उल्टी) हो जाती है, अमेरिका में अच्छी न्यापारिक चीज है। हड्डी, जिसके ह्यू जाने-मात्र से स्नान की जरूरत होती है, इतने फायदे की चीज है कि सारी दुनिया को ज्ञाभ पहुँच रहा है। इसकी खाद जिस स्रेत में पड़ती है, वहाँ चौगुनी फसल पैदा होती है; इससे जो फारकोरस निकलता है, वह संसार को लाभ पहुँचा रहा है। दियासलाई इसकी बनती है, श्रौर पुष्टिकारक उत्तम द्वा भी इसी से वनती है। वाल जिसको तुम तुच्छ (नाचीज) सममकर फेंक देते हो, उससे अमेरिका में खुव पैसा पैदा होता है। इसी प्रकार सब चीजें जो हिन्दुस्तान की नजर से घृिणत, अपवित्र और अयोग्य समकी जाती हैं, उनसे दूसरे मुक्तवाले खूव फायदा उठाते हैं, और उनसे खूव कमा लेते हैं। उन मुल्कों में जब ऐसी-ऐसी चीजों से भी फायदा उठाते हैं श्रीर काम लेते हैं, अफ़सोस, हिन्दुस्तानी तो सायू लोगों से भी काम लेना नहीं जानते! हजारों, लाखों साधू पड़े हुए हैं, यदि उनसे काम लेते, अथवा उनसे फायदा उठाने की चुद्धि हिन्दुस्तान को होती। तो हिन्दुस्तान का बड़ा भारी उपकार हो जाता।

एक समय या, जब हिन्दुस्तानी लोग मनुष्यों के ज्ञलावा जानवरों से भी मनुष्य का काम ले लेते थे। मनवान रामचन्द्रजी ने बंदरों की सेना चनाई थी, श्रीर ऐसी कामयावी (सफलता) हासिल की थी कि साजकल के हिन्दुस्तान के मनुष्यों की सेना से भी वह कामयावी हासिल नहीं होती। यदि रामचन्द्रजी वंदरों को वंदर कहकर ही ख्याल न करते श्रीर इन

सहायता नहीं ले सकते, जय तक कि उनसे भेद रखते हो।
या प्रेम नहीं करते, अर्थान् उनको अपने ही वरावर नहीं
समकते। और तय तक आपका भेद दूर नहीं होगा, उनसे
प्रेम नहीं होगा, और उन सबको अपने वरावर समफना संभव
नहीं होगा, जब तक कि ब्रह्म-विद्या का प्रकाश आपके हृदय
में नहीं होता। सच्ची ब्रह्म-विद्या के प्रकाश होने से ही आप
हरएक चीज से प्रेम करने लगोगे, और उनमें जो गुए हैं,
जिनके विना आपकी उन्तति का मार्ग अगम्य हो रहा है,
उनको लेने में संकोच नहीं करोगे तब आपकी उन्नति
वेरोक-टोक होती चली जायगी, आप जो कुछ अपना खो
चुके हैं, वह सब कुछ मिल जायगा। और आपकी उस शोचनीय
दशा का पलड़ा एकदम पलट जायगा।

हम लोग गुरा नहीं देखते. श्रीर गुरा सबसे लेना चाहिये, चाह श्राच्यममाजी हो हिन्दू हो मुसलमान हो बाह्य हो या कोई श्रीर हो क्योंक गुरा की कमी सबसे है। क्या कोई श्राच्यममाजा हहा मुसलमान बाह्य या कोई श्रीर मजहब-

लड़के वहाँ इत्म सीलने गये थे, पर खर्च तो वे ले ही नहीं गये थे. कॉलेजों में वे किस तरह भरती होते ? सो उन्होंने वहाँ मजरूरी क्रनी शुरू की। किसी ने हल लगाना शुरू कियाः किसी ने और मजदूरी ऋल्यार की। वहाँ मजदूरों को छः रुपया तक प्रति दिन मद्भदूरी के मिलते हैं। अतः वे लड़के मङदूरी करके खुद रूपया पैदा करने लगे । अमेरिका में मजरूरों के पड़ने के लिये रात के स्कूल (night schools) हैं। क्योंकि जो आदमी गरीव हैं और दिन के स्कूल में नहीं पड़ सकते हैं, उन्हीं के उपकार के लिये रात के स्कूल का प्रवन्ध है वाकि अपने गुजार के लिये दिन में मजदूरी करें और रात में पढ़ें। बहादुर जारानी लड़के भी उन्हीं रात के स्कूलों में भरती हुए। सो वे रात को इल्म हासिल करने लगे, और दिन में रूपया कमाने लगे। जब उनके पास कहा रुपया जमा हो गया और अँगरेजी भी वे दोलने समकते लगे, तव कॉलेज में भरती हो गये। जापानी लोग जिस मुल्क में जाते हैं, इस मुल्क की भाषा वे उसी मुल्क में जाकर पड़ते हैं। सो वे संख्तिलेक किन्स के इत्स पड़ने लगे। परवात् पास होकर अपने देश को आर. और इत्म के साय-साय रूपया भी पैदा कर लाये । यह देखोः जापानियों की दृद्धिः न्वदेशाहराग श्रीर कष्ट-सिहण्णुता कैसी अतुपम है! स्वदेशातुराग कि अपने देश का धन अपने ही देश में रहे। यहाँ तक कि अपने आयदे के लिये भी यदि हुनरे मुल्क में जाना पड़े तो भी जहार रेल के किराये में भी प्रपना रुप्या परदेश में न जाय. और कॉलेजों की पड़ाई का लर्च तो अलग रहा। वरद अपने देश के देसे से एक किवाद तक भी न खरीरी जाय: स्पाने-पीने में अपना पैसा सर्प करना नो अलग रहा. उतदा वहीं से पैदा करके अपने हुन्ह को रूपया एकद्र करके लाया। जायः और स्वपने हुन्ह की

भनाई के लिये सपने नहीं गत यह की जाय कि दूसी मुल्हों से ने 'उतम विया' सील कर आयें कि जिसकी व्यपने मुक्त में निहायत अरूरत है, और जिस पर व्यपने देश की जन्मति सिभैर है। वृद्धि से वे लोग कैसे जन्ही उस तरी है को साथ लेते हैं, जिसमें उनकी उन्नति हो। किराले से यनने के लिये ही उन्होंने हैसा खनोत्या कोरात किया था कि सकर भी हो गया, किराया मी न पदा, उन्हा हुन रुपया हाथ आ गया ! हम हो संदेह है कि दुनिया के किसी श्रीर मुलक के आदमियों की ऐसी बुद्धि हो। भला दुनिया में ऐसा कीन मुलक है, जिसने पर्चास वर्ष के श्रंटर ऐसी श्राशानीत उन्नति की हो, जैसे जापान ने की है ? यही उनकी विचित्र बुद्धि का अनुपम इष्टांत है। यह उनके असली वेदान्ती होने का सुखद, सुधामय, मधुर फल है। ऐसी क्ट्र-सहिष्णुता कि अमीरों के लड़के भी माइ, बग़ैरा नीच और स्रोती यरौरा मुश्किल काम करने में न शर्मिन्दा हों, श्रौर न तकलीक समर्फें, किन्तु दिन में खेती बरोरा की कठिन मेहनत करें और रात में करें गंभीर पढ़ाई, अर्थान शारीरिक

मानसिक दोनों प्रकार के परिश्रम करें छोर कभी न ! प्यारों ! जापान में ऐमा देशानुराग है, ऐसी विचित्र ्युद्धि है, ऐसी कप्ट-सहिष्णुना है, तब जापान जैसी और जितनी उन्नति चाहे, वह वैसी स्त्रार उतनी ही तरक्की कर सकता है। उधर जब जापान के लाग अपने मुल्क की उन्नित के तिये ऐसे-ऐसे यत्न और विचारों से काम ते रहे हैं, इबर तय हिन्दुस्तान के लोगों को अजब कैफियत है। पहले तो दूसरे मुल्कों को जाना ही हिन्दुस्तान की नजर में पाप है। तिस पर भी यदि किसी ने हिम्मत की और उसको पाप न भी सममा, तो उसको आला दर्जे का सामान चाहिए। वह



इसके अतिरिक्त वह विलायत से लीटकर जापानवालों की तरह कभी मुल्कवालों को प्यार नहीं करेगा, वल्कि अपने मुल्कवालों को असभ्य, वेवक्क और जंगली ख्याल करेगा खीर उनके साथ उठने-बैठने व बोलने-चालने में भी शर्म मानेगा; तो कहिये, हिन्दुस्तान की किस तरह तरक्की हो ? हिन्दुस्तान की तरक्कों के लिये इस वात की जरूरत नहीं है कि हिन्दुस्तान के लोग विलायत में जाकर वैरिस्टरी पास करके आयें, किन्तु इस बात की जरूरत है कि वे लोग कृषि-विद्या सीख कर आवें, और हो सके, तो और हुनर भी सीख कर आवें, जिससे अपने मुल्क को कायदा हो, अपने मुल्क का पैसा अपने मुल्क ही में रहे, और दूसरे मुल्क का भी रूपया श्रपने मुल्क में श्रावे। दूसरे मुल्क का रुपया इस मुल्क में तभी श्रधिक त्रावेगा, जब कृषि-विद्या की तरक्की होगी। श्रौर-श्रौर हुनरों में हिन्दुस्तान दूसरे मुल्क को बराबरी नहीं कर सकता। क्योंकि दूसरे मुल्कवाले उन वातों में बहुत वढ़ गये हैं, कृषि-से हिन्दुस्तान की आमदनी का सिलसिला वढ़ सकता , सो हिन्दुस्तान के लिये कृपि-विद्या की स्रोर विशेष ध्यान की श्रत्यंत श्रावश्यकता है। इस विद्या की तरक्षक्षी के लिये जाना होगा । वहाँ सब विद्या पढ़ाई जाती हैं । में कृपि-विद्या की खोर अधिक ध्यान नहीं दिया जाता, कि वहाँ और-और हुनरों की अधिकता है, और आवादी बढ़ जाने के सबब से खेती भी कम है। हिन्दुस्तान में कृपिविद्या की पाठशाला पहले तो है ही नहीं, अगर कहीं है भी, तो ठीक नहीं है। यहाँ पढ़ाई का कुछ और ही ढंग है, कितावों में जो कुछ पढ़ाया जाता है, वह ऋमल में नहीं लाया जाता । यहाँ पढ़ाना कुछ स्रोर, स्नमल में कुछ स्रोर। वहाँ स्कूल में जो कुछ पढ़ाया जाता है, वह श्रन्छी तरह श्रमल में भी लाना सिखाया जाता है।

में डरते रहते थे कि कहीं धर्म की हानि न हो। अपने शरीर के साथ वे जैसा वर्ताव करते थे, दूसरे के शरीर के साथ भी उनका वैसा ही दरताव होता था। वे अपने में और दूसरे में भेद नहीं सममते थे। उनकी नजर में संसार के सभी प्राणी वरावर थे। सवको ही धर्मारमा होना, सवको ही धर्मीपदेश देना, वे चाहते थे। सव की ही मजाई करना उनका नित्य कर्म था। पर अब जमाना (समय) पलट नया है। हिन्दुस्तानियों का धर्म अब केवल कितावों में रह गया है। हिन्दुस्तानियों का धर्म अब सिर्फ विवाद में काम आता है, हिन्दुस्तानियों का धर्म अब सिर्फ वातूनी जमान्जर्च का रह गया।

हिन्दुस्तानी अय न धर्म-बीर रहे, न धर्म-भीरु, क्योंकि धर्म के लि^{9े द्यपने} शरीर की परवा न करना तो एक तरफ रहा, जो कोई उनके घर में आकर उनके धर्म की निन्दा करने तने, तो भी वे कान नहीं हिलाते हैं: छोर यदि छाप स्वयं बड़े-बड़े अनर्थ भी कर बैठें तो उन्हें हर नहीं होता कि हम कैसे धर्म-हीन हो रहे हैं, हम धर्म पर कैसे लात मार रहे हैं ? प्यारे हिन्दुस्तानियों ! हिन्दुस्तानी खपने वेनचीर शास्त्रों की छोर ध्यान नहीं देते विचार नहीं करते मनन नहीं करते। बोह! आपको माल्म नहीं है कि आपके पूर्वजों ने आपके लिए कैसे अचय जजाने का संप्रह रख छोड़ा है। ऐसे खजाने के पास होने पर भी प्यारी! मृत्ये मत सरी, ठीकरें मत खाखी, इपर-उपर मत भटको । इस खजाने का उचित ब्यवहार गरो, उचिन रीति से छर्च करो, देयों और विचारों कि इस दौतत पर सारी दुनिया का एक है। साप केदल इस दात के एजेन्ट दनों कि इस खड़ाने की दादत सारी दुनिया को सचित पर दो कि हमारे पास हम हुम सबके हिंदे खडाना

धर्म (खजाने) को इस क़द्र छिपा रक्खा है कि आप भी उसको नहीं देवना चाहते कि उसमें कैसे-कैसे अमृत्य रत्र भरे पड़े हैं, जिससे आपको अपनी असलियत मालूम होती श्रौर श्रापको श्रमिमान होता कि हमारा खजाना दुनिया के और खजानों से बढ़िया है। पर ऐसा न करके श्राप दूसरों के काँच पर लुभाये चले जाते हो। श्रीर श्रगर आपकी यही हरकत रही, तो आप सब के सब काँच पर तुभाये चले जास्रोने, स्त्रौर स्त्रापका नामोनिशान दुनिया में नहीं रहेगा। यह भी याद रक्त्वो कि यह श्रमृल्य खजाना अब छिपाने से भी छिपता नहीं है। लोगों को उसका पता लग चुका है और अमूल्य बवाहिरात को वे लोग निकालने त्तन गये हैं। श्रापके खेजाने के श्रमृत्य रहों में से सत्य, शौच संयम विद्या, बुद्धि, धृति, इमा नाम के रत और सभी रतो से वड़ा हुन्ना समदर्शिता रूप महारम जिसका दूसरा नाम ब्रह्मविद्या या वेदान्त है श्रोर जिसका यहाँ नाम नहीं दिग्वाई देता है. वे सब के सब रव श्रमेरिका. जापान श्रादि दूसरे मुल्कों में चले गये हैं। ऐसा ही मालूम होता है। देखां अमेरिका-जापान आदि मुल्को में जो अद्भुन प्रकाश का मौन्दर्य दिस्वलार देना है. एसा प्रतीत होता है कि यह उन्हीं महारत्नी की विसला ज्यानि व छटा का प्राकृतिक गए। है। उन्हीं का प्रभाव हे स्वयं उन्हों का महत्त्व हैं जापान स्वसेरिका की देखका ७६ व डमान का स्मरण होता है उस इसाने में हरदानान से 'जन देखें व' धम धा पर मुल्कों से इस समय देश देश की एम पाया जाता है तह 'हर्यम्तान ही इस इमान में हो होलन या वा होलन नेपान प्रमारका का इस बता हा ना आध्यर्य ही क्या है एवं बार श्वेसीरवा में राम को एवं उनवान को ह स्केर्

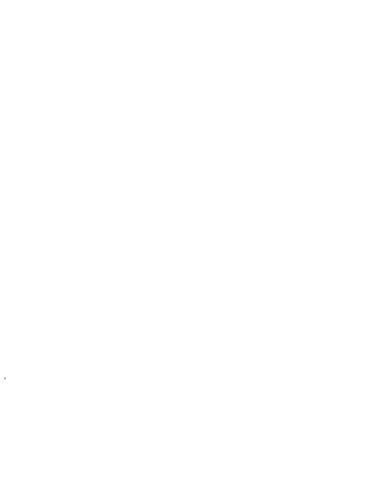
जिल्द तीसरी

न्योता आया, जो विपुल धन को अधिकारिएी थी, जिसने ४४ लाख रुपया श्रपने मुल्क की उन्नति के लिये ही दान दिये थे। जब राम वहाँ गया, तो वह घनी स्त्री जूता माड़ने के लिये तैयार थी। राम ने आरचर्य से पूछा कि आप इतने नौकरों के मौजूर होने पर भी ऐसा काम स्वयं क्यों करना चाहती हो ? उसने उत्तर दिया कि इस काम के करने में लजा ही क्या है गर शारीरिक काम करने में हम अपनी इज्जत सममते हैं, श्रीर उसने अपने ही हायों से यह काम किया। क्या कोई हिन्दुस्तानी रईस या मामूली श्रादमी भी ऐसा काम कर सकता था? कभी नहीं। हिन्दुस्तानी आदमी अगर यह सम्भव हो, तो अपनी आँखों से भी देखा नहीं चाहता है। पर कृष्ण के जमाने में ऐसा श्रतिथि-सत्कार वड़े श्रादमी स्वयं करते थे। कृष्ण तथा कृष्ण की पटरानियों ने स्वयं ऐसा श्रतिथि-सत्कार सदामा आदि ब्राह्मणों और अतिथियों का किया। युधिष्ठिर के यज्ञ में ऋर्जुन श्रीर कृष्ण ने जूठी पत्तल उठाने श्रीर पैर धोने का काम अपने जिन्मे लिया था, पर श्रव अमेरिका में ये वातें पाई जाती हैं, हिन्दुस्तान में नहीं।

कृष्ण के ही जमाने में हिन्दुस्तान में ब्रह्मचर्ण्य की जो शवस्था थी, वह श्रमेरिका में श्रव पाई जाती है। वहाँ २० पर्य तक न कोई विवाह करता है श्रीर न किसी को विवाह हा ख्याल ही होता है, यहाँ तक कि २० वर्ष तक के लड़के श्रीर लड़िक्याँ एक ही पाठशाला में पढ़ते हैं, श्रीर माई-बहिन की सी प्रीति रखते हैं। उनके विषय में चाहे कोई कुछ कहे, रर इस वात का हमको दृढ़ विश्वास है कि उनके दिलों में कभी नापाक (श्रपवित्र) ख्याल पैदा नहीं होता । यह कैसे प्राचा का ब्रह्मचर्ण्य है ? वे स्त्री श्रीर पुरुष को वरावर की शेचा देते हैं, उनकी पढ़ाई में वे कुछ भेद नहीं रखते हैं। मदों

३२४ स्वामी रामतीर्थ जिल्ह तीसरी .

पंडिता थी कि उसने सभा में जो प्रश्न किये थे, उनका उनर देना भीष्मपितामह के लिए भी कठिन हो गया था। 🕶 हिन्दुस्तान में खी-शिवा बंद कर दी गई, जिसका फल भी सूब मिल रहा है। अमेरिका आदि मुल्कों में स्त्री-शिका 🖼 खुव प्रचार है। एक समय राम अमेरिका के जंगलों में रहता था, एक श्रमेरिकन लड़की श्रपने पिता के साथ उपदेश सुनने आई। उपदेश पूरा होने के पश्चान् उस लड़की ने जो 🗺 सुना था, यह कयिता में लिख डाला। इन सब बातों पर विचार करने से मालूम होता है कि स्त्री और पुरुषों की शिक् में पहिले भेद न था। और इसीलिए उनकी दिमागी ताकत में 🐃 भी न होता था। तव हम कोई कारण नहीं सममते कि स्त्रियों की शिचा क्यों बन्द हुई, और उनकी ताक़त क्यों रोक दी गई है। मुल्क की उन्नति के लिए स्त्री-शिचा की अत्यंत आवश्यकता है, अर्थान् विना स्त्री-शिज्ञा के मुल्कों की उन्निति हो ही नहीं सकती । लड़कपन में वालकों को जो उपदेश दिया जाता है, उसका श्रसर वहुत जल्द होता है, श्रौर कमी स्ताली नहीं जाता है, श्रीर वालकों को माता ही के साथ रहने का श्रवसर मिलता है। सो लड़कपन में बालकों को शिवित माता की त्र्यावश्यकता होती है। पर यदि स्त्री पढ़ाई ही ्र जायगी, तो शिच्चित माताएँ कहाँ से होंगी ; श्रौर जब 🐫 माताएँ ही नहीं, तो वालकों को सदुपदेश ही कहाँ से ्सकती हैं। श्रीर जब बालक बाल्यावस्था ही में सदुपदेश द्वारा सुयोग्य न वना दिये गये, तो मुल्क की कैसे उन्नति हो सकती है। श्रतः प्यारो! स्त्री-शिचा को फैलात्रो, श्रापके पूर्वपुरुष स्त्री-शिचा के पत्तपाती थे, त्राप क्यों विपची वन कर श्रपने पैर पर कुल्हाड़ी मारते हो ? लड़कों को वाल्यावस्था में यह जरूरी है कि उनके नस-नाड़ी में देशोन्नति का ख्याल



नय करेगा कि क्या हुक्स है। जब बह कहेगा कि मुने लां चीत दरकार है, या में अनुक वस्तु केवल देवना हिता हैं, तो वह दरवान उनको उस कमरे में, बढ़ाँ उसके

ायक सीहा है, या जहाँ-जहाँ वह देखना चाहता है, ने जायगा लान् फाटक से कुछ दूर तक उसको पहुँचा कर अदय से लाम करके यागस होगा । यह बराबरों का मल्क, युर

गाई, यह प्रेम ही च्यापार की उन्नति के मुख्य अंश हैं।

इनका पूर्ण व्यवहार करते हैं, और इसी लिये ही वे व्यापार इतना बड़े-चड़े हैं कि उनकी चरावरी करनी सुरिकत नि पड़ती है। यहाँ हिन्दुस्तानियों की ख़जब कैकियत

। यहाँ भाइकों के साथ एकसाँ वरताव नहीं होता । ी दुकानों से थोड़ा सीदा सरीदने का किसी को हीसता

ों होता। इसका कारण यह है कि बड़ी दुकानवाले थोड़ा

दा खरीदनेवाले के साथ श्रन्छा वरताव नहीं करते। छोटी-टी दुकानवाले श्रवसर फूठ वोला करते ह । इन लोगों

यह खयाल है कि विना भूठ के व्यापार चल हो नहीं

न्ता । एक पैसे का सीदा खरीदने में घंटों मगुव रना पड़ता है। मुक्त में तकरार बढ़ती और समय नष्ट

ता है। यदि सचाई के साथ व्यवहार किया जाय. तो ों न व्यापार में तरक्की हो ?

हिन्दुन्तान में व्यापार की तरक्की क्यों नहीं होती ? इसका कारण यह है कि हिन्दुन्तानी लोग, जो लिख-पड़

ते हैं, केवल नौकरी कियाँ करने हैं, ब्यापार करना अपनी वेइज्जती समक्ते हैं। या उधर ध्यान ही नहीं देने :

हें दुकानदारों की हो वे नौकरी करें, पर दुकानदारी ते नहीं करेंगे। यह क्या ही मजे की बात है कि जिस पेशे स्वयं नहीं करना चाहते, उस पेशेवाले की नौकरी तो



अपने तौर पर लिखा और अपने प्रिंसिपल को दिखाया। र्पिसिपल वड़ा खुश हुआ, और उसने उम लड़की को छःमास का प्रमोशन दिया । इसो प्रकार जब तक कि हिन्दुस्तान में भी लड़कों की लियाकत तथा विचार-शक्ति पर ध्यान नहीं दिया जायगा, तब तक हिन्दुस्तानियों का आला दर्जा पास कर लेना भी किसी काम का नहीं। यहाँ भी किंडर-गार्टन होने चाहियें, जिसमें वच्चे प्रैक्टिक्ल (च्यावहारिक) इल्म हासिल करें उनकी विचार-शक्ति बढ़ें अर्थात् युवा होने पर वे किसी काम के हों, श्रीर अपने मुल्क को कायदा पहुँचा सकें। समय चला जा रहा है। एक-एक लम्हा (पल) चहुमूल्य गुजर रहा है। बहुत कुछ सो चुके, बहुत कुछ आराम ले चुके, बहुत कुछ समय नष्ट कर चुके, बहुत कुछ स्त्रो चुके। त्यारों! अब अपने कर्तव्य की ओर ध्यान दो। वह उपाय करो, जिससे आपका मनुष्य-जन्म सार्थक हो । श्रसभ्यता का जामा उतार दो। थोड़ी देर के लिये इस वात पर विचार करो कि आप क्या थे और अब क्या हो गये। अपने कर्तव्य की ओर ध्यान न देने से अव आप धीरे धीरे रोटियों के भी मुहताज होते चले जा रहे हो। चिंद इसी प्रकार कुछ दिनों तक ऐसी राफलत की नींद में सोते हुए रहोगे, तो प्यारों ! आपकी जैसी दशा होगी, वह आप स्वयं विचार लो। कहने से दुःख होता है। सावधान! सावधान !! बहुत जल्द सावधान होना चाहिये।

श्रपनी उन्नित करने के लिये हिन्दुस्तानियों को ग़ैर मुल्क-वालों (विदेशियों) से घटुत कुछ सीखना है। सबसे पहली यात, जो उनसे सीखनी है। यह है कि वे लोग यच्चों को किस प्रकार शिला देते हैं। क्योंकि यच्चों की शिला पर ही देश की उन्निति अवनित का दारोमदार है। यच्चों को प्रकार की शिला दी जायगी। उसी प्रकार का उनका स्वभाव श्रौर ख्याल होगा। जापान में जव लड़का पहले-पहल स्कूल में भरती होता है, तो मास्टर उससे सवाल करता है "तुम्हारा शरीर काहे से जीवित है ?" लड़का कहता है "अन्न से।" मास्टर पूछता है "कहाँ के अन्न से " लड़का जवाव देता है "जापान के अन्न से।" मास्टर फिर कहता है, "तव यदि जापान में अन्न न होगा, तो तुन्हास शरीर जीवित (जिन्दा) नहीं रह सकता ?" लड़का जवाब देता है "नहीं, नहीं रह सकता।" तव मास्टर कहता है "जब तुन्हारा शरीर जापानी श्रन्त से वना है, तो क्या जापान को इख्तियार है कि जब उसको ज़रूरत हो, तब वह तुम्हारा शरीर ले ले ?" लड़का बहादुरी से जवाब देता है "हाँ, जापान को इख्तियार है। जब चाहे हमारे शरीर को ले सकता है।" इस प्रकार श्रपने देश के:लिये हर वक्त प्राण् देने को तय्यार रहने की जापानी वालकों को पहिले ही शिचा दी जाती है। यह उसी शिचा का फल है कि जापान ने रूस जैसे प्रवल राज्य को ऐसी भारी हार ह्यी है। हिन्दुस्तानियों को भी अपने वालकों को पहिले ही मे सी शिज्ञा देनी चाहिये जिससे उनका देशानुराग, उनकी देश-क्ति, ऐसी प्रवल हो जाय कि समय पड़ने पर वे ऋपने देश लिये प्रामा देने को तय्यार रहें। शिचा का यही पहिला क पहले-पहल बालको को देना चाहिये। पहिले अपने देशवालों के साथ प्रम तथा शान्ति-पृत्रक वरताव करना, यह उनकी दूसरी शिजा होनी चाहिये । स्कृलों ही में ऐसी

शिक्षा देने का प्रबन्ध करना चाहिये। यदि स्कूलो मे लड़क स्त्रापस में नहीं लड़ना सीखेंगे श्रीर प्रेम से रहेगे, तो जवान होने पर व एकाएक अपने देशवालों से नहीं लड़ेंगे, श्रीर प्रेम-पूर्वक वस्ताव करेंगे। अमेरिका में इस प्रकार की शिन्ना का बड़ा अच्छा प्रबन्ध है। अमेरिका में एक बार एक म्कृत के तहकों मे आपम मे

त्रकाई हुई। बहुत कुछ मार-पीट हुई। उसी वक्त प्रिंसिपल को जबर दी गई। प्रिसिपल आये। उन्होंने न किसी लड़के का वयान लिया और न किसी को धमकाया । उन्होंने भाते ही दाजे वजवाने शुरू किये, शांति के गीत गवाये। पर्चात् लड़कों को युलाया. और मनड़े का कारल पूछा और यह भी दर्याप्त किया कि किसकी शरारत से यह म्लाड़ा पैदा हुआ । लेकिन आस्पर्य (तल्लान्जुव) है. जिन लड़कों में थोड़ी देर पहिले लट्ट चले थे, उनकी जवान से अब किसी की भी शिकायत नहीं निकली। इसका कारण क्या या १ प्यारो ! इसका कारण वह बाजा खौर शान्ति के गीत थे। उनको जो पहिले कोध हुआ था, वह वाजा और गीत छनकर शान्त हो गया । यदि प्रिंसिपल श्राते ही उनके वयान लेने शुरू करते तो इस लड़ाई का नतीजा शांति में ज्वम न होता। एक लड़का दूसरे को क़सूरवार ठहराता. और अवश्य ही कुछ लड़के अभूरवार निकलते। और संभव या कि इसका नतींजा यह होता कि कुछ लड़के स्कूल से निकाल दिये जाते. छोर जो लड़के स्कूल से निकाल दिये जाते. वे उन लड़कों के हमेशा जानी दुश्मन (धोर शत्रु) हो जाते, उनके विरुद्ध गवाही देते । ख्याल करने से इसका नतीजा बहुत बुरा पैदा हो सकता है। यहाँ तक कि देश में अशांति फैल सकती है।

तीसरी दात लड़कों को हराना-धमकाना नहीं चाहिए लड़कों को हराना खीर धमकाना चड़ी बुरी दात है। सससे लड़के टरपोक खार कमकोर हो जाते हैं। हन्दुस्तान में हराना-धमकाना तुरे लड़कों को नेक बनात ही चेटा के परन्तु ऐसा करना ठीक नहीं है। लड़कों को नेव बनाते हैं लिये सबसे हन्दा मार्ग यह है कि इनहीं नदारों से लोई दुरी बात नहीं गुकरने देनी चारिये। खीर बीर त्या

भव यह विचार करने की बात है कि जिस विषय की छोर बालक की रुचि ही नहीं, उस विषय में वह क्योंकर तरक़ की कर सकता है। सुतरां बालकों की शिज्ञा पर विशेष ध्यान देना चाहिये। बालकों पर ही देश की भावी भलाई का भरोसा है।

एक बात जो केवल हिन्दुस्तानियों में दूसरे देशों से दड़ कर स्त्रभी तक पाई जाती है, वह योग-विद्या है। पर ष्मव धमेरिका धादि देश इसमें खूब उन्मति कर रहे हैं, ष्पौर हिन्दुस्तानी भूल रहे हैं। अमेरिका में एक॰ ऐमरसन साहव ने, जो जंगलों में रहता था, योग-विद्या में इतनी इन्नति की है कि आश्चर्य होता है। वह मोहन को बदल कर गोपाल कर सकता है, स्थल को जल; ये सब करामात बह योग-विद्या से करता है, जादू से नहीं । खोर अव ष्पाशा है कि वे लोग योग-विद्या में भी हिन्दुस्तानियों से वढ़ जायंने। सो प्यारे हिन्दुस्तानियों! श्रापको सँभतना चाहिये। पहलेपहन विकास्त्री सूर्य का प्रकाश यहीं हुआ था। बाद को यहाँ से परवा मिला हमा युनान होता हुत्रा हैंगजेंड पहुँचा धा । इहाँ से प्यतिरिक्त होना हुआ जापान पहुँच गया । अब जारान में उमर्ज दिश्ले हैं पर मुकतो हुई दिखनाई देती है। अब आप सदेत हो हाओं । ऐसा न हो। यह सूर्य पहिचम को उसक जाय और आप सेपे के सेपे ही रह अर्थ उर्ने स्त्रार उसने का प्रयव करों सब स्त्रपते-श्चपने कलाये कर लगे. और अपने देशन्यासये की कर्नव्य दतलाओं सरीउप के पूर्व ही प्रयमे देशीस्त्रात कथा करायो को नियर कर 🕆 एक करा, एक पत्त भी व्यारेन रहेन्त्री। बाद साल- बदार में हा पड़े रहागे. ता सुख प ध्वम को बला-जायार १२६ जायने कड करते थरते नहीं, बतरा s≈ ' ŝ.



परमेश्वर है, वह स्वह्म तो त्रिलोकी को धानंद देनेवाला है, सूर्य को सोना और चंद्रमा को चाँदी देनेवाला है, खतः आप ठीक उस घालक की तरह खपने कमों पर लिंजत हूजिए, धौर सांसारिक वस्तुओं में अपने को इतना धासक्त न होने दीजिए। धपने स्वरूप को जानिए और समिनए। देखो, आपको गायत्री मंत्र क्या सिखाता है। राम उस मंत्र को नहीं पढ़ता, केवल उस का धाशय (उद्देश) घतलाएगा। वह यह है, मेरी घुद्धि प्रकाशित हो। क्योंकि वह जो सूर्य, चंद्र खोर तारों को प्रकाश देनेवाला है। वह मेरा आत्मा है। जब यह बात है, तो राम कहता है कि वे लोग जो अभेदवादी हैं, वे धपनी अभेद-दृष्टि को धारण करके उस ज्योतिस्वरूप का ध्यान करें। वह ध्यान क्या है? वह यह है कि वह जो दारा प्रकाश का स्रोत है और जो भीतरी झान-ध्योति का लोत है। वह मेरे हृद्य में है, मेरे हृद्य में यह दीपक जल रहा है, नेरे हृद्य में वह ज्योति प्रकाशमान है।

खद राम आज के विषय पर खाता है। वह विषय यह है।

उल्लान का मार्ग

यह विषय धारवंत विस्तृत है। इसिलये इसमें से केवल एकछाप धावरपक भागों को राम लेगा। धाम तौर से लोग पह प्रस्त करते हैं कि ये उनति-उनति पुकारनेवाले होंग कहाँ को ना गये हैं धार भाई! अपने पर रहने धार धामोह-अमोह से नीयम ज्यतीत करने में मुख है, या उन्नि-उन्नि की निर-पीट़ भोज लेने में होंगों की जिला पर चही है कि एमको यही रहने दो, इस धाने नहीं जाना चाहने, इसी पर ये आवश्य भी करते हैं, शीर उनका प्यान है।

काम है कि गाड़ी को सींचकर छागे ले जाय। यदि वह न चले छोर रक जाय, तो कोचवान उस पर चायुक-पर-चायुक मारता है। यही दशा व्यक्तियों छोर जातियों की है।

जो व्यक्तिया जाति छाने चलने से इनकार करती है, उसको दैव या प्रकृति (Providence) के नियम चायुक मारते हैं। यह नियम अटल है। इसके घरतने में कभी रिञ्जायत नहीं हो सकती । परमेश्वर को किसी जाति या संप्रदाय का पत्त नहीं है। जो कोई उसके नियम के श्रतुसार चलता है, वह उसका प्यारा है, वह वचता है; किंतु जो उसके नियम को तोड़ता है, वह उसका शत्रु है, वह मरता है और नष्ट होता है। जरा देखों तो, यदि तुम सांसारिक गवर्नमेंट के नियमों के विरुद्ध चलो, तो तत्काल दंढ पा जाते हो, किसी तरह वच नहीं सकते। जय सांसारिक गवर्नमेंट के नियमों के विरुद्ध चलने का यह हाल है, तो भला परमेश्वर के नियमों के विरुद्ध पलना और वचने की आशा करना विलक्कल मूर्यां है या नहीं। धर्मशास्त्र के श्रवुसार भी द्यागे दहने से इनकार करने का ही नाम पाप है। इसको तमोगुण कहते हैं। भौतिक विज्ञान-शाख इमको सिराता है कि गति के नियमों में से एक नियम का नाम है जद्ता का नियम (Law of Inertia)। छपनी दशा परतने से इनकार करने को जड़ता कहते हैं। प्रत्येक वस्तु में यह भाव या स्वभाव है कि वह ध्यमी दशा घरलना नहीं चाहती। यही सुरतीः रिधिलता या जब्ता है । एमारे शास्त्रों में धम या राणि से सून्य होने को नमीतृष्य सहते हैं। यह नियम विस्तार के साथ इन हाकों में वर्षन विया जा सकता है कि चिद् एक बस्तु को स्थिर छवस्या में रक्या लाय- तो सदैव उसी खबत्या में रहेगी और जब तब बोई



इसी प्रकार जो बातें पशुद्धों में मौजूद थीं छोर उनमें पाप न थीं, परन्तु मनुष्य की अवस्था में आने से पाप में परिवर्तित हो गई। पशुओं की दशा छोड़ने के परचात् मनुष्य मनुष्य की दशा में श्राता है, किन्तु उसमें तमोगुण (Animal passion) शेप रहता है। यदि इस समय वह उस बुद्धि से, जो उसकी पशुत्रों से पहचान करने के लिये दी गई हैं, काम न ले और इस बात पर विचार न करे कि क्या उसके लिये पुण्य है और पया उसके लिये पाप है, तो वह जड़ता के नियम (Law of Inertia) के अनुसार जड़ है, क्योंकि वह अपनी अवस्था परिवर्तन करना नहीं चाहता है। वह उन बातों को, जो उसमें पणुना की छाभी शेष हैं, ज्यों की त्यों रहने देना चाहना है। श्रीर पुद्धि के प्रकाश में लाभान्वित होकर आगे नहीं बहना चाउना है।

जानः जो व्यक्ति जामे बढ़ने के लिये तैयार नहीं है, बढ़ पाप करता है। यही पाप का तस्य है, और यही है सम्बन्ध कि विप

के कारण पाप सतुष्य में बाता है।

प्यापकी बार्जामंकिन का पहिया जुम रहा है, और आपका कृता उसके आगे-आगे बीवृता चला जा रहा है। यदि बा तसवर चला आयराह तो उसको कोई सदमा (नोट) जापकी वाहरिसंकल के परिष्य से नहीं पहुँचेसार किन्तु सदि यह रह ाय या फायकी बाह्मिकिल की नाल की अपना अपनी भाज कस कर के, की कह अवश्य पहिए के नीचे दव जायगा। हाँ, एक उपाय असके बनाने का यह भी है कि छाप समये अपनी बाडीसिंहर की रोकर्षे। इसी नगर पर कान का पोडपा वदर नम रहा है। उसके सायनाय दोता तो कुमत के नती भी उपने भीचे समझर मस्ता त्यावण्यक है। वडी एक क्टिस्टा चीर चीर है कि परवेग्वर खपने परिए की भरी

रोकेगा। उसके नियम खटल हैं, वे सदैव प्रचलित हैं। वहाँ किसी का पज्ञपात नहीं है।

छतः उन्नति करो, नहीं तो कुचले जाओगे, पिस जाओगे और नष्ट हो जाओगे। वे ही जातियों नष्ट होती हैं, जो छागे नहीं चलती हैं, या जो सदैव पीछे ही को पग हटाती हैं, जो नवता (originality) और नूतन मार्ग प्रवर्तन (innovation) को पाप सममती हैं। राम इन शब्दों की व्याख्या नहीं करेगा। इनका तालपर्य तो जाप छपने छाप समक गये होंगे। इससे यह परिखाम निकला कि उत्तति के छर्थ प्रयत्न और पुरुपार्थ के हैं।

इस पर यह प्रश्न होता है कि यह तो सत्य है कि उन्नित के छर्य प्रयत्न के हैं। किन्तु प्रयत्न से क्या होता है, प्रत्येक बत्तु प्रारव्य के छथीन है, छर्यान् भाग्य पर निर्भर है। यह विषय स्वयं ऐसा है कि इस पर एक स्वतंत्र ज्याख्यान दिया जाय, किंतु संनेषतः उत्तर यह हैं:—

तत्त्व तो यह है कि जो लोग कहते हैं कि प्रत्येक काम भाग्य से होता है, वे भी सच कहते हैं। वे इस सिद्धान्त को लागू करने में भूल करते हैं। हप्रान्त रूप से, जैसी ऋतु होगी, वैसा स्वभाव हो जायगा। जाड़े की ऋतु में गरम कपड़े पहनोगे, घर के भीतर रहोगे, खाग जलाखोगे, खादि-खादि। गरमी की ऋतु में मैदान में रहोगे, ठएडे कपड़े पहनोगे, ठएडा पानी पियोगे, खादि-आदि।

अब ऋतु का पदलना दैव-इच्छा वा भाग्य या प्रारच्य है, क्यांन् वह एक नियत नियम है। क्षोर यह प्रारच्य सारे देश पर प्रमुख स्थापन किये हुए हैं, कितु ऋतु के क्षतुसार इपढ़े पहनना और उसके अनुसार स्वभावों को दनाना क्षपने ही पुरुषार्थ पर निर्भर है। परिवर्तित ऋतु की द

होती है। सारे वुद्धिमान् लोगों के काम पुरुपार्थ ही से होते हैं। प्रारच्य का शब्द तो केवल उन लोगों के खाँसू पोंछने के बास्ते बनाया गया था, जो कोमल-चित्त हैं, खोर जिन पर कोई विपत्ति छा पड़ी है, नहीं तो नित्यप्रति जीवन के छल काम पुरुपार्थ ही से हो सकते हैं। मनुष्य भोजन भी पुरुपार्थ ही से खाता है, पानी भी पुरुपार्थ ही से पीता है, नौकरी भी पुरुपार्थ ही से करता है, कोई सार्वजनिक काम भी पुरुपार्थ ही से करता है।

इत भूमिका के परचात् जरूरी उन्नति को, सफलता के साथ करने के उपाय को राम बताता है। उद्योगों में कृतकार्यता प्राप्त करने के लिये इन वार्तों का ध्यान रखना चाहिए।

(१) सांसारिक काम-धंथों के निमित्त सबसे पहली वस्तु प्रकाश है। कैसा ही निर्मल और स्वच्छ घर क्यों न हो, यदि अँधेरे में जाओगे, तो कहीं कुरसी की चोट लगेगी, कहीं दीवार से सिर टकरायगा, कहीं लैम्प से ठोकर लगेगी, और वह दूट जायगा; निदान, पग-पग पर दुःख ही दुःख होगा। फिर विना प्रकाश के कोई वन्तु उग नहीं सकती। एक पौदा खेँधेरे में वोवा जाय और दूसरा प्रकाश में, और दोनों का सींचना एक ही प्रकार किया जाय । परिगाम क्या होगा ? स्पष्ट है कि अँधेरे में वोया हुआ पौदा सूख जायगा ध्यौर प्रकाशवाला खूब हरा-भरा होता चला जायगा । फिर जब विना प्रकाश के हुन नहीं इन्नति कर सकते हैं, तो मनुष्य का उन्नति करना तो एक किनारे ही रहा । श्रव प्रकाश से प्रयोजन क्या है ? वही ध्यान, जिसका उल्लेख राम भाषण के आरंभ में कर आया है। वहीं तेजों का तेज, ज्योतिः स्वरूप आत्मदेव, उसका न भूलना इसी का नाम प्रकाश है। अब इस पर कदाचित

ही श्रापकी सफततायें भी होंगी। यह प्रसिद्ध उक्ति है—
"घर से जायो खा के, बाहर मिलें पका के,
घर से जायो भूखे, बाहर मिलें घरके।"

यदि आप धन या सन्तान की कामना से परमेश्वर की भिक्त करते हैं, तो वह परमेश्वर की भिक्त नहीं है, वरन् वह तो अपनी स्वार्थपरता की भिक्त है। आप वास्तव में परमेश्वर की भिक्त नहीं करते, वरन् उनको अपना खानसामा बनाते हैं कि वह हर समय आपकी सेवा को उपस्थित रहे, और जब जिस वस्तु की आपको आवश्यकता हो, उसको वह तत्काल आपके सम्मख लाता रहे।

श्रहा! यह तो उत्तरी गंगा बहाना है। त्यारे! परमेश्वर को श्रपनी विषय-कामनाओं के लिये मत नचाओं। श्रापकों चाहिए कि प्रत्येक काम को हिम्मत श्रोर शांति के साथ करों। यही सफतता का साधन है। श्रगर श्रापके पास कोई व्यक्ति भीख माँगने श्राप, तो श्राप उससे श्राँख चुराते हो, इसी तरह जब श्राप परमेश्वर के पास भिखारी बनकर जाशोंगे, तो यह भी श्रापमे श्राँख चुराएगा। परमेश्वर में हर्य की शृह्वता श्रीर भक्ति के साथ मित्तो। यह श्रापके यहाँ कोई बड़ा श्राइमी श्रावे, ता श्राप उसकी बड़े श्राइर से विद्रा लेते हैं, किंतु एक बका श्रीर दोन मतुष्य श्रापके पाम श्राकर बठना चाहे, तो श्राप उसमे घृणा करते हैं। याद रक्तों कि यह श्राहमा कम बोर से नहीं मित्रना चाहना। दुवंच की परमेश्वर के वर में दाल नहीं मित्रना चाहना।

"नायमात्मा बलडीनेन लश्यः ।"

यया—इर दीवा जनजागाहे-त्र्यां माद वास नेमा। श्रर्थ—प्रत्येक चतुः सं उस (श्रिय स्वरूप परमात्मा) का प्रकारा समान रूप से आन नहीं होता है।



वाह्य शरीर है, स्वच्छ श्रोर निर्मल है। इस कारण इसके मीतर का प्रकाश विना रोक वाहर चला श्राता है। श्रव स्वच्छ होने से क्या प्रयोजन है। उसका प्रयोजन यह है कि इसने श्रपने मन की कालिमा श्रीर द्वेप-भाव को निकाल दिया है। इसी प्रकार यदि श्राप भी श्रपने मन की कालिमा श्रीर श्रहंकार के भाव को निकाल दें, तो श्रापके भीतर का प्रकाश भी श्रपने श्राप वाहर निकल श्राएगा। यथा—

कत्र लियासे-दुनपवी में छिपते हैं रीशन ज़मीर ; जामए-फ्रान्स में भी शोला उरगाँ ही रहा । कय सुबुकदीश रहे केंदिये - ज़िंदाने - वतन ; व्रए-एल फाँदती है वाग की दीवारों को ।

कट्टाचित् यह कट्टा जाय कि हम अपने धार्मिक सिद्धांतों की पावन्दी करते हैं, और धार्मिक सिद्धान्त चाहते हैं कि मगड़ा किया जाय। इसका उत्तर यह है कि धार्मिक सिद्धान्तों का उद्देश कदािप लड़ाई-मगड़ा करना नहीं हो सकता। प्रत्येक धर्म का पहला सिद्धांत यह है कि ईश्वर को जानो और मानो। क्या इस पर आप आचरण करते हैं ? कट्टापि नहीं। यदि आप इस पर चलते होते, तो क्या आप परमेश्वर की इतनी भी परवाह और इज्जत न करते कि जितनी आप अपने जिले कलेक्टर की करते हैं। यदि इस समय इस जलसे (समारोह) कलेक्टर साहव आ जायँ, तो सबकी साँस वन्द हो जायगी। प्रत्येक समय इस वात का ध्यान करेंगे कि कोई भद्दा वाक्य गुख से न निकल जाय, अथवा कोई निर्लं चेष्टा न हो जाय। आप कभी कलेक्टर साहव के सामने चोरी न करेंगे, कभी उनके सामने किसी स्त्री को कुटिष्ट से न देखेंगे, और न उनके सामने कोई खराव वार्ता करेंगे।

ववीं तक्रावत रा थज़ कुजास्त ता यकुजा !

हो भाषवा न दिया हो। कुछ परवाह नहीं है। यस आपने यत् कत्वा है कि सफलवा के लिये पवित्रता और समन्ये की जलान्त जावश्यकता है। यदि भारतवासी वने रहन चाहने हैं, तो बीर्य को सुरिश्व स्तरों, अन्यशा कुचले जायेंगे। यह दीपक जापके सामने जल रहा है, यह क्यों जलता है। इसके बीच के भाग में तेल भरा हुआ है। वह तेल बती के हारा अपर नदता है, और अपर ब्राक्तर प्रकाश-रूप में परिवर्तित हो जाता है। यदि इसके तेलवाले भाग में कोई छिद्र हो जाय तो उसका तेल धारे-धीरे वह जायगा, खीर फिर इससे प्रकारा न निकल सकेगा। यही दशा आपकी है। यदि आपके भीतर का बीर्य नीचे न गिरेगा, तो यह अपर चढ़कर मिरेनिएक में जाकर आत्मिक ज्योति वन जायगा । किन्तु यदि आप इसके विरुद्ध करेंगे, अर्थात् अपने वीर्य को गिरायेंगे, तो आपकी वहीं दीपक की सी दशा होगी। जिन लोगों के शरीर से कोई अपवित्र कर्म नहीं होता, या जिनके मन में कोई अपवित्र विचार उत्पन्न नहीं होता, उनका वीर्य ऊपर चढ़कर बुद्धि में परिवर्तित हो जाता है। ऐसी ही अवस्था को इँगलैंड के प्रसिद्ध कवि ने यों वरान किया है -

My strength is as the strength of ten Because my heart is pure. \ Tennyson)

> मेरी शक्ति है दसगुणी किसिंखिये कि मेरा हृदय शुद्ध है, हसिंखे। दस ज्वानों की मुक्तमें है हिम्मत; क्योंकि मुक्तमें है इफ़्फ़तो-श्रुस्मत।

हनुमान् सबसे बड़ा वीर किसलिये था ? क्योंकि वह यती था। कहते हैं कि मेघनाद बड़ा योद्धा था। उसको वही न्यक्ति मार सकता था, जिसके हृदय में १२ वर्ष तक कोई अपवित्र विचार न आया हो। यह कौन व्यक्ति था? यह श्री लदमण जी थे। भीष्म का नाम भीष्म इसी कारण से पड़ा कि वह जितेंद्रिय थे। सर आइजक न्यूटन जैसा प्रसिद्ध तत्त्वान्वेपक, जिसके ऊपर छाज रॅंगलैंड को इतना छिभमान है। सत्तासी वर्ष तक जीवित रहा । मरते समय तक उसके होश-हवास बहुत ही ठीक थे, क्योंकि वह जितेंद्रिय था, और श्रत्यंत पवित्र था। जिस तत्त्ववेत्ता ने संसार के तत्त्वज्ञान को पल्टा दिया, वह कौन था ? वह कैंट (Kant) था। यह वहा भारी यती था। इसके मन में कभी अपवित्र विचार तक नहीं आया। अमेरिका के हेनरी डेविड घोरो (Henry David Thoreau) और जर्मनी के प्रसिद्ध तत्त्ववेत्ता हर्वर्ट स्पेंसर (Herbert Spencer) दोनों दड़े जितेन्द्रिय थे। इस समय श्रमेरिका, रॅंगलैंड, जापान छादि देश उन्नति कर रहे हैं, इसका क्या कारण है ? कारण यह है कि इनके यहाँ के मृहस्य भी खापके यहाँ के जितेंद्रियों से खन्हें हैं। प्रथम तो उनके दिवाह दीस वर्ष के परचात् होते हैं। पिर उनकी श्त्रियाँ वैसी शिक्तिता होती हैं कि जब पुरुष खीर स्त्री मिलते हैं। तो उत्तमोत्तम विषयों पर बार्तालाप करते हैं। एक दसरे के सस्तंग से लाम

वीर्य (Sex energy) को सुरित्तत रक्खे हुए हैं, तो आप बहुत ... शीघ कृतकार्य होंगे। राम जब प्रोक्तेसर था, उसका निजी श्रनुभव क्या था ? श्रोर जिस समय राम सफल या असफल विद्यार्थियों की सूची बनाता था श्रीर उनसे पूछा करता था कि परीचा से कुछ दिन पहले उनकी क्या अवस्था थी ? तो राम ने इससे भी परिगाम निकाला था कि जो विद्यार्थी परीज्ञा से पहले उत्तम श्रोर पवित्र विचार रखते थे, वे कृतकार्य होते थे, श्रीर जो श्रपवित्र विचार रखते थे श्रीर सदैव भयभीत रहते थे कि कहीं असफल नहों, वे अनुत्तीर्ण ही रहते थे। श्रतः सिद्ध है कि जैसे जिसके विचार हृद्य के भीतर होते हैं, वैसा ही उसको परिणाम प्रकट होता है। इस वात का प्रमाण इतिहास से भली भाँति मिल सकता है। प्रसिद्ध योद्धा पृथ्वीराज, जो कई एक युद्धों में मुसलमानों को पराजित कर चुका था, अंत में भोग-विलास में हूव गया, श्रीर श्रापको त्रारचर्य होगा कि ऋंतिम वार जब वह युद्धजेत्र को गया, तो उसकी कमर उसकी रानी ने कसी थी। परिणाम क्या हुआ ? युद्धचेत्र से मुँह काला करके असफल लीट श्राया। नैपोलियन, जिसके साहस श्रीर वीरता की धाक सारे संसार में जम गई थी, जब वाटरल के समरांगण को जाने लगा, तो उसके पहले शाम को वह अपने आपको एक श्रपवित्र चाह में गिरा चुका था। परिएाम स्पष्ट है कि बड़ी विकट हार हुई। श्रभिमन्यु, कुरुतेत्र के युद्ध का प्रसिद्ध योद्धा, जिस दिन मारा गया, उससे पहले सायंकाल को वह अपनी नवीन प्रिय पत्नी के पास गया था, और वहाँ वीर्य गिरा कर त्र्याया था। स्मरण रक्खो, अपवित्र वस्तु में कुछ श्रानंद नहीं है। जिस प्रकार गुलाव का फूल कैसा सुगंधित होता है, किंतु उसमें शहद की मक्खी भी रहती है। जब आपने





किंतु बुरे मनोरय माँगनेवाले बुरे होंगे। जैसा खयाल करोगे, वैसे ही हो जाओंगे।

गर दरे-दिल तो गुल गुज़रद गुल बाशी ; वर धुलबुले-देकरार खुलबुल बाशी। सौदाये - बला रंजो - बला भी खारद ; धंदेशा-ए कुल पेशा खुनी कुल बाशी।

श्रयः—यदि तेरे चित्त में पुष्प (प्यारे) का खयाल होगा, तो त् पुष्प (प्यारा) हो जायगा, श्रीर यदि चंचल युलयुल का, तो व्याङ्गल युलयुल हो जायगा । स्मरण रहे कि दुःखों का खयाल करनेवाला दुःख श्रीर कष्ट श्रपने उत्पर ने श्राता है, श्रीर सवका शुमचिन्तक खयं सब हो जाता है।

"रमयो मीवर साले हो। रमयो मीवर साले धी।

में ग़ुलाम, में ग़ुलाम, में ग़ुलाम तेरा ; तृ दीवान, तृ दीवान, तृ दीवान मेरा ।"

अगर हिन्दुओं में एक गुण विशेष यह है कि वे सरैं। सच्चे होते हैं। श्रतः उनकी वह स्वामाविक सर्वाई 📆 विचार पर लगाई गई, श्रोर उनका क्योंकि यह हार्द् विचार था, इसलिये उनकी यह मनोकामना पूरी हुई। श्रीर वे इस तरह से विदेशियों के गुलाम (दास) हो गवे। स्पष्ट है कि जैसा ख्याल करोगे, वैसा पात्रोगे । हमें श्र^{पने} ख्यालों को सुधारना चाहिए। युद्ध भगवान ने भी यही सिखाणा है। श्रतः न[े] श्रपने संबंध में श्रोर न किसी अन्य के संबंध ^{में} अपने हृदय में मलीन विचारों को आने दो। भीतर और वाहर ईश्वर ही ईश्वर को देखो। मोहम्मद साहव के हृद्य में यह वात समा गई थी, इस कारण उन्होंने सिखाया था कि (ला इलाई इल्लिला) "नहीं है कुछ सिवाय परमेरवर के।" हजरत ईसी मसीह की नस-नस में भी यही विचार होड़ रहा था। अत उन्होंने भी यही कहा कि "मैं और मेरा बाप (इंश्वर) एक ही है (Land my father are one) 1" अब उसकी लोग सममें या न समभें; मगर असल बान यही है। जब हुबरत मोहम्मर साहब के दिल में यकीन श्रा गया, तो उन्होंने कहा कि आगर सूर्य मेरी दाई खोर खौर चाँद मेरी बाई खोर खा खाकर धमकाने त्रों कि पीछे हट जान्नो, तब भी में पीछे न हट्गा। एक श्रादमी जो जंगलो का रहनेवाला था, उसके हृद्य में इस विश्वास की श्राम भएक उठी, और उसने श्रास्य के महस्यल में इसके काले रेन के दानों को भड़काया। यह चर्र बारूद के छर्र वन गण श्रीर योरप वा अफरीका के पार्शमी सिरे मे . लेकर एशिया के पूर्वी सिरं तक एक शताब्दी के भीतर फैल गये। यह शक्ति है स्थातमवल की, यह शक्ति है विश्वास की, यह

दौर या चक है। इसी प्रकार सौमाग्य का तारा पूर्व से पिश्चम को गया, श्रीर फिर वहाँ से पूर्व को लौटा श्री रहा है। इतिहास इसकी साची देता है। देखो, एक यूर्ग था, जब भारतवर्ष का तारा श्रभ्युदय पर था, वहाँ से परिचम को चला, फारस में श्राया। उसके परचात श्रास्ट्रिया श्रादि की बारी श्राई। वहाँ से यूनान पहुँचा। यूनान को छोड़कर स्माय गया। हम के बाद स्पेन श्रादि की बारी श्राई। फिर इँगलैंड पर कुपादृष्टि हुई। वहाँ से श्रमेरिका गया। इस समय श्रमेरिका का परिचमी भाग कैलीकोर्निया श्रत्यंत उन्नति पर है। वहाँ से जापान में श्राया। फिर श्रव कैसे कह सकते हैं कि भारतवर्ष बंचित रहेगा, इसकी बारी नहीं श्राएगी १ श्रवश्य श्राएगी, श्रवश्य श्राएगी।

az i az ii az iii

श्रानन्द! श्रानन्द!! श्रानन्द!!!

सुधार

[जनवरी १६०२ में भारत-धर्म-महामच्डल भवन, मधुरा में स्वामी राम का व्याच्यान, श्रीनारायण स्वामी द्वारा लिखित नीटों से ।]

हुर्ग जकल संसार में परोपकार का वड़ा कोलाहल सुनाई देता है। यह शब्द प्रत्येक कान में सुनाई देते ही हृदय में सहानुभृति का जोश उत्पन्न करता है, श्रौर सुननेवालों के मन में सुधार करने का विचार उत्पन्न कर देता है। किन्तु आश्वर्य की बात है कि परोपकार के यथार्थ अर्थ से तो लोग जानकारी नहीं प्राप्त करते, देवल वाह्य 'हाहा-हूहू' की लेक्चरवाजी में लग जाते हैं। इसी िलए परोपकार के वास्तविक श्रर्थ न सममने से श्रीर **उस पर आचररा (ऋमज) न करने से सुधारक महाराय से न** तो संसार का पूरा-पूरा उद्घार होता है, ख्रौर न उसे स्वयं कुछ लाम प्राप्त होता है। अतः औरों का सुधार करने से पहले सुधार के इच्छुक को सुधार के अर्थ और साधनों से जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। अँगरेजों के यहाँ श्राजकल यह उक्ति रिवाज पकड़ती जाती है कि "पहले अपने को किसी चीज के अधिकारी बनाओं। फिर उसके प्राप्त करने की इच्छा करो (First deserve & then desire) ।" किंतु वेदांत का इस विषय से सम्बन्ध नहीं। वेदांत में तो यह सिद्धांत अनादि काल से चला ञाता है कि "अपने को किसी वस्तु के श्रधिकारी तो निस्सन्देह वनाष्ट्रो, किंतु उसकी प्राप्ति की इच्छा न करो (Deserve only & need not desire) ।" क्योंकि वेदांत पुकार-पुकार कहता है कि जिन वस्तुओं का आपने अपने को अधिकारी व है। अधिकार प्राप्त करने के पश्चान् वे वन्तुएँ आपके पास

किसी प्रकार की इच्छा के किसी न किसी द्वारा अवश्य चली श्रायेंगी। श्रधिकारी वनने या होने से कोई श्रीर श्रभिप्राय नहीं है, वरन् इस प्रवंध का स्पष्ट तात्पर्य ऋौर उद्देश्य यह है कि जिस प्रकार से एक मनुष्य छोटे-छोटे पदों से उन्नति पाता हुआ एक उन पद पर पहुँच कर राजा का पद पा लेता है, तो उस समय वह श्रपने राज्य की समस्त सम्पत्ति, महत्त श्रीर धन-धरती के पाने का श्रिधिकारी हो जाता है। श्रव वह इन वस्तुत्रों के पाने की इच्छा प्रकट करे या न करे, उसके सिंहासनासीन होने पर वस्तुएँ उसकी सेवा करने को श्रपने आप उसके पास चली आती हैं। वरन् उस समय उसका इच्छा करना अपने आपको छोटा बनाना है, श्रीर अपने को धव्या लगाना है। यह एक कहानी है कि एक महात्मा इस वात के अधिकारी हो गए थे कि उनके निकट सांसारिक पदार्थ ज्यानकर उनकी नित्यप्रति सेवा करें, किंतु एक अवसर पर एक व्यक्ति जब उनके लिये वताराों का थाल लाया, तो महात्माजी ने बताशे लेने की इच्छा करके श्रिपने मुखारविन्द् से यह उचारण किया कि दो बताशे हमको दे दो । इस पर थाल लानेवाले ने दो बनारो तो महात्माजी को दे दिए, किंतु शेप बनाशों को उन्हें लालची सममने के कारण वहाँ रखना उचित न समफ कर वह व्यक्ति थाल लौटा ले गया । इस प्रकार महात्माजी शेप वनाशों से भी वंचित रहे, ख्रीर इच्छा प्रकट करने के कारण थाल लानेवाले की दृष्टि में भी कम उतरे। इसो तरह अधिकारी होने पर भी द्यधिकार-योग्य वस्तु की इच्छा प्रकट करना छपने द्यधिकारों को खोना और अपनी इच्छा को बट्टा लगाना होता है। भगवन् ! यदि श्राप श्रपने श्रापको समस्त वस्तुर्श्रो का मालिक थार अधिकारी बनाना चाहते हैं, तो उठों, अने स्वरूप में फुएडे गाड़ो, खपने खपती स्वरूप में लीन हो जाखी।



निज स्वरूप में निमग्न होना ही परोपकार करना है। तात्पर्य यह कि आपके मन का अपने सूर्य रूपी आत्मा की किरणों

के द्वारा ऋहंकार रूपी भारी बोक से शून्य और हल्का होकर श्रपने स्वरूप में उड़ जाना, श्रर्थात् लीन हो जाना, ही संसार के और पुरुषों का सुधारना है, नहीं तो सुधारक महाशय या सुधार के इच्छुक जितना ही श्रपने वास्तविक स्वरूप से नीचे रहेंगे, उतना ही शेप मनुष्य निचले दुनों पर रहेंगे छोर परोपकार करने के अर्थों का मिण्या वरन उल्टा व्यवहार करते रहेंगे; क्योंकि अपने स्वरूप में अवस्थान न करना ही दूसरों का परोपकार न करना है, वरन श्रपने श्रापको नीचे गिराए रखना है। इसलिये ऐ सुधार के इच्छुको ! श्रोर ऐ संसार का उद्धार करनेवालो ! यदि संसार का उद्धार करना चाहते हो, तो उठो, श्रपने स्वरूप में लीन हो जात्रो, शेप सब लोग अपने श्राप उन्नति कर लेंगे, या यों कहो कि शेप सब लोगों का विना श्रापकी इच्छा श्रार प्रयन्न के श्रपने श्राप भला हो जायगा; और श्रापमें भी जब श्रपने स्वरूप में निष्ठा होगी, तो सारे संसार को हिला देने की शक्ति आ जायगी। अर्थान अनन्त स्वरूप से अभेद होने के कारण अनन्त शक्ति भी श्रापमें भर जायगी। इस प्रकार श्रापका केवल राजगद्दी सँभालना ही सारे काम-धन्धे को ठीक कर देता है, क्योंकि विना श्रमली साम्राज्य के सिंहासन पर स्थित हुए साम्राज्य के काम पूरे नहीं होते, श्रतः श्रपने स्वरूप में लीन होना परोपकार के लिये मुख्य उपाय सममता चाहिए, श्रपने श्रनन्त स्वरूप से मन को श्रभेद करने से ही अनन्त शक्तियाँ प्राप्त होंगी। जैसे एक नमक की डली यदि खाली गिलास में डाली जाय, तो एक परिच्छित्र स्थान घेरती है, श्रीर जय पानी से भरे हुए गिलास में हाली

जाय, तो पानी में घुल जाने से (खर्थात् जल के साथ मिल जाने से) वह डली अपनी परिच्यित जगह छोड़कर गिलास के समस्त पानी में पै.ल जाती है छौर समस्त जल में नमकीन खाद देने की शक्ति रखती है, या यों कहा जाय कि जितना ही नमक की हली श्रपने परिच्छित्र स्थान, नाम श्रौर रूप को छोड़ती जाती है, स्त्रोर पानी में समाती जाती है, उसमें चतना ही खाद फैलाने की शक्ति बढ़ती जाती है; इसी प्रकार मन यद्यपि परिच्छित्र शक्ति का खंड माना गया है, किंत् जितना ही वह अपने परिन्छिन्न स्थान, नाम और रूप को छोड़-कर अपने स्वरूप के अनन्त सागर से अभेद होता है, उतना ही उसकी अनन्त (अपरिच्छित्र) शक्तियाँ फैलती भी दिखाई देती हैं, ऋर्यात् उतना ही मन अपरिच्छित्र शक्तियाँ प्रकट करने का वल भी उत्पन्न करता चला जाता है। इसी प्रकार से, भगवन् ! यदि आप अपनी अनन्त (अपरिच्छिन्न) शक्तियाँ प्रकट किया चाहते हैं, श्रोर उन श्रपरिच्छित्र शक्तियों से संसार का उड़ार किया चाहते हैं, तो मन को कैवल्य-स्वरूप में इस प्रकार लीन कर दो कि जैसे मजनूँ के प्रेम के सम्बन्ध में एक कवि ने कहा है-

म्हॅ्रने-फ्लम्ट्रेसे निवला प्रस्यकेलाकी को की ; इस्क्रमें ताकीर्हेषर विदेनक्मिल चाहिए।

्ष्यर्पात मजतूँ लेला के साथ ऐसा श्रमेद हुआ था कि लेला श्रीर मजतूँ में दिलहुल श्रंतर न रहा वरन लेला की शन्द लेने पर भी खून मजनूँ की नस से निकता। जितना ही श्राप श्रपने को परिनिद्धल परंत जाश्रोगे श्रयांत नमक की हली की भौति परिनित राधीर में मन को परे रक्सोगे, उतना ही श्राप श्रपने को श्रसमर्थ श्रीर राशिसीन पनाते शाश्रोगे। श्रतः मन को राधीर के स्थाल से दूर हटाकर श्रानंद्रयन स्थी सहुद में शीन





-			

धर्म वह है, जो भीतर से स्वतः निकले; न कि वह जो वाहर से भीतर ठूँसा जाये। सूर्य चमकता है कि चीजें उत्पन्न हों। नकत से काम नहीं निकत्तता। सवार बुद्धिमान् पशु (Rational animal) है, घोड़ा विल्कुत पशु है। घोड़े को सवार की रानों के नीचे से मत खींचो। जब से काम नहीं चलता, प्रेम से चलता है।

(१) जिसको स्थिति "दासोऽहम्" पर है, वह उसी प्रकार की पुस्तकों को पड़े, जैसे इंजील, भक्तमाल, भागवत पुराण श्रादि। इसी से उस मनुष्य की ढाड़स होगा। मनोविज्ञान (Psychology) श्रयांत् श्रन्तः करण शास्त्र को पड़ने से बड़ा लाभ होता है।

(२) जिसको स्थिति 'तवैवाहन्' में है । स्त्रर्धान् में तेरा हूँ, उसको विनयपत्रिका, स्रश्यामवाले पद, गीतगोविद, नारद के भिक्तिसूत्र और कई प्रकार के भजन, रामायण के कोई-कोई स्त्रंश, जैसे रामायण का वह स्त्रंश, जहाँ राम बन जाते समय लद्मण और सीता से विलग होते हैं, पदना चाहिए।

(३) तीसरी श्रेणीवालों श्रर्थान् 'त्वमेत्राहम्' की स्थितवालों के लिये बुलाशाह श्रीर गोपालसिंह की वाणियों के पड़ने से भी यहा लाभ होता है। ये दो पंजाबी हैं। मनर गोपालसिंह की वाणी ने श्रभी श्रिथिक प्रसिद्धि नहीं पाई है। इन वाणियों को पड़ते पढ़ते मारे प्रेम के श्रांखें वंद हों जाती हैं। गुरु श्रंपसाहय में दोनों श्रेणी की श्रपार वाणियों हैं। तीनरी पेणी श्री पटन कम। पाठ करते हुए जहां देखा कि चित्त एकाम हो गदा। विनाव को लोड़ दो। पाइ किनके लिये हैं। भीतर के श्रानंद में लिये। लोग पड़ते हैं। मार पागुर (लुगाली) नहीं बरते। श्रानर शापर पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण (Mexical death निवन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण (Mexical death निवन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण (Mexical death निवन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण (Mexical death निवन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण (Mexical death निवन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण परित्र विनाव की देश कर लिये पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण परित्र विनाव की देश कर लिये। विगयन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण परित्र विनाव की देश कर लिये। विगयन पागुर न करोगे। तो सानसिक श्रवीर्ण परित्र विनाव की देश कर लिये।



धर्म वह है, जो भीतर से स्वतः निकले; न कि वह जो याहर से भीतर ठूँसा जाये। सूर्य चमकता है कि चीजें उत्पन्न हों। नकत्त से काम नहीं निकत्तता। सवार बुद्धिमान् पशु (Rational animal) है, घोड़ा विल्कुत पशु है। घोड़े को सवार को रानों के नीचे से मत खींचो। जब से काम नहीं चलता, प्रम से चलता है।

(१) जिसको स्थिति "दासोऽहम्" पर है, वह उसी प्रकार की पुस्तकों को पहे, जैसे हंजील, भक्तमाल, भागवत पुराण आदि। इसी से उस मनुष्य की ढाड़स होगा। मनोविज्ञान (Psychology) अर्थान् अन्तः करण हास्त्र को पड़ने से वड़ा लाभ होता है।

(२) जिसको स्थिति 'तवैवाहन्' में हैं। श्रयोन् में तेरा हूँ, उसको विनयपत्रिका सूरस्थामवाले पर, गीतगोविंद, नारद् के भक्तित्र श्रोर कई प्रकार के भजन रामायण के कोई-कोई श्रंश जैसे रामायण का वह श्रंश, जहाँ राम वन जाते समय तर्मण श्रोर सीता से वितग होते हैं, पढ़ना चाहिए।

(३) तीसरी शेणीवालों स्रथान 'स्वमेगहम्' की स्थितिवालों के लिये दुलाशाह स्वीर गोपालसिंह की वाणियों के पहने से भी यहां लाभ होता है। ये दो पंजादी हैं। मगर गोपालसिंह की वाणी ने स्थमी स्थित प्रसिद्धि नहीं पाई है। इन वाणियों को पहते पहते मारे प्रम के स्थादों दंद हो जाती हैं। युरु संपसाहय में होतों गंणी की स्थमर वाणियों हैं। तीमरी गेणी की ब्युत कम। पाठ करते हुए जहां दंखा कि चित्त एकाम हो गया। विकास को छोड़ हो। पाइ पर स्थाप नगर हो। निव भोड़ा स्थाप पर सवार हो। पाठ विकास लिये हैं। भीतर के स्थानंद के लिये। लोग पहते हैं। मगर पागुर (रूपाली)) नहीं वरते। स्थार स्थाप पागुर न क्योगों को मानसिक स्थार्ज (को सान तो इसरा निद्य पागुर न क्योगों को मानसिक स्थार्ज (का को इसरा निद्य पागुर न क्योगों को मानसिक स्थार्ज (का को इसरा निद्य पागुर का यो को इसरा निद्य पा कि इसने पोहान्सा पहा स्थिर किर किलाद हो दंद वर है



तत्काल ह्याती कूटने और रोने लगा, श्रीर उस दिन से इस बात का पका इरादा कर लिया कि या तो हम मरेंगे या मन को मारेंगे। राम वचपन में बड़ा हठी था। जिस वात के करने की हठ करता था, उसको करके छोड़ता था। गणित के प्रश्न हल करने लगा, तो उसमें जी-जान से लग गया, खाना-पीना, क्षेतना-कृदना सब बंद। एक बार ऐसा हुआ कि कुछ प्रश्न उसने हल करने का इराज़ किया। रात-भर हल करना रहा, मगर सव सवाल हल न हुए। वस, सवेरा होते ही कोठे पर चढ़ गया, और ऊपर से गिरकर मरने लगा। मगर खयाल आया कि मल तो क्योंकर ? सवाल तो अभी पूरे हल नहीं हुए। तात्पर्य यह कि इसी प्रकार से प्रायः हठ किया करता था। चौर यही हठ बाद को हदता के रूप में परिवर्तित हो गया। संन्यास लेने से प्रथम राम एक बार करमीर को चला गया था। फिर वहाँ से खाकर कुछ दिन घर पर रहा। मगर बकरे की मा कब तक खैर मनाएगी, इसरी बार फिर निकल पड़ा। बर्ग (कास) में जब पहाता था तब प्रायः गणित-शास का ब्याख्यान भक्ति के विषय में परिएत हो जाना था। एंन में उसको सांसारिक संबंध होड़ने ही पड़े। हरिहार में पहेंचा। हरिहार से हपिकेश के मार्ग से नत्यनारायण के मंदिर पर पहुँचा। खपने रेहामा बस्य खाँर मोने को खंडीर और पही पादि सब हुधर-उधर फेक दिये। तीन सी कुपए घर ने खीर मैंग अये। बहु भी सर्च कर हाले। एकीरो, सापुष्यों से मिला। वार्ताहाप हुई। सदमें शास्त्रार्य तए। तद राम ने यह देखा वि खदानी जान लॉडने में किसी से क्या नहीं हैं। सगर राष ! शांति फिर भी नहीं है। खब इस सांति वी सोज में पुमता फिरता है। एक दिन प्रातः बार सत्यनारायस के मंदिर से जहाँ वह दहन था सद नहीं को होत्वर 🗝 भाग निक्ला । सगर एवं संस्तुत

षित पर प्रभाव डाले, साथ रख लो। मगर जब वह वस्तु भी मिल जाय, तो पुस्तक को भी फेंक दो।

(१) पहली चोट (क) पहला साधन—पड़ना गुली-डंडे की पहली चोट है। फिर दूसरी चोट खभ्यास की है। पहला दर्जा पाउन दुसरा दर्जा उपाय की है। पहला दर्जा पाउन दुसरा दर्जा खप।

(खं) दूसरा साधन—अभ्यास, संयम और आकर्षण से अपने शरीरों को उड़ा ले जाओ । क्यों न हम प्रकृति के दृश्य से आकाश तक उड़ते चले जायें। प्रातःकाल के समय निद्यों, और वागों में सूर्य के सामने आ जायें कि जिससे मन उच हो। महात्माओं के सत्संग से भी मन महान् हो जाता है। यह गुलीडंडे की पहली चोट है।

(२) दूसरी चोट-"चुनाँ पुर शुद फिज़ाप्-सीना सज़ दोस्त ; ज़याले छदेरा गुम शुद सज़ ज़मीरम।"

अर्थान् मेरे हृदय की भूमि मेरे मित्र से ऐसी भरी हुई है कि मेरे दिल से अपने अस्तित्व का सान ही नष्ट हो गया। वातावरण (atmosphere) में जब भराव (saturation) आ जाता है। तब किताय की उठाकर ताज में रख हो। जब है ले जबिल की मूर्ति से आंख लड़ी। तब ज्योति में उजाति समा गई। जब इन मनोहर हृदयों से चित्र में हुनां भर आंखे। तब जोरेम्, बोरेम् का गाना हुए कर हो। यह आरेम् का गाना जजांट का संगीत अर्थान् मुक्त कर हो। यह आरेम् का गाना जजांट का संगीत अर्थान् मुक्त है। जिनको महात्माओं ने सुना है। जीर सुनान है। जीर को सनना पारे बहु सुन सबका है—

सामें सुरीते धीरम् वे हे इसमें धा रहे . बतियाँ धरिदे बाद में हे सुर मिला रहे .

(१) कहताम को न हपलो। ऐसे खहरान को रोड़े मानो । पुनुष को तुएँ में टाल देना है। इस वह



